भलाई कर बुराई से डर

कज़ाख़ लोक-कथाएँ





भलाई कर बुराई से डर

कज़ाख़ लोक-कथाएँ

सितम्बर – 2010

मूल्य : रु.180.00

शमीम फ़ैजी द्वारा पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस प्रा. लि. 5–ई रानी झांसी रोड, नई दिल्ली से प्रकाशित उन्हीं के द्वारा कैक्स्टन प्रेस 2–ई रानी झांसी रोड झंडेवालान एक्सटेंशन नई दिल्ली–110055 में मुद्रित, फोन 41540645, 9818430022

विषय-सूची

बेदाढ़ी विनोदी अलदार-कोसे के कारनामे

कज़ाख़ लोक-कथाएँ

अद्भुत बाग़

बहुत पहले दो ग़रीब दोस्त थे – असन और हसेन। असन ज़मीन के छोटे-से टुकड़े पर खेती करता था, हसेन अपना भेड़ों का छोटा-सा रेवड़ चराता था। वे इसी तरह रूखा-सूखा खाने लायक़ कमाकर गुज़र-बसर करते थे। दोनों मित्र काफ़ी पहले विधुर हो चुके थे, लेकिन असन की एक रूपवती व स्नेहमयी बेटी थी – उसकी एकमात्र दिलासा, और हसेन का एक बलवान व आज्ञाकारी बेटा था – उसकी एकमात्र आशा।

एक बार वसन्त में जब असन अपने खेत में बोवाई करने की तैयारी कर रहा था, हसेन पर विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ा: स्तेपी में महामारी फैल गयी और बेचारे की सारी भेड़ें मर गयीं।

हसेन फूट-फूटकर रोता, अपने बेटे के कंधे पर हाथ रखे अपने मित्र के पास आया और बोला:

"असन, मैं तुमसे विदा लेने आया हूँ। मेरी सारी भेड़ें मर गयीं, उनके बिना मेरा भी भूखों मरना निश्चित है।"

यह सुनते ही असन ने बूढ़े गड़रिये को सीने से लगा लिया और बोला:

"मेरे दोस्त, मेरा आधा दिल तुम्हारा है, तुम मेरा आधा खेत भी ले लो, इनकार मत करना। चिन्ता मत करो, कुदाल उठाओ और गीत गुनगुनाते हुए काम में जुट जाओ।"

उसी दिन से हसेन भी किसान हो गया।

ऐसे ही कई बरस बीत गये। एक बार हसेन जब अपना खेत जोत रहा था, अचानक उसका कुदाल किसी चीज़ से टकरा गया और अजीब-सी खनखनाहट हुई। वह जल्दी-जल्दी मिट्टी हटाने लगा और शीघ्र ही उसे सोने की मुहरों से ठसाठस भरा एक पुराना देग नज़र आ गया।

हसेन खुशी से फूला न समाता देग उठाकर अपने दोस्त की झोंपड़ी की तरफ़ दौड़ा।

"ख़ुशियां मनाओ, असन," वह भागते-भागते चिल्ला रहा था, "ख़ुशियां मनाओ! तुम्हारी क़िस्मत खुल गयी! मैंने तुम्हारी ज़मीन में से सोने की मुहरों से भरा देग निकाल लिया है। अब तुम सदा के लिए अभाव से मुक्त हो गये!"

असन ने सौजन्यपूर्ण मुस्कान से उसका स्वागत कर जवाब दिया:

"मुझे मालूम है, तुम कितने निःस्वार्थी हो, हसेन, लेकिन यह सोना तो तुम्हारा ही है, मेरा नहीं। क्योंकि यह ख़ज़ाना तुम्हें अपनी ज़मीन में मिला है।"

"मुझे मालूम है, तुम कितने उदार हो, असन," हसेन ने विरोध किया, "पर ज़मीन भेंट करके तुमने मुझे वह सब तो भेंट नहीं किया न, जो उसके गर्भ में छिपा है।"

"प्यारे दोस्त," असन बोला, "धरती में छिपी सम्पदा उसी की होनी चाहिए, जो उसे अपने पसीने से सींचता है।"

वे दोनों काफ़ी देर तक बहस करते रहे और दोनों ही ख़ज़ाने को लेने से साफ़ इनकार करते रहे। अन्त में असन बोला:

"चलो, इस मामले को ख़तम कर दें, हसेन। तुम्हारे बेटा है, और मेरे – बेटी। वे अरसे से एक दूसरे से प्रेम करते हैं। चलो, उन दोनों की शादी कर देते हैं और यह मिला हुआ सोना उन्हें दे देते हैं। ख़ुदा करे, हमारे बच्चों को ग़रीबी की याद भी न रहे।"

मित्रों ने जब अपने निर्णय के बारे में बच्चों को बताया, तो उनके आनन्द का पारा-पार न रहा। उसी दिन धूमधाम से उनकी शादी कर दी गयी। शादी की दावत रात देर गये ख़तम हुई।

अगले दिन पौ फटने ही लगी थी कि नवविवाहित अपने पिताओं के पास आ पहुँचे। उनके चेहरों पर चिन्ता छायी थी, और वे हाथों में सोने की मुहरों से भरा देग उठाये थे।

"क्या हुआ, बच्चो?" असन और हसेन घबरा उठे। "ऐसी क्या मुसीबत आ गयी, जो तुम इतने तड़के उठ गये?"

"हम आपसे यह कहने आये हैं," नवविवाहितों ने उत्तर दिया, "कि सन्तान को ऐसी कोई वस्तु अपने पास रखना शोभा नहीं देता, जिसे उनके पिताओं ने ठुकरा दिया हो। यह सोना हमारे किस काम का? हमारा प्रेम संसार के सारे ख़ज़ानों से अधिक मूल्यवान है।"

और उन्होंने देग झोंपड़ी के बीचोंबीच रख दिया।

तब उनमें फिर इस बारे में बहस छिड़ गयी कि उस ख़ज़ाने का क्या किया जाये, और यह बहस तब तक चलती रही, जब तक कि उन चारों को उस ज्ञानी से सलाह करने की बात न सूझी, जो अपनी ईमानदारी और न्यायप्रियता के लिए विख्यात था।

वे स्तेपी में कई दिनों तक चलते रहे और अन्त में ज्ञानी के तम्बू-घर के पास पहुँच गये। तंबू-घर स्तेपी के बीचोंबीच अकेला खड़ा था और काला पड़ा व फटा-पुराना था।

यात्री आज्ञा लेकर सिर नवाये तंबू-घर के भीतर गये।

ज्ञानी नमदे के फटे-पुराने टुकड़े पर बैठा था। उसकी अग़ल-बग़ल उसके चार शिष्य दो-दो करके बैठे थे।

"आप किस काम से मेरे पास आये हैं, सज्जनो?" ज्ञानी ने आगंतुकों से पूछा।

उन्होंने उसे अपनी समस्या के बारे में बताया। उनकी बातें सुनकर ज्ञानी काफ़ी देर तक मौन रहा, और फिर अपने सबसे बड़े शिष्य से पूछा:

"बताओ, अगर तुम मेरी जगह होते, तो इन लोगों के विवाद का निबटारा कैसे करते?"

ज्येष्ठ शिष्य ने उत्तर दिया:

"मैं तो इन्हें सोना बादशाह को सौंप देने को कहता, क्योंकि वह धरती की सारी सम्पदा का स्वामी है।"

ज्ञानी की भौंहें सिकुड़ गयीं। उसने दूसरे शिष्य से पूछा:

"और अगर तुम मेरी जगह होते, तो क्या फ़ैसला करते?"

दूसरे शिष्य ने उत्तर दिया:

"मैं तो सोना खुद ले लेता, क्योंकि वादी और प्रतिवादी जिस वस्तु को लेने से इनकार करते हैं, वह न्यायानुसार क़ाज़ी की हो जाती है।"

ज्ञानी की भौंहें और अधिक सिकुड़ गयीं, इसके बावजूद – उसने वैसे ही शान्तिपूर्वक तीसरे शिष्य से पूछा:

"तुम बताओ हमें, इस समस्या का समाधान तुम कैसे करते?"

"अगर यह सोना किसी का नहीं है और सभी इसे लेने से इनकार करते हैं, तो मैं इसे वापस ज़मीन में गाड़ देने का आदेश दे देता।"

ज्ञानी बिलकुल उदास हो गया और उसने अपने चौथे व सबसे छोटे शिष्य से पूछा:

"और तुम क्या कहते हो, मेरे बच्चे?"

"उस्ताद," छोटे शिष्य ने उत्तर दिया, "आप मुझ पर गुस्सा न हों और मेरे भोलेपन के लिए मुझे क्षमा कर दें, लेकिन मेरी अंतरात्मा ने निर्णय इस प्रकार किया है: मैं इस सोने से वीरान स्तेपी में एक विशाल छायादार बाग़ लगा देता, जिससे उसमें सारे थके-हारे ग़रीब लोग आराम कर सकें और उसके फलों का मज़ा ले सकें।"

यह सुनते ही ज्ञानी उठ खड़ा हुआ, उसकी आंखें डबडबा आयीं और उसने युवक को गले लगा लिया।

"जो कहते हैं: 'छोटा यदि बुद्धिमान हो, तो उसे वृद्ध की तरह सम्मान दीजिये', – उनका कहना बिलकुल ठीक है। तुम्हारा निर्णय पूर्णतः न्यायसंगत है, मेरे बच्चे! तुम यह सोना लेकर राजधानी चले जाओ, वहाँ उत्तम बीज ख़रीदो और लौटकर वैसा ही बाग़ लगाओ, जिसकी चर्चा तुमने की है। ताकि निर्धनों में तुम्हारा और इन उदार व्यक्तियों का नाम सदा अमर रहे, जिन्हें इतनी सम्पदा का बिलकुल भी लालच नहीं हुआ।"

युवक ने फ़ौरन मुहरें चमड़े के थैले में भरीं और उसे कंधे पर लादकर सफ़र पर रवाना हो गया।

काफ़ी दिनों तक स्तेपी में भटकने के बाद अन्ततः वह राजधानी में सकुशल पहुँच गया। शहर में पहुँचते ही वह फ़ौरन बाज़ार रवाना हो गया और वहाँ फलों के बीजों के व्यापारियों को खोजने लगा।

वह दोपहर तक दुकानों के आगे रखी अद्भुत वस्तुओं व चटकीले कपड़ों को देखता घूमता रहा। अचानक उसे अपने पीछे से डफली की आवाज़ और किसी की मर्मभेदी चीखें सुनाई दीं। युवक ने मुड़कर देखा : बाज़ार के चौक से आश्चर्यजनक बोझ से लदा कारवां गुज़र रहा है – ऊंटों पर माल की गांठों के बजाय पहाड़ों, जंगलों, स्तेपी तथा रेगिस्तान में रहनेवाले नाना प्रकार के जीवित पक्षी लदे थे। उनके पंजे बांधे हुए थे, मुड़े-तुड़े और छितरे हुए पंख चिथड़ों की तरह लटक रहे थे ; कारवां के ऊपर रंगबिरंगे परों के घने बादल मंडरा रहे थे। ऊंटों के हर बार क़दम रखने पर चिड़ियों के सिर उनके पहलुओं से टकरा रहे थे, और उनकी खुली चोंचों से दर्दभरी चीखें निकल रही थीं। युवक का हृदय सहानुभूति से द्रवित हो उठा। वह कुतूहलियों की भीड़ को चीरकर कारवां के सरदार के पास पहुँचा और उसने सिर नवाकर उससे नम्रतापूर्वक पूछा :

"साहब, इन सुन्दर पक्षियों को इतने भयानक कष्ट देने का हुक्म आपको किसने दिया है, और आप इन्हें लेकर कहाँ जा रहे हैं ?"

कारवां के सरदार ने उत्तर दिया :

"हम ख़ान के महल की ओर जा रहे हैं। ये चिड़ियां ख़ान के खाने के लिए हैं। ख़ान इनके बदले में हमें पाँच सौ अशरफ़ियां देगा।"

"अगर मैं आपको उससे दुगुना सोना दूँ, तो क्या आप इन चिड़ियों को छोड़ देंगे ?" युवक ने पूछा।

कारवां के सरदार ने व्यंग्यमिश्रित मुस्कान के साथ उसकी ओर दृष्टि डाली और आगे चल दिया।

तब युवक ने कंधे से थैला नीचे पटककर कारवां के सरदार के सामने उसका मुंह खोल दिया। कारवां का सरदार स्तम्भित होकर रुक गया और यह समझ में आने पर कि उसे कितना धन दिया जा रहा है, उसने ऊंटवानों को पक्षियों को मुक्त करने का आदेश दे दिया।

आज़ादी महसूस करते ही चिड़ियां एक साथ आकाश में उड़ गयीं, उनकी संख्या इतनी अधिक थी कि क्षण भर में दिन रात में बदल गया और उनके पंखों के फड़फड़ाने से धरती पर अंधड़ आ गया।

युवक काफ़ी देर तक उड़कर दूर जाते पक्षियों को देखता रहा और जब वे आंखों से ओझल हो गये, वह चमड़े का ख़ाली थैला उठाकर वापस घर रवाना हो गया। उसका दिल बाग़-बाग़ हो उठा और वह ख़ुशी से क़दम बढ़ाता, गीत गाता चलने लगा।

किन्तु ज्यों-ज्यों वह अपने घर के निकट पहुँचता गया, त्यों-त्यों कष्टप्रद चिन्ता उस पर हावी होती गयी और पश्चात्ताप की भावना उसके दिल को कचोटने लगी।

"मुझे अपनी झक में दूसरे के धन को मनमाने ढंग से ख़र्च करने का अधिकार किसने दिया? क्या ख़ुद मैंने ही ग़रीबों के लिए बाग़ लगाने का वचन नहीं दिया था? अब मैं उस्ताद को, उन नेक लोगों को क्या जवाब दूँगा, जो मेरे बीज लेकर लौटने का इन्तज़ार कर रहे हैं?", युवक सोच-सोचकर दुःखी होने लगा। शनैः शनैः निराशा उस पर पूरी तरह हावी हो गयी और वह ज़मीन पर गिरकर रोता-बिलखता अपनी मृत्यु की कामना करने लगा। आंसुओं व दुःख के कारण वह इतना शिथिल हो गया कि अपनी पलकों पर नियंत्रण खो बैठा और उसे झपकी आ गयी।

और उसे एक सपना दिखाई दिया: न जाने कहाँ से एक सुन्दर रंगबिरंगी चिड़िया आकर उसके सीने पर बैठ गयी और अनूठे स्वर में कूजने लगी:

"ओ भले युवक! अपना दुःख भूल जाओ! स्वतंत्र पक्षी तुम्हें सोना तो नहीं लौटा सकते, पर तुम्हारी कृपा का प्रतिदान वे किसी न किसी रूप में करेंगे। आंखें खोलो, जल्दी से आंखें खोलो!.."

युवक ने आंखें खोलीं और आश्चर्यचकित रह गया: समस्त विस्तृत स्तेपी में चारों ओर दुनिया भर की चिड़ियाँ चहक रही थीं।

पक्षी अपने पंजों से ज़मीन में छोटे-छोटे गड्ढे खोद रहे थे और उनमें अपनी चोंचों से बीज डालकर फिर पंखों से जल्दी-जल्दी मिट्टी भर रहे थे।

युवक किंचित् हिला तो पक्षी तत्क्षण आसमान में उड़ गये। और फिर दिन रात में बदल गया, उनके पंखों की फड़फड़ाहट से ज़मीन पर अंधड़ आ गया... जब सब शान्त हो गया, चिड़ियों के खोदे प्रत्येक गड्ढे में से एकाएक हरे अंकुर फूटने लगे, वे उत्तरोत्तर ऊँचे होते गये और थोड़ी देर बाद भव्य, दमकती पत्तियों व सुनहले फलों से सुसज्जित शाखी वृक्षों में परिवर्तित हो गये।

शायद हिन्दुस्तान के बादशाह के पास भी इतना घना और लम्बा-चौड़ा बाग़ नहीं होगा। तृण-मणि सरीखी छाल से ढके सेब के भव्य वृक्षों को गिन पाना असम्भव था। सुडौल तनों के बीच-बीच में अंगूर के बड़े-बड़े गुच्छोंवाली अंगूर-वाटिकाएं, ख़ूबानी के झुरमुट तथा घनी घास व रंगबिरंगे फूलों से भरे हरे-भरे मैदान दिखाई दे रहे थे। सर्वत्र कलकल करते बहते शीतल जल के नाले थे, जिनके तलों में हीरे-जवाहरात जड़े थे। और वृक्षों की डालों पर युवक को सपने में दिखाई देनेवाली चिड़िया जैसी सुन्दर और मुखर चिड़ियां निरन्तर फुदक रही थीं, कलरव कर रही थीं।

युवक ने विस्मय से अग़ल-बग़ल देखा, किन्तु उसे किसी तरह विश्वास ही नहीं आ रहा था कि वह बाग़ को सपने में नहीं देख रहा है। उसने इसकी जांच करने के लिए ज़ोर से आवाज़ दी और उसे अपने स्वर की कई गुना प्रवर्द्धित प्रतिध्वनि स्पष्ट सुनाई दी। दृश्य लुप्त नहीं हुआ। तब वह ख़ुशी से विह्वल हुआ ज्ञानी के तम्बू-घर की ओर दौड़ पड़ा।

कुछ ही समय में अद्भुत बाग़ की ख़बर सारी स्तेपी में फैल गयी। सबसे पहले "श्वेत अस्थि"* घुड़सवार अपने तेज़ क़दमबाज़ों पर बाग़ की तरफ़ सरपट लपके। लेकिन वन के पास पहुँचते ही उनके आगे सात ताले लगे लोहे के फाटकोंवाली ऊँची दीवार खड़ी हो गयी। तब वे अपनी-अपनी नक़्क़ाशीदार काठियों पर खड़े होकर दीवार के ऊपर से सुनहले सेब तोड़ने के लिए हाथ बढ़ाने लगे। किन्तु उन में से जिसने भी फलों को स्पर्श किया, अचानक अशक्त हो ज़मीन पर गिरकर ढेर हो गया। यह देखते ही घुड़सवार घोड़े मोड़कर सरपट अपने-अपने गांव भाग गये।

उनके जाने के बाद हर कोने से निर्धनों की भीड़ आने लगी। उनके निकट आते ही लोहे के फाटकों पर लगे ताले गिर पड़े और वे पूरे खुल गये। बाग़ पुरुषों, नारियों, वृद्धों व बालकों से भर गया। वे चटकीले फूलों पर चलते रहे, लेकिन फूल नहीं मुरझाये; वे निर्मल जल के नालों का पानी पीते रहे, पर पानी गंदला नहीं हुआ; वे वृक्षों से फल तोड़ते रहे, पर फल कम ही नहीं हो रहे थे। बाग़ में दिन भर डफलियों की आवाज़ें, हंसी-मज़ाक़ गूंजते रहे।

और जब रात आयी और धरती पर अंधेरा छा गया, सेबों से मन्द प्रकाश फूटने लगा और पक्षी समवेत स्वर में शान्त व मधुर गीत गाने लगे। तब ग़रीब लोग वृक्षों तले सुगंधित घास पर लेट गये और प्रगाढ़ निद्रा की गोद में लीन हो गये। इतना सन्तोष और सुख उन्हें अपने जीवन में पहली बार मिला था।

---

* श्वेत अस्थि (अक-सुएक) – कज़ाख़ धनी सामन्त।

रूपवती अयस्लू

एक गांव में तीन सगे भाई रहते थे। वे इतने बलवान और चतुर थे कि उनके सारे समवयस्क उन पर गर्व करते थे, सारी बालाएँ उन्हें प्रशंसा की दृष्टि से देखती थीं, सारे बुजुर्ग उनकी तारीफ़ करते थे। भाई बचपन से ही एक दूसरे को बहुत प्यार करते थे: न वे कभी एक दूसरे से दूर जाते थे, न आपस में झगड़ते थे और न ही किसी बारे में बहस करते थे।

एक दिन तीनों भाई उक़ाब लेकर स्तेपी में शिकार करने गये।

उन्हें काफ़ी देर तक न कोई पशु नज़र आया, न ही कोई पक्षी। वे घोड़ों को गांव की ओर मोड़ने ही वाले थे कि अचानक देखा: स्तेपी में एक आग-सी लाल लोमड़ी ज़मीन से सटी भागी जा रही है। ऐसे जानवर की खाल के तो बहुत-से पैसे मिलेंगे! बड़े भाई ने उक़ाब को ऊपर उछाल दिया, उक़ाब पंख फैलाकर आकाश में ऊँचाई पर पहुँच गया और वहाँ से ग़ोता मारकर बिजली की तरह लोमड़ी पर टूट पड़ा।

बांके नौजवान घोड़ों को सरपट दौड़ाते, हवा से बातें करते उस स्थान पर जा पहुँचे, जहाँ उक़ाब उतरा था और देखकर आश्चर्यचकित रह गये: लोमड़ी वहाँ नहीं थी, जैसे वह कभी थी ही नहीं, लेकिन शिला-पट्ट पर पक्षी बैठा है, और वह शिला-पट्ट भी साधारण नहीं है: किसी ने उस पर अपनी चमत्कारी छेनी से किसी अद्वितीय रूपवती का चित्र तराश रखा है। शिला-पट्ट के किनारे-किनारे बेलबूटेदार अक्षरों में आलेख खुदा हुआ था: "जो मेरा चित्र खोजकर मेरे पास लेकर आयेगा, वही मेरा मालिक और पति हो जाएगा।"

बांके नौजवान अपनी रहस्यमयी खोज के सामने मौन व निश्चल खड़े रहे और उनमें से हरेक के हृदय में उस युवती के प्रति प्रेम का भाव निरन्तर बढ़ता जा रहा था, जो शिला-पट्ट से उन्हें मानो जीती-जागती देख रही थी।

बड़े भाई ने कहा:

"अब हम क्या करें? यह अद्भुत शिला-पट्ट तो हम तीनों ने साथ ही ढूंढ़ा है।"

मझला भाई बोला :

"हम चिट्ठी निकाल लेते हैं : रूपवती के पास कौन जाये, इसका फ़ैसला हमारी क़िस्मत ही करे।"

"भाइयो, हमने शिला-पट्ट साथ ही ढूंढ़ा है," छोटे भाई ने कहा, "इसलिए चलो हम साथ ही रूपवती को ढूंढ़ने चलें। और यदि हमें उसे अपनी आँखों से देखने का सौभाग्य मिला, तो फिर उसे ही हम तीनों में से किसी को अपना पति चुन लेने देंगे।"

तीनों ने यही फ़ैसला किया। उन्होंने शिला-पट्ट उठाया, किन्तु उसके नीचे एक और अद्भुत वस्तु मिली : एक चमड़े के थैले में बहुमूल्य ख़ज़ाना था – तीन हज़ार पुरानी अशरफ़ियां। उन्होंने धन बराबर-बराबर बांट लिया और बिना अपने गांव में गये दुलहन की खोज में निकल पड़े।

उन्होंने स्तेपी का कोना-कोना छान मारा, उनकी काठियां घिस गयीं, घोड़ों के साज़ चिथड़े-चिथड़े हो गये, घोड़े थककर मर गये, किन्तु उन्हें वह बाला कहीं नहीं मिली, जिसका चित्र शिला-पट्ट पर उकेरा हुआ था। अन्त में यात्री ख़ान की राजधानी में पहुँचे। वहाँ उन्हें शहर के छोर पर एक वृद्धा मिली। युवकों ने उसे शिला-पट्ट दिखाकर पूछा कि क्या वह जानती है कि सुन्दरी, जिसका चित्र पत्थर पर अंकित है, किस देश में रहती है।

"मुझे क्यों न पता होगा," स्त्री ने उत्तर दिया। "यह हमारे ख़ान की बेटी है। इसका नाम अयस्लू है। दुनिया में उसके जैसे रूप और गुणोंवाली और कोई लड़की नहीं है।"

लम्बी राह की थकान और कठिनाइयों को भुलाकर तीनों भाई तुरन्त ख़ान के महल की ओर रवाना हो गये। पहरेदारों ने शिला-पट्ट पर लिखा आलेख पढ़कर उन्हें तुरन्त ख़ान की बेटी के कक्ष में जाने दिया।

जीती-जागती आयस्लू को देखकर युवक किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो गये : उसका नाम चन्द्रमा पर ही रखा गया था और ख़ुद वह सूरज की भांति द्युतिमान थी।*

"आप कौन हैं?" अयस्लू ने पूछा। "आपका किस काम से मेरे पास आना हुआ है?"

बड़े भाई ने सबकी ओर से उत्तर दिया :

"मालकिन, स्तेपी में शिकार करते समय हमें एक शिला-पट्ट मिला, जिस पर आपका चित्र अंकित था और हम आधी दुनिया पार करके उसे आपके पास लाये हैं। अपना वादा पूरा कीजिये, अयस्लू! हममें से किसी एक को अपना पति चुन लीजिये।"

सुन्दरी बहुमूल्य क़ालीन से उठी और भाइयों के पास आकर बोली :

"बहादुर नौजवानो, मैं अपने वादे से मुकरती नहीं हूँ। पर आप तीन हैं और मेरी नज़रों में तीनों बराबर हैं, लेकिन आप में से किस को चुनना न्यायपूर्ण होगा? आप में से किसे सर्वश्रेष्ठ मानूँ? मैं आपके प्रेम की परीक्षा लेना चाहती हूँ। मैं आप में से उसी

---

* कज़ाख़ भाषा में "अय" का अर्थ – चन्द्रमा होता है और "स्लू" का – रूपवती।

को अपना पति चुनूंगी, जो एक महीने की अवधि में मुझे दुर्लभ से दुर्लभ उपहार लाकर देगा? क्या आपको यह शर्त मंजूर है?"

भाइयों ने उसे झुककर प्रणाम किया और यह जाने बिना फिर यात्रा पर निकल पड़े कि खानज़ादी को उनमें से सबसे छोटे से प्रगाढ़ प्रेम हो गया है। उसका प्रेम इतना महान था कि उस दिन और उस क्षण से वह निस्तेज होने लगी, सूखने लगी, मानो उसे कोई गम्भीर रोग लग गया हो, कुछ दिनों बाद वह खाट से लग गयी और उसने अपने सगे पिता तक को पहचानना बंद कर दिया। खान निराशा में डूब गया। उसने अपनी बेटी का इलाज करनेवाले को एक हज़ार ऊँट देने का लालच देकर सारी दुनिया से हकीमों और ओझों को बुलवा लिया। महल हकीमों और ओझों से पूरा भर गया, किन्तु खान की रूपवती बेटी का स्वास्थ्य दिन-प्रतिदिन बिगड़ता ही गया।

उस समय तीनों भाई राजधानी से बहुत दूर जा चुके थे। वे एक ही रास्ते पर काफ़ी दिनों तक चलते रहे, फिर उनके रास्ते अलग हो गये और बांके नौजवान तीस दिन बाद उसी स्थान पर मिलने का वादा करके भिन्न-भिन्न दिशाओं में चल पड़े।

बड़ा भाई बायीं ओर मुड़ा और कुछ समय बाद एक बड़े शहर में पहुँचा। सभी दुकानों में झांकने के बाद उसे एक दुकान में सोने के चौखटेवाला अतिसुन्दर कारीगरी का एक दर्पण दिखाई दे गया।

"यह शीशा कितने का है?" युवक ने पूछा।

"शीशा सौ अशरफ़ियों का है, पर इसका रहस्य – पांच सौ का।"

"आखिर इसका रहस्य क्या है?"

"यह शीशा ऐसा है कि अगर भोर में इसमें देखा जाये, तो दुनिया के सारे देश, शहर, गांव और चरागाह नज़र आ जायेंगे।"

"ऐसी ही चीज़ की तो ज़रूरत है मुझे!" युवक ने मन में कहा। उसने बिना सोचे-विचारे रक़म गिन दी और शीशे को अपनी सीने में छिपाकर पूर्वनिश्चित स्थान की ओर चल दिया।

मझला भाई बीच के रास्ते से सीधा आगे बढ़ता गया। वह भी कुछ समय बाद एक अनजाने नगर में पहुँचा। बाज़ार में, जहाँ विदेशी व्यापारी माल बेच रहे थे, उसकी नज़र एक चमकीले रंगों और विचित्र बेलबूटोंवाले क़ालीन पर पड़ गयी।

"यह क़ालीन कितने का है?" उसने दुकानदार से पूछा।

"पांच सौ अशरफ़ियों का, और इसका रहस्य भी इतने का ही है।"

"तुम कौन-से रहस्य की बात कर रहे हो?"

"अरे, यह जादूई क़ालीन है! यह पलक झपकते आदमी को दुनिया में कहीं भी पहुँचा सकता है।"

युवक ने विक्रेता को अपने सारे पैसे दे दिये और क़ालीन को लपेटकर ख़ुशी-ख़ुशी शहर से रवाना हो गया।

छोटा भाई तिराहे पर बायीं ओर मुड़ा। वह भी उस रास्ते से एक विदेशी नगर में पहुँच गया। वह काफ़ी देर तक गलियों में भटकता रहा, सारी दुकानों में झांकता रहा, पर उसे अपनी प्रियतमा के योग्य वस्तु कहीं नहीं मिली। लेकिन जब वह पूर्णतः आशा छोड़ चुका था, दुःखी हो गया था, तभी उसकी नज़र एक कुरूप बूढ़े की गन्दी-सी छोटी दुकान में एक चमचमाती चीज़ पर पड़ गयी।

"यह क्या है?" नौजवान ने पूछा।

दुकानदार ने उसे हीरे-जवाहरात जड़ी सोने की कंघी दी। युवक की आंखें चमक उठीं।

"कंघी की क्या क़ीमत चाहते हो?"

दुकानदार फटी आवाज़ में हंसा और द्वेषपूर्ण स्वर मे बोला:

"चलो, यहाँ से दफ़ा हो जाओ! ऐसी चीज़ ख़रीदना तुम्हारे बूते से बाहर है! यह कंघी एक हज़ार अशरफ़ियों की है और दो हज़ार अशरफ़ियां है इसके रहस्य की क़ीमत।"

"आख़िर इस कंघी का ऐसा क्या राज़ है, जो तुम उसकी इतनी क़ीमत लगा रहे हो?"

बूढ़े ने उत्तर दिया:

"अगर इस कंघी से किसी बीमार के बालों में कंघी की जाये, तो वह ठीक हो जायेगा, और अगर मुर्दे के बालों में कंघी की जाये, तो वह जी उठेगा।"

"मेरे पास सिर्फ़ एक हज़ार अशरफ़ियां हैं," युवक ने दुःख भरे स्वर में कहा, "मुझ पर दया करो, कंघी मुझे इतने पैसों में बेच दो, क्योंकि मेरी क़िस्मत इसी से खुलेगी।"

"ठीक है," बूढ़ा मुंह बनाकर अस्पष्ट स्वर में बड़बड़ाया, "कंघी एक हज़ार अशरफ़ियों में ले लो, अगर इसके साथ अपने गोश्त का एक टुकड़ा भी देने को तैयार हो।"

अब युवक समझ गया कि उसके सामने सौदागर नहीं, बल्कि एक दुष्ट नरभक्षी है, लेकिन वह न हिचकिचाया और न ही पीछे हटा। उसने चुपचाप अपनी जेब मे सारी रक़म उलट दी और फिर मोज़े में से छुरा निकाल, अपने सीने से मांस का टुकड़ा काट, डरावे को रक्तरंजित मूल्य चुका दिया। कंघी उसकी अपनी हो गयी।

ठीक तीस दिन बाद भाई फिर तिराहे पर मिल गये। उन्होंने एक दूसरे को कसकर गले लगा लिया, एक दूसरे की तबीयत पूछी और अपनी-अपनी ख़रीदी हुई वस्तुओं की तारीफ़ करने लगे।

"आख़िर किसका उपहार अयस्लू को पसंद आयेगा?" तीनों मन में सोच रहे थे। "दर्पण, क़ालीन और कंघी तीनों ही एक से एक बढ़कर हैं।"

रात बातों में बीत गयी, सुबह जब शुक्र तारा निकला और पूर्व में प्रभाव की लालिमा छा गयी, भाइयों की यह जानने की इच्छा जाग उठी कि दुनिया में क्या हो रहा है, और उन्होंने शीशे में देखा।



सारी दुनिया उनकी आंखों के आगे घूम गयी और ख़ान की राजधानी भी दिखाई दी। लेकिन यह क्या? महल के आस-पास के रास्ते शोकमग्न भीड़ से भरे थे। वहाँ किसी को दफ़नाया जा रहा था। मृत को भव्य ताबूत में कंधों पर उठाकर ले जाया जा रहा था, और उसके पीछे-पीछे आंसू बहाता और दु:ख से दोहरा हुआ ख़ान चल रहा था। तीनों भाई सब समझकर सिहर उठे: रूपवती अयस्लू मर गयी।

मझले भाई ने तुरन्त अपना जादूई क़ालीन बिछा दिया, और तीनों नौजवान एक दूसरे को पकड़कर उस पर बैठ गये। क़ालीन बादलों में उड़ चला और पलक झपकते ख़ानज़ादी के खुले मज़ार के पास जा उतरा। भीड़ एक ओर हट गयी। ख़ान ने डबडबायी आंखों से आकाश से अचानक उतरे तीन नौजवानों की ओर देखा, लेकिन समझ न सका कि क्या हो रहा है। उधर छोटा भाई मृत सुन्दरी के पास लपककर पहुँचा और सोने की कंघी उसके बालों में फेरने लगा।

अयस्लू ने एक ठण्डी सांस ली, हड़बड़ाकर उठ खड़ी हुई। वह पहले जैसी ही सुन्दर नहीं, बल्कि उससे भी कहीं ज़्यादा सुन्दर हो गयी थी। ख़ान ने बेटी को सीने से लगा लिया। लोग ख़ुशी के मारे चिल्ला उठे। सब ख़ुशियां मनाते, झूमते-गाते महल की ओर रवाना हो गये।

ख़ान ने उसी दिन एक शानदार दावत दी और उसमें राजधानी के सारे वासियों को अपने प्रिय अतिथियों की तरह आने का निमंत्रण दिया। बाज़ार में जूठन खाकर गुज़ारा करनेवाले बूढ़े फ़क़ीर को भी निमंत्रित किया गया। तीनों भाई सम्मानित स्थान पर बैठे थे और अयस्लू स्वयं ही उन्हें खाना व क़िमिज़* परोस रही थी। तभी बांके नौजवानों ने फिर उससे अपना निर्णय बताने का अनुरोध किया कि वह उनमें से किसे अपना पति चुनना चाहती है।

अयस्लू दु:खी हो उठी, उसकी बरौनियों पर आंसू की बूंद ढुलक आयी।

"मैं आप में से एक से प्रेम करती हूँ, पर परीक्षा के बाद भी मेरी नज़रों में आप सभी बराबर हैं, क्योंकि आपमें से हरेक ने मुझे अद्वितीय उपहार लाकर दिया है।"

उसने अपने पिता से सलाह और नसीहत मांगी। ख़ान कुछ सोचकर बोला:

"अगर शीशा न होता, जिसे बड़ा भाई खोजकर लाया है, तो आपको, बांके नौजवानो, अयस्लू की मौत का पता नहीं चल पाता; मझले भाई के ख़रीदे क़ालीन के बिना आप जनाज़े में समय पर नहीं पहुँच पाते; और छोटे भाई की कंघी के बिना आप मेरी बेटी को जिला नहीं पाते। मैं सहर्ष आपको अपना आधा धन देने को तैयार हूँ, पर अयस्लू की शादी किससे करूँ, यह फ़ैसला करना मेरे बस का नहीं है।"

---

* क़िमिज़ – घोड़ी के ख़मीर उठे दूध से बना पेय।

भीड़ में से अचानक बूढ़े फ़क़ीर की आवाज़ आयी :

"आलीजाह, इजाज़त हो, तो मैं कुछ कहूँ ?"

ख़ान उस दिन ख़ुश और कृपालु था।

"कहो," उसने उसे अनुमति दे दी।

"सारी परिस्थितियों का मूल्यांकन करके मैं भाइयों का फ़ैसला इस प्रकार करता," फ़क़ीर ने कहा. "अयस्लू उसी की हो जाए, जिसने अपने उपहार की सबसे महंगी क़ीमत चुकाई हो।"

ख़ान ने स्वीकृति में सिर हिला दिया।

"ऐसा ही हो !"

"मैंने शीशे के लिए छः सौ अशर्फ़ियां चुकाई," बड़े भाई ने कहा।

"मैंने क़ालीन के लिए एक हज़ार अशरफ़ियां चुकाई," मझले भाई ने कहा।

"मैंने भी कंघी के लिए एक हज़ार अशरफ़ियां चुकाईं और ..."

छोटा भाई बोलता-बोलता चुप हो गया और उसने सिर झुका लिया।

"चुप मत रहो !" ख़ान चीख़ पड़ा। "सच-सच बताओ !"

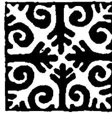
तब युवक ने चोगे के पल्ले खोल दिये और सबने उसके सीने का गहरा घाव देख लिया।

अयस्लू ने चीख मारकर अपना चेहरा हाथों से ढक लिया। ख़ान ने वीर को गले लगाकर कहा :

"मैं अपनी बेटी की शादी तुम्हारे साथ करूँगा ! तुम ही मेरे दामाद और उत्तराधिकारी हो जाओगे।"

और मेहमानों की ओर पलटकर उसने सबको सुनाकर एलान किया कि वह दोनों बड़े भाइयों को अपने वज़ीर बना रहा है और बूढ़े फ़क़ीर को, जिसने बुद्धिमत्तापूर्ण सलाह दी, अपना बड़ा क़ाज़ी।

इसके बाद दावत में और जान आ गयी। वह दावत तीस दिन तक चली, चालीस दिन उसकी याद में दावतें होती रहीं और उसे लोग आज तक नहीं भूले हैं।



ख़ान सुलेमान और बायगीज़

ख़ान सुलेमान के महल यों तो बहुमूल्य वस्तुओं से भरे पड़े थे, पर उस के लिए सोने की एक अंगूठी सबसे ज़्यादा मूल्यवान थी, जिसे वह कभी उंगली से नहीं उतारता था। वह अंगूठी जादूई थी: जो भी उस अंगूठी को पहनता, वही पशु-पक्षियों तथा पौधों की भाषा समझने लगता और सारे प्राणी उसके अधीन हो जाते।

एक बार शिकार करते समय सुलेमान को चेहरा सोते के शीतल जल से ताज़ा करने की इच्छा हुई। लेकिन जब वह अंजलि से पानी पीने लगा, उसकी प्रिय अंगूठी उंगली से खिसक गयी और तेज़ी से तल की ओर जाने लगी। ख़ान तल से मूल्यवान अंगूठी निकालने के लिए सोते में कूदने ही वाला था कि पानी में एक भीमकाय मच्छ चमका और वह अंगूठी निगलकर, पूंछ फटकारकर भंवर में ग़ोता लगा गया।

सुलेमान अंगूठी खो बैठने से बहुत दु:खी हुआ सोते के किनारे-किनारे चलने लगा। चलता रहा, चलता रहा, अचानक उसने ख़ुद को एक अकेली झोंपड़ी के सामने पाया, जिसके आगे मत्स्य-जाल सूख रहे थे।

रात होने लगी थी। ख़ान झोंपड़ी में गया। देहली लांघने पर उसे किसी की नकसुरी आवाज़ सुनाई दी:

"अहा, हमारी क़िस्मत खुल गयी! अब भर-पेट खाना खायेंगे!"

ख़ान को काटो तो ख़ून नहीं: झोंपड़ी के बीचोंबीच रक्तपिपासु जालमाउइज़-केम्पीर * खड़ी थी और अपने बड़े-बड़े नाख़ूनोंवाले हाथ उसकी ओर बढ़ा रही थी। वह आत्म-रक्षा के लिए शिकारी छुरा निकालने ही लगा था कि तभी दूसरी आवाज़ सुनाई दी – बुलबुल के कूजन जैसी मधुर।

---

* जालमाउइज़-केम्पीर – चुड़ैल बुढ़िया।

"आगंतुक को मत छुओ, मां! देखो, यह कितना सुन्दर और राजसी है! शायद खुद खान सुलेमान भी इससे ज्यादा सुन्दर नहीं होगा।"

खान आवाज़ की ओर मुड़ा और उसके दिल का कंवल खिल उठा: चूल्हे के आगे क़ालीन पर इतनी रूपसी कन्या बैठी थी कि उसकी ख़ातिर कोई भी मौत से जूझने को तैयार हो जाता।

जालमाउइज़-केम्पीर बोली:

"तुम सौभाग्यशाली हो, अजनबी, तुम मेरी बेटी बुलुक़ को पसन्द आ गये। मुझे तुम पर रहम आ गया। लेकिन यहाँ से जल्दी से जल्दी चले जाओ। मेरा बुढ़ऊ बस आने ही वाला है। वह आ गया तो तुम्हें कोई नहीं बचा सकेगा।"

सुलेमान ने उत्तर दिया:

"जब तक ख़ूबसूरत बुलुक़ मेरे साथ हाथ में हाथ डाले नहीं जायेगी, मैं यहाँ से टस से मस भी नहीं होऊँगा।"

तभी सोते में उफान आ गया, धरती गड़गड़ा उठी और झोंपड़ी कांप उठी। लगा जैसे तूफ़ान आ गया हो। जालमाउइज़-केम्पीर ने जल्दी-जल्दी सारे कोने छान मारे और सन्दूक खोलकर सुलेमान को बुलाया:

"सन्दूक में घुस जा, पागल! देर मत कर!"

सन्दूक का ढकना बन्द होते ही झोंपड़ी में बूढ़ा नरभक्षी–देव झूमता हुआ घुस आया।

"आदमी की गंध आ रही है!" वह अपना दैत्याकार गला फाड़कर दहाड़ा।

उसकी पत्नी उसे गालियां देने लगी:

"तेरा दिमाग़ बिलकुल खराब हो गया, बेवक़ूफ़ बुड्ढे! यह तो उस नौजवान की बू है, जिसे हमने कल खाया था। और आज तो हमारे यहाँ कोई आया ही नहीं।"

रात बीत गयी। पौ फटते ही देव मछली पकड़ने सोते पर चला गया और शीघ्र ही ढेर सारी मछलियां लेकर लौट आया।

"नाश्ता तैयार करो," उसने पत्नी और पुत्री को आदेश दिया, "मैं फिर शिकार पर जाऊँगा। शायद दिन के खाने के लिए कोई बांका नौजवान या उसका घोड़ा पकड़ में आ जाये।"

वह चला गया। जालमाउइज़-केम्पीर ने सुलेमान को सन्दूक से बाहर निकलने दिया और उसे दरवाज़े की ओर धकेलने लगी।

"दूर हो जा मेरी आंखों से, बिनबुलाये मेहमान! तेरे मारे मेरी जान पर आ बनी है!"

किन्तु सुलेमान टस से मस नहीं हुआ और केवल सुन्दरी बुलुक़ को एकटक देखता रहा।

पिता की आज्ञानुसार युवती ताजा मछली साफ़ कर रही थी। उसने बड़ा मच्छ काटा

और अचानक चीख मारकर उसके पेट में से सोने की अंगूठी निकाल ली। अंगूठी उसके हाथ से छूटकर सीधे सुलेमान के पैरों के पास आ गिरी। ख़ान ने उसे उठाकर उंगली में पहन लिया। और वह तत्क्षण पूर्ववत् बलवान और बुद्धिमान हो गया।

"मैं ख़ान सुलेमान हूँ!" उसने ख़ुश होकर कहा। "तुम बुलुक़, मेरी बेगम और दुनिया की मलिका बनना चाहती हो?"

और बुलुक़ मलिका बन गयी। अब वह रेशमी गद्दों पर सोने लगी, सोने-चांदी के थालों में खाने लगी और मख़मल व ज़री के कपड़े पहनने लगी।

ख़ान ने उसे किसी चीज़ की कमी नहीं महसूस होने दी और सारे राज-काज भूलकर केवल पत्नी को किसी तरह ख़ुश रखने की ही सोचने लगा।

एक बार ख़ान ने रूपवती से कहा:

"तुम चाहो, बुलुक़, तो मैं तुम्हारे लिए सोने और हीरे-जवाहरात का महल बना सकता हूँ।"

"मुझे सोने और हीरे-जवाहरात का महल नहीं चाहिए," बुलुक़ ने नख़रीली अदा के साथ आंखें नचाते हुए जवाब दिया। "अगर तुम मुझे प्यार करते हो, मेरे मालिक, तो मेरे लिए चिड़ियों की हड्डियों का महल बना दो।"

सर्वशक्तिमान सुलेमान ने दुनिया भर की चिड़ियों को तुरंत अपने सामने हाज़िर होने और मलिका की इच्छानुसार नम्रतापूर्वक मृत्यु दण्ड के लिए तत्पर रहने के लिए आवाज़ दी।

बिना कूजते, बिना चहचहाते अभागे पक्षियों के झुण्ड के झुण्ड अपने भाग्य के निर्णय की विनम्रतापूर्वक प्रतीक्षा करते सुलेमान के महल में उड़कर आये: चमत्कारी अंगूठी में ऐसी शक्ति थी।

बुलुक़ ने उनकी गिनती करके दु:खी स्वर में ख़ान से कहा:

"एक चिड़िया ने आपकी अवज्ञा की है, आलीजाह, और आपकी आज्ञानुसार यहाँ उपस्थित नहीं हुई है। उसका नाम है – बायगीज़*।"

सुलेमान आग-बबूला हो उठा। उसने काले कौवे को विश्वासघाती बायगीज़ को ढूँढ़कर उसके पास पहुँचाने का आदेश दिया।

कौवा तीन दिन तक उड़ते रहने के बाद ख़ाली हाथ लौट आया, उसे कहीं भी दोषी पक्षी का सुराग़ न मिल सका। तब ख़ान ने वेगवान् बाज़ को उसे ढूँढ़ने भेजा।

बाज़ ने बायगीज़ को पहाड़ पर एक चट्टान के नीचे देख लिया। अवज्ञाकारी चिड़िया चट्टान के नीचे दुबकी हुई थी और उसे न चोंच से बाहर खींचा जा सकता था, न ही पंजों से।

---

* बायगीज़ – छोटी-सी चिड़िया।

बाज़ उससे बोला:
"आदरणीया बायगीज़, आप क्या कर रही हैं?"
"सोच रही हूँ।"
"क्या? क्या कहा? मैंने सुना नहीं।"
बायगीज़ ने चट्टान के नीचे से गरदन बाहर निकाली, और बाज़ उसे पकड़, पंजों में दबोचकर ख़ान के पास ले गया।
बायगीज़ गा उठी:

बनी जान पर, आई मुसीबत दिल पर मेरे
दुश्मन के पंजे हैं जाने कितने नुकीले!

बाज़ ने चिड़िया को सुलेमान के क़दमों में पटक दिया, लेकिन बायगीज़ ख़ान के सामने भी अपना गीत गाती रही:

पंख न हों तो हूँ मैं गौरय्या के बराबर
पोर से उंगली के भी छोटा है मेरा सर
मांस भी मुझ में, रक्त भी मुझ में बस रत्ती भर
रहेगी भूखी छोटी चील भी मुझ को खाकर।

सुलेमान ने ग़ुस्से में उस पर पैर रख दिया:
"बायग़ीज़, तू क्यों मेरे पहली बार बुलाते ही हाज़िर नहीं हुई?"
बायगीज़ ने उत्तर दिया:
"मैं सोच रही थी।"
"किस चीज़ के बारे में सोच रही थी?"
"मैं सोच रही थी कि धरती पर पहाड़ ज़्यादा हैं या घाटियाँ।
"तू किस निर्णय पर पहुँची?"
"पहाड़ ज़्यादा हैं, अगर उन ढेरों को भी पहाड़ मान लिया जाये, जो स्तेपी में छछूंदरों ने लगाये हैं।"
"और किस चीज़ के बारे में सोच रही थी?"
"मैं यह भी सोच रही थी कि जिन्दा ज़्यादा हैं या मरे हुए।"
"तुम्हारे ख़याल से कौन ज़्यादा हैं?"
"मरे हुए ज्यादा हैं, अगर सोये हुए लोगों को भी मृत मान लिया जाये।"
"और क्या सोच रही थी?"
"और सोच रही थी कि पुरुष अधिक हैं या स्त्रियां।"

"फिर किस निर्णय पर पहुँची?"

"स्त्रियां, आलीजाह, पुरुषों से काफ़ी ज़्यादा हैं, अगर उनमें उन भीरुओं को भी शामिल कर लिया जाये, जो अपना बौद्धिक संतुलन खोकर स्त्री की हर सनक पूरी करने को तत्पर हो जाते हैं।"

बायगीज़ के इतना कहते ही सुलेमान ने हाथ से आंखें ढक लीं और शर्म से लाल हो उठा: ख़ान नन्ही-सी चिड़िया का इशारा समझ गया। उसने तुरन्त अपनी सपक्ष प्रजा को अपने-अपने घोंसलों में लौट जाने को कहा, और वे कूजते, चहचहांते उड़ चले।

इस प्रकार पक्षियों की हड्डियों का महल नहीं बन पाया। और पक्षियों ने उन्हें अकाल मृत्यु से बचाने के लिए बुद्धिमान बायगीज़ को सदा के लिए अपना क़ाज़ी चुन लिया था।



सपना, जो सच हो गया

सरसेम्बाय अनाथ था। न उसका पिता ज़िन्दा रहा था, न ही माता। उसका जीवन दुःख भरा था। उसने एक बाय* की भेड़ें चराने की नौकरी कर ली। बाय ने उसे शरद् ऋतु में एक लंगड़ी भेड़ देने का प्रलोभन दिया। नन्हा गड़रिया इस पर भी ख़ुश था। वह भेड़ें चराता रहा, बाय की जूठन खाता रहा और शरद् ऋतु के आने की प्रतीक्षा करता रहा।

"पतझड़ आते ही," वह सोचता रहता, "मुझे लंगड़ी भेड़ मिल जायेगी, तब मुझे भी गोश्त का स्वाद चखने को मिल जायेगा..."

एक बार सरसेम्बाय भेड़ों को एक नयी चरागाह में हांककर ले जा रहा था। सहसा झाड़ियों में से एक भेड़िया निकल आया और बोला:

"भेड़ दो! नहीं दोगे, तो एक की जगह दस को फाड़ डालूँगा।"

"मैं तुझे भेड़ कैसे दे सकता हूँ, भेड़िये? क्योंकि यह रेवड़ मेरा नहीं है। ऐसे काम के लिए बाय मुझे जान से मार डालेगा।"

भेड़िया सोच में पड़ गया और फिर बोला:

"मुझे बहुत तेज़ भूख लगी है। तुम बाय के पास जाकर उससे मेरे लिए एक भेड़ मांगो।"

सरसेम्बाय ने मालिक के पास जाकर उसे पूरा क़िस्सा सुनाया। बाय ने हिसाब लगाया: दस भेड़ें एक से ज़्यादा होती हैं; एक भेड़ दस से सस्ती पड़ेगी। उसने गड़रिये से कहा:

"भेड़िये को एक भेड़ ले लेने दो, लेकिन बिना चुने। उसकी आंखों पर रूमाल बांध देना। जिसे वह दबोच ले, वही उसी की हो।"

सरसेम्बाय ने जैसी आज्ञा मालिक ने दी, वैसा ही किया।

---

* बाय – ज़मींदार।

भेड़िया आंखों पर रूमाल बांधे रेवड़ के बीच घुस गया और उसने एक भेड़ का गला फाड़ दिया। लेकिन ठीक ही कहते हैं: "करम रेख न मिटै, करै कोई लाखों चतुराई।" ऐसा ही हुआ। भेड़िये ने संयोगवश उसी लंगड़ी भेड़ को फाड़ डाला, जिसे मालिक ने सरसेम्बाय को देने का वादा किया था। सरसेम्बाय फूट-फूटकर रोने लगा। भेड़िये को उस पर दया आ गयी।

"अब कुछ नहीं किया जा सकता, गड़रिये," वह बोला। "शायद तुम्हारे भाग्य में ऐसा ही बदा था। मैं तुम्हारे लिए भेड़ की खाल छोड़ रहा हूँ। शायद तुम उसे किसी को अच्छी क़ीमत पर बेच दो।"

सरसेम्बाय ने भेड़ की खाल उठा ली और उसे कंधे पर आड़ी डालकर रेवड़ को आगे हांक ले चला।

सामने से भूरे क़दमबाज़ पर बाय आ रहा था। वह रकाबों पर पैर जमाये खड़ा होकर भेड़ों व मेढ़ों को गिनने लगा। उसने देखा – सारा रेवड़ सही-सलामत है, बस सरसेम्बाय की लंगड़ी भेड़ ग़ायब है। तभी सरसेम्बाय भी आ पहुँचा। वह रेवड़ के पीछे-पीछे हाथ में लाठी थामे चल रहा था और उसकी आंखों से आंसू बह रहे थे।

बाय इतने ज़ोर से ठहाका मारकर हंस पड़ा कि उसके तले क़दमबाज़ भी लड़खड़ा गया।

"वाह, कैसा गड़रिया है मेरा! ख़ूब संभाल की अपनी भेड़ की! अरे, तू तो मेरी भेड़ों का भी सफ़ाया करवा देगा... दूर हो जा मेरी आंखों से! मेरा-तेरा हिसाब साफ़ हो गया।"

और सरसेम्बाय धीरे-धीरे अपनी लाठी की छाया की दिशा में स्तेपी में चला गया।

वह एक दूर के शहर में जा पहुँचा और उसके बाज़ार में गया। वह काफ़ी देर तक भीड़ में भटकता रहा, पर किसी ने भी उससे भेड़ की खाल की क़ीमत नहीं पूछी। केवल शाम ढले वह एक आदमी को उसे तीन छोटे सिक्कों में बेच पाया।

"तीन सिक्कों की मैं तीन रोटियाँ ख़रीद लूँगा, तीन रोटियाँ तीन दिन के लिए काफ़ी होंगी। फिर जो हो सो हो!.."

वह रोटी की दुकान की तरफ़ बढ़ा ही था कि रास्ते में उसे एक बीमार बूढ़ा भीख मांगता मिल गया। सरसेम्बाय ने एक सिक्का उसे दे दिया और दो अपने पास रख लिये।

बूढ़े ने सिर हिलाया और झुककर ज़मीन से मुट्ठी-भर रेत उठाकर लड़के की ओर बढ़ाई।

"ले," उसने कहा, "अपनी नेकी के बदले में इसे रख ले।"

सरसेम्बाय ने सोचा कि फ़क़ीर पागल है, लेकिन उसने वृद्ध को ठेस नहीं पहुँचानी चाही और रेत लेकर अपनी जेब में डाल ली।

रात आयी। घुप अंधेरा छा गया। ग़रीब गड़रिया कहाँ सिर छुपाये? उसने कारवां-

सराय में रात गुज़ारने की इजाज़त मांगी। मालिक ने उसे रहने दिया, लेकिन रात गुज़ारने का भाड़ा मांगा, और सरसेम्बाय को एक सिक्का उसे देना पड़ गया।

मालिक ने अपने सारे किरायेदारों को क़ालीनों और नमदों पर सुला दिया, पर सरसेम्बाय को नंगी ज़मीन पर सोने को कहा। भूखे बालक को नीन्द अच्छी नहीं आयी और उसे ठण्डी सख़्त ज़मीन पर बुरे सपने आते रहे।

पौ फ़टे कारवां-सराय में शोर होने लगा, लोग अहाते में चलने-फिरने लगे। परदेसी सौदागर सफ़र की तैयारी में ऊंटों पर माल लादते हुए आपस में बातें करने लगे।

उनमें से एक कहने लगा:

"मैंने रात में एक बहुत सुन्दर सपना देखा। लगा जैसे मैं ख़ान की तरह क़ीमती पलंग पर लेटा हूँ, मेरे ऊपर उजला सूरज भुका हुआ है और मेरे सीने पर उजला चांद खेल रहा है..."

सरसेम्बाय सौदागर के पास जाकर बोला:

"मैंने अपने सारे जीवन में कभी कोई सुन्दर सपना नहीं देखा। अपना सपना मुझे बेच दीजिये, साहब! ताकि यह सपना मेरा हो जाये।"

"सपना बेच दूँ?" व्यापारी हंस पड़ा। "ठीक है। लेकिन इसके बदले में तू मुझे क्या देगा?"

"मेरे पास एक सिक्का है... यह लीजिये।"

"ला, इधर ला तेरा सिक्का!" सौदागर चिल्लाया। "सौदा तय हुआ। अब से मेरा सपना तेरा हो गया, छोकरे!"

सौदागर और भी ज़ोर से हंस पड़ा, और उसके साथ ही कारवां-सराय में मौजूद सारे लोग भी हंस पड़े। नन्हा गड़रिया अपनी ख़रीद पर ख़ुश होकर, उछलता-कूदता अहाते से बाहर भाग गया...

तब से सरसेम्बाय ने न जाने कितने रास्ते नापे, न जाने कितने गांव उसके रास्ते में पड़े। लेकिन उसे न तो कहीं नौकरी मिली, न कहीं पनाह और न ही एक प्याली मट्ठा।

जाड़ा पड़ चुका था। सरसेम्बाय अंधेरी रात में स्तेपी में अपनी सांसों से उंगलियों को गरमाता भटक रहा था। तेज़ हवा उसे एक ओर से दूसरी ओर धकेल रही थी, हिम-झंझावात उसे एक ही जगह में फिरकी की तरह घुमा रहे थे। सरसेम्बाय रो पड़ा और आँसू उसके गालों पर जम गये। वह निढाल होकर बर्फ़ के ढेर पर बैठ गया और निराशा में कहने लगा:

"इतने कष्ट उठाने से तो बेहतर है, भेड़िये मेरे टुकड़े-टुकड़े कर दे!"

उसका इतना कहना था कि उसी क्षण अंधेरे में से एक बड़ा-सा भेड़िया निकल आया: उसके बाल खड़े थे, आंखें दहक रही थीं!

"आखिर आ ही गया शिकार पकड़ में!" भेड़िया गुर्राया। "मेरे बच्चे कितने खुश होंगे!"

"मुझे मार डाल, भेड़िये," लड़के ने धीरे से कहा, "कम-से-कम तेरे बच्चे तो खुश होंगे। मेरे लिए तो जीने से मर जाना बेहतर है..."

लेकिन भेड़िया अपनी जगह से टस से मस नहीं हुआ, बस लड़के को एकटक देखता रहा। अन्त में वह बोला :

"क्या तुम वही सरसेम्बाय है, जिसने मुझे लंगड़ी भेड़ दी थी? सलाम, मैं तुम्हें पहचान गया। डरो मत, मैं तुम्हें हाथ भी नहीं लगाऊँगा, बल्कि हो सकता है, ज़िन्दा रहने में तुम्हारी मदद करूँ। मेरी पीठ पर सवार हो जाओ और खूब कसकर पकड़े रहो!"

सरसेम्बाय उसकी पीठ पर सवार हो गया, और भेड़िया उसे धंसनेवाली बरफ़ के ढेरों पर से भागता ले चला। घने वन के किनारे तक उसे पहुँचाकर भेड़िया बोला :

"उधर आग दिखाई दे रही है, सरसेम्बाय? वहाँ अलाव जल रहा है। वहाँ डाकुओं के गिरोह ने पड़ाव डाला था। अब वे बहुत दूर जा चुके हैं और जल्दी वापस नहीं लौटेंगे... तुम अलाव के पास जाकर ताप लो। सुबह तक मौसम शायद कुछ गरम हो जाये... अलविदा!"

भेड़िया चला गया और सरसेम्बाय जल्दी से आग के पास पहुँच गया। उसके बदन में कुछ गरमी आयी और थोड़ी ताक़त भी – उसने अलाव के पास डाकुओं द्वारा फेंकी हुई हड्डियाँ चचोड़ ली थीं। वह इतना खुश था कि उसका मन गाने को करने लगा। ग़रीब को खुश करने के लिए थोड़े की ही ज़रूरत होती है...

उजाला होने लगा, अलाव पूरी तरह जलकर बुझ गया। जब कोयले काले पड़ गये, तो लड़के ने हाथ गरम-गरम राख में घुसेड़ दिये। कितना अच्छा लग रहा था हाथों को! वह हाथ राख के अन्दर ही अन्दर घुसेड़ता गया और अचानक उसकी उंगलियाँ किसी ठोस चीज़ से टकरा गयीं। सरसेम्बाय ने उस चीज़ को राख से निकाला और भौचक रह गया... सोने की सन्दूकची! बालक का हृदय ज़ोर-ज़ोर से धड़कने लगा... सन्दूकची में क्या है?..

सरसेम्बाय ने ढक्कन उठाया। उसी क्षण धरती के ऊपर सूरज का किनारा दिखाई दिया और उसकी पहली किरण सीधे सन्दूकची पर गिरी। सरसेम्बाय चीख उठा और असह्य चकाचौंध के कारण उसकी आंखें मुंद गयीं : सन्दूकची हीरों से ठसाठस भरी थी!..

गड़रिये ने अपनी खोज सीने से सटा ली और खुशी से फूला न समाता जंगल में भागने लगा।

"बस किसी तरह किसी घर तक पहुँच जाऊँ!" वह सोच रहा था। "अब मैं बिना दुःख भोगे जीने लगूंगा... मेरी दौलत सौ आदमियों के लिए भी काफ़ी रहेगी।"

लेकिन वन उत्तरोत्तर घना होता जा रहा था। सरसेम्बाय को डर लगने लगा और वह अब पछताने लगा कि इतने घने वन में घुस आया।

"इतने निर्जन घने वन में मैं अपनी दौलत का क्या करूँगा?"

तभी उसे वृक्षों के तनों के बीच प्रकाश की झलक दिखाई दे गयी और लड़का चौड़े वनक्षेत्र में पहुँच गया। वनक्षेत्र के बीचोंबीच न जमनेवाली जल-धारा के किनारे एक सफ़ेद नमदे से मढ़ा शानदार तम्बू-घर था।

"यहाँ कैसे लोग रहते हैं?" सरसेम्बाय ने सोचा। "कहीं वे असहाय दुखियारे को तंग तो नहीं करने लगेंगे?"

सरसेम्बाय ने सोने की सन्दूकची एक बूढ़े बलूत के कोटर में छिपा दी और तम्बू-घर के भीतर गया।

"सलाम!" उसने कहा।

तम्बू-घर में चूल्हा जल रहा था और उसके आगे एक लड़की गहरे सोच में डूबी, सिर झुकाये उकड़ूं बैठी हुई थी। आगंतुक को देखते ही लड़की झट उठ खड़ी हुई और आश्चर्य व भय से उसकी ओर देखने लगी।

"तुम कौन हो, लड़के, और यहाँ कैसे आ गये?" उसने अन्त में पूछा।

सरसेम्बाय लड़की को एकटक देख रहा था, पर उसके मुंह से एक शब्द भी नहीं निकल पा रहा था। उसने ऐसी रूपवती कभी नहीं देखी थी, ऐसी कन्याओं का गुणगान तो केवल अक़ीन* ही अपनी रचनाओं में करते थे। किन्तु स्पष्ट था कि उसे कोई गम्भीर दुःख है: उसकी आंखें उदास थीं, और चेहरा उतरा हुआ था।

लड़के ने अपने को क़ाबू में करके कहा:

"मैं अनाथ हूँ। मेरा नाम सरसेम्बाय है। मैं नौकरी, रहने की ठौर और खाने की तलाश में भटक रहा था कि रास्ता भूलकर तुम्हारे यहाँ आ पहुँचा। पर तुम कौन हो, लड़की?"

लड़की उसकी ओर बढ़ी और घबराहट भरे स्वर में बोली:

"मेरा नाम अलतीन-क़ीज़ है। दुनिया में मुझसे ज़्यादा अभागी लड़की शायद ही कोई हो। लेकिन तुम्हें मेरी क्या चिन्ता, सरसेम्बाय? तुम ख़ुद बहुत ख़तरे में हो... अगर तुम्हें इस मनहूस जगह से निकलने का रास्ता मिल जाये, तो यहाँ से भाग जाओ, सिर पर पैर रखकर भागो। तुम्हें मालूम है, तुम्हारा दुर्भाग्य तुम्हें कहाँ ले आया है? यह तम्बू-घर रक्तपिपासु जालमाउइज़-केम्पीर का है। वह किसी भी क्षण घर लौट सकती है। फिर तुम्हारी ख़ैर नहीं... देर न करो, जान बचाकर भाग जाओ!.."

तभी बाहर से शोर, कड़क और क़दमों की आहट सुनाई दी। बालिका का चेहरा और अधिक फक हो गया।

"मौक़ा निकल गया!" लड़की ने डर के मारे कांपते हुए कहा और सरसेम्बाय का हाथ पकड़कर चूल्हे के पास से खींचकर उसे नमदे से अच्छी तरह ढक दिया।

---

* अक़ीन – लोक कवि।

सरसेम्बाय छिपा रहा, पर वह छोटे-से छेद में से तम्बू-घर में जो कुछ हो रहा था, सब देख रहा था।

दरवाज़ा भड़ाक से पूरा खुल गया और तम्बू-घर में लाल-लाल होंठोंवाली राक्षसी – भयावह जालमाउइज़-केम्पीर घुस आयी। उसकी नाक आंकुड़े जैसी थी, बाल खड़े हुए थे, दांत भेड़िये की तरह निकले हुए थे। उसने अपनी धुंधली नज़र तम्बू-घर में चारों ओर दौड़ाई और चूल्हे के आगे उकड़ूं बैठकर अपनी सूखी-सूखी काली उंगलियां ज्वाला की ओर बढ़ाई। वह थोड़ी देर तक ऐसे ही ज़ोर-ज़ोर से हांफती बैठी रही, और अलतीन-क़ीज़ उससे कुछ दूरी पर निश्चल खड़ी रही।

ताप लेने के बाद जालमाउइज़-केम्पीर गुर्रायी:

"अलतीन-क़ीज़, मेरे पास आ।"

डर के मारे थरथर कांपती लड़की ने बुढ़िया की ओर क़दम बढ़ाया और रुक गयी, लेकिन उसने उसे अपनी आंकुड़ेनुमा उंगलियों से पकड़कर अपनी ओर खींच लिया।

अलतीन-क़ीज़ दर्द के मारे कराह उठी। सरसेम्बाय ने मुट्ठियाँ भींच लीं और वह बुढ़िया पर टूट पड़ने ही वाला था कि उसी क्षण जालमाउइज़-केम्पीर ग़ुस्से में चीखी और लड़की को दूर धकेलकर चिल्लायी :

"नालायक़! तू क्यों रोज़ाना पीली पड़ती जा रही है और सूखी जा रही है? क्या तुझे मालूम नहीं कि मैं तुझे अपने तम्बू-घर में किस लिए रखे हुए हूँ? मुझे बहुत पहले ही तुझे चटकर जाना चाहिए था, पर मैं बराबर टालती आ रही हूँ – इन्तज़ार कर रही हूँ कि कब तुझे अक़्ल आये और तू मुटियाने लग जाये: अगर कल मेरे आने तक तू ऐसी ही दुबली रही, तो मैं तुझे इस चूल्हे में ज़िन्दा भून डालूँगी!"

इतना कहते ही बुढ़िया बिस्तर पर गिरकर खर्राटे भरने लगी। और अलतीन-क़ीज़ आग के पास बैठी रात भर रोती रही।

सुबह जालमाउइज़-केम्पीर ने लड़की को फिर धमकी दी और बैसाखी उठाकर तम्बू-घर से बाहर चली गयी। बाहर से शोर, कड़क और क़दमों की आहट सुनाई दी और फिर सब शान्त हो गया।

सरसेम्बाय नमदा हटाकर निकला और उसने पूछा :

"अलतीन-क़ीज़, तुम मुझे बताओ कि तुम इस रक्तपिपासु जालमाउइज़-केम्पीर की दासी कैसे बनीं?"

और अलतीन-क़ीज़ उसे पूरा क़िस्सा सुनाने लगी :

"मैं अपने गांव में अपने मां-बाप के साथ खुश और संतुष्ट रह रही थी। एक बार मेरे माता-पिता किसी के घर गये। जाते समय पिता ने मुझ से कहा था : 'प्यारी अलतीन-क़ीज़, तुम्हें पूरे दिन अकेले रहना है। समझदारी से काम लेना, घर से बाहर मत निकलना और किसी को अन्दर मत आने देना।' मैं ऊबने लगी और घर से बाहर निकल गयी।

मेरी सहेलियां मेरे पास भागी आयीं और मुझे स्तेपी में फूल चुनने चलने को कहने लगीं। मैं, बुद्धू चली गयी। फूल तोड़ रही थी कि मैंने देखा: एक मरियल बुढ़िया बैसाखी टेकती आ रही है। 'अहा, कितनी अच्छी लड़की है! अहा, कैसी रूपवती है!..' वह मुझसे कहने लगी। 'तू कहीं दूर रहती है, लड़की?' मैंने कहा, 'नहीं, पास ही में रहती हूँ। वह रहा हमारा तम्बू-घर।' वह बोली, 'तो फिर मुझे अपने घर ले चल और साफ़ पानी पिला दे।' मैंने कोई बुरी बात नहीं सोची, उसे गांव ले गयी और पानी पिला दिया। लेकिन वह तम्बू-घर से जाने का नाम ही नहीं ले रही थी, बस मुझे घूरे जा रही थी। 'अहा, कितनी अच्छी लड़की है! अहा, कितनी रूपवती है! आ, तेरे बालों में कंघी कर दूँ।' मैंने उसके घुटनों पर सिर रख दिया, और वह सोने की कंघी निकालकर मेरे बाल बनाने लगी। मुझे अचानक नीन्द आने लगी। मैं आंखें मूंदकर गहरी नीन्द में सो गयी। मुझे पता नहीं, मैं कितनी देर सोयी रही, पर मेरी नीन्द इस तम्बू-घर में खुली। बहुत दिन गुज़र चुके हैं। तब से मैंने इस यंत्रणा देनेवाली जालमाउइज़-केम्पीर के अलावा और किसी की सूरत नहीं देखी है। यहाँ ऐसे ही हर घड़ी अपनी मौत का इन्तज़ार करती दिन काट रही हूँ।"

अपनी राम-कहानी सुनाकर अलतीन-क़ीज़ फिर रो-रोकर सरसेम्बाय को जालमाउइज़-केम्पीर के आने से पहले कहीं भाग जाने के लिए मनाने लगी।

किन्तु सरसेम्बाय उसके मनुहार करने पर केवल स्नेहपूर्वक मुस्कराता रहा और फिर उसे बहन की तरह गले लगाकर बोला:

"मैं कभी तुम्हें छोड़कर नहीं जाऊँगा, अलतीन-क़ीज़। हम साथ ही जायेंगे..."

"धन्यवाद, सरसेम्बाय, तुम्हारी नेकी के लिए," अलतीन-क़ीज़ ने कहा, "लेकिन तुम जो कह रहे हो, वह कभी नहीं पूरा होगा। जालमाउइज़-केम्पीर हमें रास्ते में पकड़ लेगी, और अगर नहीं भी पकड़े, तो भी हम हर हालत में कहीं बर्फ़ के किसी ढेर में ठिठुरकर मर जायेंगे।"

"हम वसन्त तक इन्तज़ार करेंगे और फिर भाग जायेंगे..."

अलतीन-क़ीज़ ने एक ठण्डी सांस ली।

"साहसी अकसर अदूरदर्शी होते हैं," उसने कहा। "तुम शायद भूल गये हो कि जालमाउइज़-केम्पीर मुझे आज मार डालेगी।"

"नहीं, अलतीन-क़ीज़, तुम नहीं मरोगी!" लड़का जोश में कह उठा। "मैंने सब सोच लिया है। जालमाउइज़-केम्पीर चालाक है, पर हम उसे चकमा देने की कोशिश करेंगे। तम्बू-घर में अंधेरा है, मैं तुम्हारा कुरता पहन लूँगा और आज तुम्हारी जगह उसके पास जाऊँगा!.. मैं तुमसे लम्बा और मोटा हूँ... शायद हम बुढ़िया को धोखा देने और गरम मौसम तक ज़िन्दा रहने में सफल हो जायें..."

अलतीन-क़ीज़ ने हाथ पर हाथ मारा और कहने लगी कि वह सरसेम्बाय को उसकी

ख़ातिर कभी जान पर खेलने देने को तैयार नहीं होगी। किन्तु गड़रिया दृढ़ और अडिग रहा।

"अगर तुम, अलतीन-क़ीज़, ज़िद करती रहीं, तो मैं आज ही जालमाउइज़-केम्पीर से जा भिड़ूंगा और तुमसे पहले उसके दांतों का शिकार बन जाऊँगा!"

तब लड़की मान गयी। उन्होंने आपस में कपड़े बदल लिये। अलतीन-क़ीज़ नमदे के पीछे छिप गयी, और सरसेम्बाय उसकी जगह चूल्हे के पास बैठ गया।

तभी बाहर से शोर, कड़क और क़दमों की आहट आयी और तम्बू-घर में लाल-लाल होंठोंवाली राक्षसी – भयावह जालमाउइज़-केम्पीर घुस आयी।

वह आगे से हाथ तापकर गुर्रायी:

"अलतीन-क़ीज़, मेरे पास आ!"

सरसेम्बाय बेधड़क बुढ़िया के पास आ गया। उसने उस पर धुंधली नज़रों से सिर से पैर तक देखा और बुदबुदायी:

"लगता है तू आज दिन भर में कुछ बड़ी हो गयी है!"

धोखे का सन्देह न करते हुए उसने सरसेम्बाय का बदन टटोला, उसे नोच लिया और हंसती हुई बोली:

"अहा, कितनी चालाक लड़की है तू! मैं बहुत पहले ही भांप गयी थी कि तू मुझे बेवक़ूफ़ बना रही है। तुझे एक बार अच्छी तरह धमकी देने की देर थी कि तू फ़ौरन रास्ते पर आ गयी!.. ठीक है कुछ दिन और जी ले, थोड़ी चरबी चढ़ा ले..."

सरसेम्बाय और अलतीन-क़ीज़ के लिए कष्टदायी दिन और ख़तरनाक रातें बीतने लगीं।..

अंततः वसन्त आया। जल-धारा में पानी कलकल करता बहने लगा, चिड़ियां चहकने लगीं, फूल खिलने लगे।

सरसेम्बाय अपनी सहेली से बोला:

"प्यारी अलतीन-क़ीज़! अब हमें भागने की तैयारी करना चाहिए। मैं देख रहा हूँ कि जालमाउइज़-केम्पीर पहले से ज़्यादा चिड़चिड़ी हो गयी है: उसे कहीं हमारे इरादे की भनक तो नहीं पड़ गयी है? बुढ़िया को मेरा पता चल गया, तो मुसीबत आ जायेगी, हम दोनों मारे जायेंगे। मैं कमान बनाकर शिकार करने जाऊँगा, रास्ते में खाने के लिए चिड़ियाँ जमाकर लूँगा और तीन दिन बाद छिपकर लौट आऊँगा, फिर हम भाग जायेंगे।"

"जैसा ठीक समझो, सरसेम्बाय, वैसा ही करो," लड़की ने उत्तर दिया, पर उसकी आंखें डबडबा आयीं। "लेकिन शिकार करते समय होशियार रहना और सही-सलामत लौट आना।"

"रोओ मत, अलतीन-क़ीज़, मेरे बारे में दुःखी मत होओ," सरसेम्बाय ने कहा। "और अगर ऊबने लगो, तो नदी के पास जाकर पानी को देखना: अगर पानी पर हंस

के पर तैर रहे हों, तो समझ लेना कि मैं ज़िन्दा और स्वस्थ हूँ और तुम्हें कहीं दूर से सलाम कहलवा रहा हूँ।"

"बच्चों ने एक दूसरे से विदा ली। अलतीन-क़ीज़ मित्र को थोड़ी दूर तक छोड़ने गयी : कहीं जालमाउइज़-केम्पीर खाली तम्बू-घर में अचानक न आ धमके।

सरसेम्बाय चश्मे के किनारे-किनारे आगे बढ़ता गया।

पहले दिन उसने तीन हंस मारे और उनके पर नोचकर पानी में डाल दिये। दूसरे दिन उसने फिर तीन हंस मारे और फिर उनके पर पानी में डाल दिये।

तीसरे दिन सरसेम्बाय ने देखा : वनपथ में एक हिरन का छौना खड़ा है और उसके ऊपर काले कौवों का झुण्ड ज़ोर-ज़ोर से कांव-कांव करता मंडरा रहा है। कौवे छौने की आंखें निकाल लेना चाहते थे। लड़के को छौने पर दया आ गयी, उसने कौवों को भगा दिया।

बूढ़ा हिरन दौड़ा आया।

"धन्यवाद, सरसेम्बाय," वह बोला। "मैं तुम्हारी नेकी का बदला ज़रूर चुकाऊँगा।"

सरसेम्बाय आगे चला। उसे दर्दभरी "में-में" सुनाई दी। उसने गढ़े में झांककर देखा : वहाँ पहाड़ी बकरे का मेमना था। वह निकलने के लिए ज़ोर लगा रहा था, चीख रहा था, पर निकल नहीं पा रहा था।

बालक को उस पर दया आ गयी और उसने उसे गढ़े में से निकाल लिया। बूढ़ा पहाड़ी बकरा भागता आया और बोला :

"धन्यवाद, सरसेम्बाय। मैं तुम्हारी नेकी का बदला ज़रूर चुकाऊँगा!"

सरसेम्बाय आगे चला। यह कौन चीं-चीं कर रहा है?.. देखा : घोंसले से गिरा उक़ाब का नीड़-शावक था। लड़के को चिड़िया के बच्चे पर दया आ गयी और उसने उसे ज़मीन से उठाकर घोंसले में रख दिया।

बूढ़ा उक़ाब उड़ता आया।

"धन्यवाद, सरसेम्बाय। मैं तुम्हारी नेकी का बदला ज़रूर चुकाऊँगा!"

इस प्रकार सरसेम्बाय उस दिन किसी जानवर का शिकार न कर सका। शाम होने-वाली थी। तभी लड़के को याद आया कि उसने सुबह से पानी में हंस का एक भी पर नहीं डाला है। उसका दिल विकल होने लगा। अब बेचारी अलतीन-क़ीज़ नदी के किनारे खड़ी क्या सोच रही होगी? सरसेम्बाय बिना पलटकर देखे वापस भाग चला।

अलतीन-क़ीज़ उस समय उसकी प्रतीक्षा कर रही थी, उसकी याद में तड़प रही थी। जालमाउइज़-केम्पीर के घर से निकलते ही लड़की भागकर नदी के किनारे जा पहुँचती। लड़की जब देखती कि पानी कलकल करता बह रहा है, उस पर हंस के पर तैर रहे हैं, तो वह मुस्कराने लगती : "सरसेम्बाय ज़िन्दा है!"

तीसरा दिन, उनकी जुदाई का आख़िरी दिन आया। अलतीन-क़ीज़ नदी के किनारे खड़ी एकटक देखती रही, एक घंटा, दो घंटे, तीन घंटे ...



पानी तो कलकल करता बह रहा था, पर उस पर हंस के परों का निशान भी नहीं था ...

लड़की किनारे पर गिर पड़ी और हाथों से मुंह ढककर फूट-फूटकर रोने लगी:

"सरसेम्बाय अब इस दुनिया में नहीं रहा! दिलेर लड़का जान से मारा गया और उसे यह भी मालूम नहीं पड़ा कि मैं उसके लिए हज़ार बार मरने को तैयार हो जाती, बस किसी तरह वह ज़िन्दा बच जाये और सुखी रहे ..."

बेचारी रोती-बिलखती रही और यह न देख पायी कि कैसे जालमाउइज़-केम्पीर गुस्से के मारे कांपती उसके पास आ पहुँची। बुढ़िया ने अपनी बंदिनी के कंधों को दबोच लिया और उस को सज़ा देने के लिए तम्बू-घर में घसीट ले गयी।

"तेरी चालबाज़ियों का," वह दहाड़ी, "भेद खुल गया, छोकरी! भागने की सोच रही थी? अपना हिमायती खोज लिया? अच्छी तरह समझ ले: तू मुझसे बचकर कहीं नहीं जा सकती, और तुझे कोई नहीं बचा सकता। तेरी मौत आ गयी है!.. मैं तुझे अभी ज़िन्दा चबाकर खा जाऊंगी!"

अचानक दरवाज़ा भड़भड़ाया और फटाक से पूरा खुल गया: देहली पर सरसेम्बाय खड़ा था। अलतीन-क़ीज़ अपने को छुड़ाकर उसकी ओर लपकी और उसकी गरदन में हाथ डाल दिये, लेकिन बुढ़िया उसे कसकर पकड़े रही, उसे अपने हाथों से नहीं निकलने दिया उसने।

"ठहर, जालमाउइज़-केम्पीर!" लड़का चिल्लाया। "मेरी बात सुन ले। अलतीन-क़ीज़ को छोड़ दे – तुझे छुड़ौती में क़ीमती चीज़ दूँगा।"

"छुड़ौती देगा? वाह रे ढीठ! तू, फटीचर छोकरा, क्या देगा मुझे इसके बदले में?"

सरसेम्बाय ने पेड़ के कोटर में से सोने की सन्दूकची निकालकर बुढ़िया के सामने उसका ढक्कन खोल दिया। बहुमूल्य हीरे-जवाहरात को देखते ही जालमाउइज़-केम्पीर लालच के कारण चीख उठी और उसने लड़की को छोड़ दिया। उसके ग़ुस्से पर लालच हावी हो गया।

"ले जा छोकरी को, ले जा! और तेरे हीरे इधर ला!"

सरसेम्बाय आख़िर इतना मूर्ख तो था नहीं जो सन्दूकची बुढ़िया के हाथों में पकड़ाता।

"ये ले हीरे, बुढ़िया, उठा ले!" लड़का चिल्लाया और हीरे चारों ओर बिखेरने लगा। हीरे तारों की तरह चमकते ज़मीन पर लुढ़कने लगे। जालमाउइज़-केम्पीर लपककर उन्हें उठा-उठाकर अपने पल्ले में डालने लगी, और उधर सरसेम्बाय अलतीन-क़ीज़ का हाथ पकड़कर तम्बू-घर से बाहर भाग निकला।

वे बिना रास्ते पर ध्यान दिये वनपथ से भागते रहे, मुड़कर देखने से डरते जंगल में भागते रहे। वृक्षों की शाखाएँ उनके बेंत की तरह चोटें मारती रहीं, टहनियाँ खरोंचती रहीं, ठूंठ और लट्ठे उनका रास्ता रोकते रहे। अलतीन-क़ीज़ बिलकुल निढाल हो गयी,

उसके पैर घायल और लहू-लुहान हो गये, वह भागती-भागती अपनी चोटियां संभालती रही, आस्तीन से चेहरे का पसीना पोंछती रही।

भागते लड़के-लड़की को अचानक अपने पीछे से शोर और कड़क सुनाई दिये : धरती कांपने लगी, पेड़ गिरने लगे – जालमाउइज़-केम्पीर उनका पीछा कर रही थी।

"जल्दी से भागो, अलतीन-क़ीज़!" सरसेम्बाय ने कहा। "अब हमारी सारी आस केवल हमारे पैरों पर ही है।"

पर अलतीन-क़ीज़ उससे बोली :

"मुझमें अब और ताक़त नहीं रही, सरसेम्बाय। मेरा सिर चकरा रहा है, मेरे घुटने टूटे जा रहे हैं। आगे तुम अकेले भाग जाओ! जब तक जालमाउइज़-केम्पीर मुझे खा पायेगी, तुम दूर पहुँच जाओगे..."

"तुम क्या कह रही हो, अलतीन-क़ीज़? मैं तुम्हें कभी छोड़कर नहीं जाऊँगा। तुम मुझे दुनिया में सबसे ज़्यादा प्यारी हो।"

वे फिर भागने लगे। पर जालमाउइज़-केम्पीर निरन्तर निकट आती जा रही थी... बुढ़िया गालियां दे रही थी, धमकी दे रही थी :

"मैं ज़रूर तुम्हें पकड़ लूँगी! हर हालत में ज़िन्दा चबा डालूँगी!"

अलतीन-क़ीज़ गिर पड़ी, उसे सांस बड़ी मुश्किल से आ रही थी। वह धीरे से फुस-फुसायी :

"अलविदा, सरसेम्बाय!.. मुझे छोड़ जाओ, अपनी जान बचाओ... मैं तो अब नहीं बच सकूंगी..."

लड़का रो पड़ा :

"अगर मरना है, तो साथ ही मरेंगे!.."

उसने लड़की को ज़मीन से उठाकर अपनी पीठ पर बिठा लिया और हांफता हुआ आगे भागा।

तभी अचानक बूढ़ा हिरन जैसे ज़मीन फाड़कर निकल आया और कहने लगा :

"मैं तुम्हें नहीं भूला, सरसेम्बाय। मेरी पीठ पर बैठ जाओ, बच्चो। मेरी गरदन पकड़े रहो : मनहूस बुढ़िया मुझे नहीं पकड़ सकती।"

बूढ़े हिरन ने उन्हें पलक झपकते ऊँची पहाड़ी के पास पहुँचा दिया और बोला :

"जालमाउइज़-केम्पीर तुम्हें यहाँ नहीं ढूँढ़ पायेगी।"

बच्चे एक दूसरे से चिपटे पहाड़ी की तलहटी में बैठ गये; पर वे दम भी न ले पाये थे कि देखा जालमाउइज़-केम्पीर धूल के गुबार उड़ाती, चीखती-चिल्लाती सीधी उन्हीं की ओर भागी आ रही है।

सरसेम्बाय झट उठ खड़ा हुआ और अपनी सखी को अपनी ओट में कर, हाथ में नुकीला पत्थर उठाकर जूझने के लिए तैयार हो गया।

तभी अचानक बूढ़ा पहाड़ी बकरा उनके आगे जैसे ज़मीन फाड़कर निकल आया और बोला :

"मैं तुम्हें भूला नहीं हूँ, सरसेम्बाय। मेरी पीठ पर बैठ जाओ, बच्चो, और मेरी सींग कसकर पकड़ लो। मैं तुम्हें मुसीबत से बचा लूँगा।"

जालमाउइज़-केम्पीर भागती हुई पहाड़ी तक पहुँची ही थी कि लड़का और लड़की उसकी चोटी पर जा पहुँचे। बुढ़िया गुस्से से पागल हो उठी, पहाड़ी को दांतों से चबाने लगी, पंजों से खोदने लगी। पहाड़ी हिल उठी, लगा बस जैसे ढहने ही वाली है।

अचानक बूढ़ा उक़ाब उड़कर पहाड़ी पर आ पहुँचा और बोला :

"मैं तुम्हें भूला नहीं हूँ, सरसेम्बाय। बच्चो, जल्दी से मेरे पंखों पर बैठ जाओ। तुमने, सरसेम्बाय, मेरे बच्चे को बचाया था और मैं तुम लोगों को बचाऊँगा।"

बच्चे उक़ाब के ऊपर कूदे, उक़ाब उन्हें बुलन्दी पर ले उड़ा और उसी क्षण पहाड़ी ढह गयी, – ढही भी ऐसे कि दुष्ट जालमाउइज़-केम्पीर उसके नीचे दब गयी।

उक़ाब दिन भर उड़ता रहा, रात भर उड़ता रहा। बादलों के नीचे उड़ता रहा, बादलों के ऊपर उड़ता रहा। फिर स्तेपी के बीच एक गांव के पास उतर गया।

अलतीन-क़ीज़ ने ज़मीन पर क़दम रखकर चारों ओर नज़र दौड़ायी और खुशी के मारे चिल्ला उठी :

"अरे, यह तो मेरा गांव है!"

लड़की की आवाज़ सुनकर उसके पिता और माता घर से बाहर भागे, बेटी की ओर लपके और उसे गले लगाकर चूमने लगे, प्यार करने लगे।

"तुम इतने दिनों तक कहाँ रहीं, अलतीन-क़ीज़? तुम पर कैसी मुसीबत टूट पड़ी थी, बेटी? तुम्हारे उद्धार के लिए हम किसका धन्यवाद करें?"

लड़की ने उन्हें पूरा क़िस्सा सुनाकर सरसेम्बाय की ओर इशारा किया :

"यही है मेरा उद्धारक!"

धूल में लथपथ, जगह-जगह खरोंचे खाया, गंदे चिथड़े पहने और नंगे पांव सरसेम्बाय शर्म के मारे आंखें झुकाये खड़ा था।

अलतीन-क़ीज़ के माता और पिता उसके हाथों में हाथ डालकर तम्बू-घर में ले आये और उसे अच्छे-अच्छे कपड़े पहनाकर सम्मानित स्थान पर बिठा दिया।

"हमारे यहाँ बस जाओ, प्यारे सरसेम्बाय, हमेशा हमारे साथ रहो! हम छोटे बच्चे की तरह तुम्हारा लाड़-प्यार करेंगे और सफ़ेद दाढ़ीवाले बुजुर्ग की तरह तुम्हारी इज़्ज़त करेंगे।"

वर्ष बीतते रहे। सरसेम्बाय गांव में रहता रहा और कभी अलतीन-क़ीज़ से जुदा नहीं हुआ। मेहनत और आराम, दुःख और सुख – वे सब बराबर-बराबर बांटते रहे। स्तेपी में सरसेम्बाय जैसा दिलेर और योग्य बांका लड़का कोई नहीं था, और दुनिया में

अलतीन-क़ीज़ से बढ़कर सुन्दर और स्नेहमयी लड़की कोई नहीं थी। उन्होंने समय आने पर युवावस्था में पदार्पण किया, सयाने हुए, उनका विवाह हो गया और वे पहले से भी अधिक सुखी हो गये। शीघ्र ही उनकी प्रथम सन्तान – पुत्र का जन्म हुआ, जिस पर तिपा को गर्व था और जो माँ की ख़ुशी था।

एक बार सरसेम्बाय काम के बाद स्तेपी की सुगंधित घास पर लेटा हुआ था, पास ही में उस पर भुकी अलतीन-क़ीज़ बैठी थी, और नन्हा बेटा उसके सीने पर कूद रहा था। सरसेम्बाय अपने को भाग्यशाली अनुभव कर हंसा और खुशी से बोला :

"देखो, मेरा वह अद्भुत सपना सच हो गया, जिसे मैंने बचपन में सौदागर से कारवां-सराय में एक मामूली-से सिक्के में ख़रीदा था। देखो ज़रा : मैं बेशक़ीमती पलंग – मेरी मातृभूमि की पवित्र भूमि पर लेटा हुआ हूँ ; मेरे ऊपर उजला सूरज – मेरी प्यारी अलतीन-क़ीज़, तुम भुकी हुई हो ; और मेरे सीने पर उजला चांद – मेरा प्यारा-प्यारा बेटा, मेरी पहली सन्तान खेल रहा है ... इस क्षण कौन ऐसा ख़ान है, जिसे मुझसे ईर्ष्या न हो !"

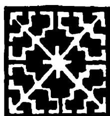
अपने कष्ट भरे बचपन को याद करके सरसेम्बाय को एक बार फिर अपने उन चिथड़ों को देखने की इच्छा हुई, जिन्हें पहनकर वह कभी बाय के यहां से चला गया था, दुनिया भर में भटकता रहा था और रक्तपिपासु जालमाउइज़-केम्पीर के तम्बू-घर में अपनी अलतीन-क़ीज़ से पहली बार मिला था। उसकी पत्नी उसके छुटपन की क़मीज़ निकालकर उसके पास ले आयी। सरसेम्बाय ने उसे हाथों में थामा और सिर हिलाया : वह केवल चिथड़ा भर रह गयी थी ... पर उसमें जेब साबुत थी और वह ख़ाली नहीं थी : उसमें कुछ था। लेकिन क्या हो सकता है ? सरसेम्बाय ने जेब में हाथ डाला और मुट्ठी भर रेत निकाली। उसे वह भिखारी याद हो आया, जिसे उसने बाज़ार में छोटा सिक्का दिया था, बूढ़े की वह अजीब भेंट याद आयी, और उसने एक ठण्डी सांस लेकर रेत हवा में उछाल दी। हवा के एक भोंके ने हल्के-फुल्के रेत के कणों को स्तेपी में फैला दिया। और सारी निस्सीम स्तेपी अनगिनत भेड़ों के रेवड़ों, गायों, घोड़ों व ऊंटों के भुण्डों से भर गयी : रेत के कण शानदार ऊंटों, तेज़ घोड़ों, दुधारू गायों और मोटी-ताज़ी भेड़ों में बदल गये।

गांव के लोग आकर पूछने लगे :

"ये अनगिनत भुण्ड किसके हैं ? यह अनदेखी दौलत किसकी है ?"

सरसेम्बाय ने जवाब दिया :

"ये अनगिनत रेवड़ मेरे और आपके हैं, यह अनदेखी दौलत आपकी और मेरी है।"



रूपवती मीरजान और सांपों का बादशाह

एक ग़रीब विधवा थी। उसके एक इकलौती बैटी थी – उनके वंश में सबसे रूपवती। उसका नाम मीरजान था। एक गरम दिन लड़कियां नदी पर नहाने गयीं और मीरजान को भी अपने साथ ले गयीं। पानी में नहाते-नहाते लड़कियां कहने लगीं:

"तुम कितनी सुन्दर हो, मीरजान! अगर बादशाह तुम्हें देख ले, तो कह उठे: 'मेरी आंखों के नूर, मीरजान, मैं तुम्हें अपनी सारी दौलत दे दूँगा, तुम बस मेरी बन जाओ!'"

मीरजान ने लजाकर आंखें झुका लीं।

"तुम ऐसा मज़ाक़ क्यों करती हो, सहेलियो? बादशाह तो मेरी तरफ़ आंख उठाकर भी नहीं देखता। क्योंकि मैं गांव में सबसे ग़रीब घर की हूँ।"

उसका इतना कहना था कि एकाएक नदी में उफान आने लगा और पाताल में से किसी की प्रभावशाली आवाज़ आयी:

"मेरी आंखों के नूर, मीरजान, मैं तुम्हें अपनी सारी दौलत दे दूँगा, तुम बस मेरी बन जाओ!"

भयभीत लड़कियां चीख मारकर किनारे की ओर लपकीं और अपने-अपने कपड़े उठाकर गांव भाग गयीं। मीरजान का उनको ध्यान ही नहीं रहा।

रूपवती ने किनारे पर खड़े-खड़े देखा: उसके कपड़ों पर एक भीमकाय नाग सात कुण्डलियां मारे बैठा है और फन ऊँचा उठाये उसी को एकटक देखे जा रहा है।

"मेरी आँखों के नूर, मीरजान!" साँप बोला। "मैं पानी के देश का बादशाह हूँ। तुम्हें अपने प्राणों से ज़्यादा प्यार करता हूँ। तुम मुझसे शादी कर लो! मैं तुम्हें अपना बिल्लौरी महल भेंट कर दूँगा। हिचकिचाओ मत! अगर मुझसे शादी करने का वचन दोगी, तब तो तुम्हें तुम्हारे कपड़े लौटा दूँगा, वरना इन्हें पेंदे में ले जाऊँगा। फिर क्या करोगी?"

मीरजान किंकर्तव्यविमूढ़ हो गयी। डर के मारे उसने वचन दे दिया। सांप वहाँ

से ऐसे ग़ायब हो गया, जैसे वहाँ था ही नहीं, नदी में केवल हिलोरें आ रही थीं, तरंगें किनारे पर छपाके मार रही थीं। लड़की ने किसी तरह कपड़े पहने और सहेलियों के पीछे-पीछे भागी। तम्बू-घर में घुसकर वह माँ के आगे गिर पड़ी और फूट-फूटकर रोने लगी।

"तुम्हें क्या हो गया, प्यारी बेटी?" विधवा व्यथित हो उठी। "किसी ने तुम्हारे साथ बुरा किया?"

मीरजान ने उसके साथ जो हुआ सब बता दिया और हाथ मलती रही।

"अब मैं क्या करूँ? मैंने वचन दे दिया है। मैं अपने वादे से कैसे मुकर जाऊँ?"

उसकी माँ ने उसके सिर पर हाथ फेरा, उसे सीने से लगा लिया और तसल्ली दिलाने लगी:

"शान्त हो जा, मेरी बच्ची। भयानक सांप को तुमने शायद सपने में देखा होगा। दुनिया में ऐसा होता ही नहीं है। तुम घर पर बैठो और कहीं मत जाओ।"

एक सप्ताह बीत गया। मीरजान हंसने-खेलने लगी। माँ उसे तम्बू-घर से बाहर नहीं निकलने देती थी और स्वयं भी उससे दूर नहीं जाती थी।

एक बार बुढ़िया ने दरवाज़े में से बाहर झांककर देखा और सन्न रह गयी।

"हाय, मर गये! जहाँ तक नज़र जाती है, नदी से हमारे तम्बू-घर की तरफ़ काले-काले सांप ही सांप रेंगते दिखाई दे रहे हैं!.."

मीरजान का चेहरा फक हो गया:

"वे मुझे ले जाने आ रहे हैं!.."

वे दरवाज़ा बन्द कर, सारा सामान उससे अड़ा, नमदा ओढ़कर छिप गयीं। डर के मारे वे सांस तक नहीं ले रही थीं।

और सांप थे कि रेंगते-रेंगते बराबर उनके घर के निकट आते जा रहे थे – सारी स्तेपी में तहलका मच गया था। वे तम्बू-घर के पास आये, तो रास्ता बन्द था। वे फुफकारते हुए, तम्बू-घर पर टूट पड़े और अन्दर घुसकर बेहोश मीरजान को पकड़कर नदी की ओर ले गये। विधवा बुरी तरह रोती-बिलखती बेटी की ओर हाथ बढ़ाये उनके पीछे भागी – पर उन्हें पकड़ न सकी। सांपों ने पानी में ग़ोता लगाया और उनके साथ ही रूपवती भी आँखों से ओझल हो गयी।

दु:ख के मारे लड़खड़ाती बुढ़िया अपने ख़ाली घर लौटी और ज़मीन पर गिरकर विलाप करने लगी:

"मर गयी मेरी बेटी मीरजान! मेरे करम फोड़ दिये मनहूस सांप ने!.."

पूर्णिमा पर पूर्णिमा बीतती रही, समय गुज़रता रहा। एकाकी विधवा पूर्णत: जर्जर हो गयी, उसकी कमर झुक गयी, बाल सफ़ेद हो गये। लेकिन वह बराबर प्रतीक्षा करती रही, अपनी धुँधलायी आँखें स्तेपी में जमाये उधर देखती रही, जिधर काले सांप उसकी बेटी को उठा ले गये थे।

एक बार वह दुःख में डूबी अपने तम्बू-घर के दरवाज़े के पास बैठी थी, अचानक उसने देखा: रानी की तरह सजी-धजी एक युवा स्त्री, दायें हाथ से लड़के का हाथ थामे और गोद में लड़की उठाये, उसकी तरफ़ चली आ रही है।

बुढ़िया हड़बड़ा उठी।

"मीरजान! मेरी बेटी! तुम्हीं हो ना!"

उन्होंने एक-दूसरे का आलिंगन किया, एक-दूसरे को चूमा और तम्बू-घर में गयीं। बुढ़िया अपनी बेटी को, नाती-नातिन को देखती रही, पर उसे अपनी आँखों पर विश्वास ही नहीं हो रहा था।

"तुम कहाँ से आयी हो, मीरजान?"

"मैं नदी तल के देश से आयी हूँ। मेरा पति वहाँ का बादशाह है।"

"पानी के नीचे तुम्हारी ज़िन्दगी सुख में बीत रही है क्या?"

"मुझसे ज़्यादा सुखी कोई नहीं होगा। पर मुझे तुम्हारी याद बहुत सता रही थी, माँ, और मैं तुम्हें हमारे बच्चों को दिखाना चाहती थी।"

"बेटी, क्या तुम सचमुच उस दुष्ट सांप के पास लौट जाओगी? तुम क्या अपनी दुखियारी माँ को फिर छोड़कर चली जाओगी?" विधवा ने पूछा, पर मन में कहा: "ऐसा कभी नहीं होने दूँगी! अब मैं किसी क़ीमत पर अपनी मीरजान से नहीं बिछुड़ूँगी।"

"प्यारी माँ," मीरजान ने उत्तर दिया, "मुझे माफ़ करना, पर मैं तुम्हारे यहाँ ज़्यादा देर नहीं रह सकूँगी। हमें शाम तक नदी तल में अपने महल में पहुँच जाना है। मेरे पति हमारा इन्तज़ार कर रहे हैं। मैं उन्हें प्यार करती हूँ और उनका आदर करती हूँ। क्योंकि वह केवल धरती पर ही सांप का रूप धरते हैं, और अपने देश में – वह बहुत सुन्दर नौजवान हैं।"

"शायद हमारे भाग्य में ऐसा ही बदा था। लेकिन तुम नदी तल के देश का रास्ता फिर कैसे ढूँढ़ोगी?"

"ऐसे। मैं नदी के किनारे जाकर आवाज़ दूँगी: 'अहमेत! अहमेत! मैं तुम्हारी बीवी हूँ, मेरी आँखों के नूर, ऊपर आकर मुझे ले जाओ!' और मेरे पति फ़ौरन मेरे आगे निकलकर हमें महल में ले जायेंगे।"

"ठीक है," बुढ़िया ने मन में सोचा, "अब मुझे मालूम हो गया कि क्या करना चाहिए।"

माँ रोने लगी और बेटी को न जाने के लिए मनाने लगी।

"अगर तुम हमेशा के लिए मेरे साथ नहीं रहना चाहतीं, तो अपने घर में कम-से-कम एक रात तो रह लो!"

मीरजान को बूढ़ी माँ पर दया आ गयी और वह उसके यहाँ एक रात के लिए रुकने को मान गयी। बुढ़िया ख़ुश हो उठी, उसमें जैसे फ़ौरन जान आ गयी।

दिन ढलने लगा था। रात आयी, बच्चे सो गये और रूपवती मीरजान भी सो गयी। तब बुढ़िया चुपके से बिस्तर से उठी और अंधेरे में कुल्हाड़ी टटोलकर दबे पांव तम्बू-घर से बाहर निकल गयी।

वह नदी किनारे पहुँचकर कगार पर खड़ी हो गयी और वहाँ से ज़ोर से आवाज़ देने लगी:

"अहमेत! अहमेत! मैं तुम्हारी बीवी हूँ! मेरी आँखों के नूर, ऊपर आकर मुझे ले जाओ!"

उसी क्षण सांप पानी में से निकला और किनारे पर फन रखकर प्यार से बोला:

"तुम आखिर आ गयीं, मेरी मीरजान! मैं तो तुम्हारा इन्तज़ार करते-करते थक गया, बच्चों की याद में तड़पता रहा..."

बुढ़िया ने देर नहीं की और कुल्हाड़ी उठाकर साँप का सिर काट दिया... उसका सिर किनारे पर लुढ़क गया। और नदी का पानी खून से लाल हो उठा...

मीरजान सुबह उठी और बच्चों को लेकर माँ से विदा लेने लगी:

"अच्छा, मैं चलती हूँ, एक साल बाद आऊँगी तुम्हारे पास।"

रूपवती नदी के निकट पहुँची – लड़के का हाथ पकड़े, लड़की को गोदी में लिये। पानी के पास रुककर उसने पति को पुकारा:

"अहमेत! अहमेत! मैं तुम्हारी बीवी हूँ! मेरी आँखों के नूर, ऊपर आकर मुझे ले जाओ!"

पति नहीं निकला। थोड़े देर बाद मीरजान ने फिर आवाज़ दी:

"अहमेत! अहमेत! मैं तुम्हारी बीवी हूँ! मेरी आँखों के नूर, ऊपर आकर मुझे ले जाओ!"

लेकिन नदी तल का बादशाह अथाह पानी में से निकला ही नहीं। मीरजान का दिल डूबने लगा, उसने नदी पर नज़र डाली, पर नदी तो सारी लाल हो गयी थी...

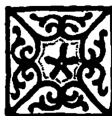
मीरजान सब समझ गयी, रोने लगी और बच्चों को चूमने लगी:

"तुम्हारे पिता मर गये, बच्चो!.. उनकी मौत के लिए मैं दोषी हूँ... अब मैं तुम अनाथों का क्या करूँ?"

उसने बच्चों को डबडबायी आँखों से देखा और बोली:

"तुम, बेटी, अबाबील बन जाओ – इस पानी के ऊपर उड़ती रहना! और तुम, बेटे, बुलबुल बनकर भोर को गीत सुनाना! और मैं, तुम्हारी बेघर माँ, कोयल बन जाऊँगी, एक जगह से दूसरी जगह भटकती रहूँगी, पति की याद में तड़पती रहूँगी, दर्दभरी आवाज़ में कूकती रहूँगी!..

इतना कहते ही वे तीनों पक्षी बन गये और पंख फड़फड़ाते भिन्न-भिन्न दिशा में उड़ गये।



अपना-अपना भाग्य

दो भाई थे। बड़ा भाई बुद्धिमान और परिश्रमी था, जब कि छोटा – नासमझ, सुस्त और ईर्ष्यालु था। उसका नाम क़ादिर था। यह कहानी उसी के बारे में है।

क़ादिर अपने भाई के पास आया और अपना दुखड़ा रोने लगा :

"ऐसा क्यों होता है, भैया, कृपा करके ज़रा समझा दो! हम दोनों एक ही वंश और क़बीले के हैं, एक ही बाप के बेटे हैं, पर हमारा भाग्य अलग-अलग है। तुम्हें हर काम में सफलता मिलती है, मुझे – किसी काम में नहीं मिलती। तुम्हारी भेड़ें ब्याती हैं, मोटी होती रहती हैं, पर मेरी – एक के बाद एक मरती जा रही हैं; तुम्हारा घोड़ा घुड़दौड़ में अव्वल आया, जब कि मेरे ने मुझे बीच रास्ते में गिरा दिया; तुम्हारे घर में हमेशा मांस और क़िमिज़ रहता है, जब कि मुझे घर में पनीला शोरबा भी पेट भर खाने को नहीं मिलता; तुम्हारी पत्नी स्नेहमयी है, जब कि मेरी तरफ़ कोई लड़की आंख उठाकर भी नहीं देखती; तुम्हारा बुज़ुर्ग आदर करते हैं, जब कि छोटे-छोटे छोकरे भी बेशर्मी से मेरी खिल्ली उड़ाते हैं ..."

बड़ा भाई मुस्कराकर बोला :

"इसका कारण यह है कि मेरा भाग्य मेरी सहायता करता है।"

"आख़िर वह मेरी मदद क्यों नहीं करता?"

"हर मनुष्य का अपना-अपना भाग्य होता है, क़ादिर। मेरा भाग्य मेहनती है, और तुम्हारा शायद कहीं किसी क़ैराग़च * के तले सो रहा है।"

"तो ठीक है," क़ादिर ने सोचा, "मैं अपने भाग्य को ढूंढ़कर उसे मेरी ख़ातिर काम करने को मजबूर कर दूंगा।"

वह उसी दिन अपने भाग्य की खोज में निकल पड़ा।

---

* क़ैराग़च – एल्म क़िस्म का सोवियत संघ के दक्षिणी इलाक़ों में पाया जानेवाला वृक्ष।

वह चलता रहा, चलता रहा और बहुत दूर जा पहुँचा। अचानक एक चट्टान के पीछे से एक शेर निकला और उसका रास्ता रोककर खड़ा हो गया। क़ादिर भयभीत हो उठा, लेकिन भागकर वह जा भी कहाँ सकता था: चारों तरफ़ नंगी स्तेपी फैली हुई थी। अब क्या होगा?

शेर बोला:

"तू कौन है?"

"मैं क़ादिर हूँ।"

"कहाँ जा रहा है?"

"अपने भाग्य को खोजने।"

"तो, फिर, सुन मेरी बात, क़ादिर," शेर बोला, "जब तू अपने भाग्य को ढूँढ़ लोगे, तो उससे पूछना कि मैं क्या करूँ, जिससे मेरे पेट का दर्द ठीक हो जाये। किसी जड़ी-बूटी से फ़ायदा नहीं हो रहा है। मैं परेशान हो गया हूँ, किसी काम का नहीं रहा। मेरा काम करने का वचन देगा, तो तुझे नहीं छुऊँगा, वरना इसी वक़्त चबा जाऊँगा।"

क़ादिर ने क़सम खायी कि वह उसको कोई तरकीब बतायेगा या दवा लाकर देगा, और जानवर उसके रास्ते से हट गया।

क़ादिर आगे चला। उसने देखा: धूप में तपते खेत में एक बूढ़ा, बुढ़िया और अद्वितीय सुन्दरी बैठे फूट-फूटकर रो रहे हैं, जैसे उनका कोई मर गया हो।

क़ादिर रुक गया।

"आप लोग क्यों रो रहे हैं?"

"हम पर भारी मुसीबत आ गयी है," वृद्ध ने उत्तर दिया। "मैंने तीन साल पहले यह खेत खरीदा था और इसकी क़ीमत अपना सब कुछ देकर चुकायी थी। हम कमरतोड़ मेहनत करके इस ज़मीन में खेती करते हैं, जैसे मां बच्चे की संभाल करती है, वैसे हम पौधों की संभाल करते हैं। पर अभी तक एक बार भी फ़सल नहीं उठा पाये हैं। अंकुर खूब घने निकलते हैं, वसन्त में खेत उमदा फ़सल की आशा दिलाता हरा-भरा हो जाता है, पर बीच गर्मी में, हम कितना भी पानी क्यों न दें, पौधे मुरझाने लगते हैं और जड़ तक सूख जाते हैं। इस प्रकोप का क्या कारण है, कोई नहीं बता पाता है। हम मर जायेंगे, भले आदमी। हमारा भाग्य है ही नहीं।"

क़ादिर बोला:

"हालांकि मेरा भाग्य है, पर वह कहीं किसी घने क़ैराग़ाच के तले सो रहा है। मैं उसे ढूँढ़ने ही जा रहा हूँ।"

बूढ़ा क़ादिर की चिरौरी करने लगा:

"प्यारे बेटा, तुम्हारा बाल भी बांका न हो, सफलता तुम्हारे क़दम चूमे! अगर

तुम्हें अपना भाग्य मिल गया, तो कृपा करके, उससे पूछना कि क्या उसे हमारी फ़सल बरबाद होने का कारण मालूम है? हम हमेशा तुम्हारे आभारी रहेंगे।"

क़ादिर ने बूढ़े को जवाब लाकर उसी स्थान पर लौटने का वादा किया और फिर आगे चल पड़ा।

बहुत दिनों बाद क़ादिर एक बड़े शहर में पहुँचा, जो, मालूम पड़ा, ख़ान की राजधानी था। उसके रास्ते में भीड़ के बीच नज़र आने की देर थी कि उस पर सिपाही टूट पड़े और उसका गरेबान पकड़कर ख़ान के महल में खींच ले गये। इतनी अप्रत्याशित बात से क़ादिर किंकर्त्तव्यविमूढ़ रह गया और यह न ज्ञात होने पर कि उसका क्या क़सूर है, बुरी से बुरी सज़ा की प्रतीक्षा करने लगा। किन्तु ख़ान ने उसका स्वागत सहृदय मुस्कान और स्नेहपूर्ण शब्दों से किया:

"तुम मेरे मेहमान बनो, परदेसी," ख़ान ने कहा, "और बताओ कि तुम कौन हो और कहाँ जा रहे हो?"

क़ादिर घुटनों पर गिर पड़ा और उसने हकलाते हुए अपनी सारी आपबीती ख़ान को सुना दी।

उसकी बात सुनकर ख़ान ने हुक्म दिया:

"उठो और मेरे पास आओ, क़ादिर। मुझसे डरो मत। मैं तुमसे अपने दास की तरह नहीं, मित्र की तरह बात कर रहा हूँ। मुझे तुमसे एक विनती करनी है। तुम्हें जब अपना भाग्य मिल जाये, तो उससे पूछना कि मैं इतने विशाल, समृद्ध और शक्तिशाली देश का ख़ान होते हुए भी अपने सोने के महल में क्यों ख़ुश नहीं रह पा रहा हूँ और तड़पता रहता हूँ। उत्तर के लिए, वह चाहे जैसा भी क्यों न हो, मैं तुम्हें खुले दिल से इनाम दूँगा।"

और क़ादिर फिर सफ़र पर निकल पड़ा। वह तीन वर्ष तक यात्रा करता रहा। अन्त में वह एक ऊँचे काले पर्वत के पास पहुँचा और देखा: एक खड़ी चट्टान की कगार पर एक शाखी क़ैराग़च उगा हुआ है और उसके नीचे मनुष्य से मिलता-जुलता कोई नंगा, कई दिनों से नहीं नहाया प्राणी नंगे पैर, बाल बिखेरे गहरी नीन्द में सो रहा है।

"क्या सचमुच यही मेरा भाग्य है?" क़ादिर ने सोचा और आलसी को जगाने लगा:

"उठो, आँखें खोलो, काम का वक़्त हो गया है। मेरे भाई का भाग्य तो वहाँ उसके लिए कमरतोड़ मेहनत कर रहा है। तुम क्या मेरी सेवा नहीं करना चाहते? आंखें खोलो और जल्दी से उठो!"

वह काफ़ी देर तक चिल्लाता और उनींदे को झंझोड़ता रहा। अन्त में भाग्य हिला, उसने अंगड़ाई लेकर सिर उठाया और जँभाइयाँ लेते हुए आँखें मलने लगा।

"क्या तुम हो, क़ादिर? तुम बेकार भटकते फिर रहे हो दुनिया में, पैर तोड़ रहे

हो। ऐसे ही किसी शाखी क़ैरागच के तले लेटे रहते, तो ज़्यादा अच्छा होता, तुम्हें अधिक शान्ति मिलती। भाग्य तो तुम्हारे भाई जैसे बुद्धिमानों और परिश्रमियों की सहायता करता है और तुम्हारे जैसे मूर्खों और कामचोरों के तो वह भी किसी काम का नहीं होता। लेकिन जब तुम मेरे पास आ ही पहुँचे हो, तो बैठो और बताओ कि तुमने यहाँ का रास्ता कैसे खोजा, क्या-क्या देखा, किस-किस से मिले, उनसे क्या-क्या बातें हुईं और तुम्हें मुझसे क्या चाहिए?"

क़ादिर अपना क़िस्सा सुनाने लगा, और भाग्य जंभाइयां लेता हुआ उसकी बातें सुनता रहा। उसकी पूरी बातें सुनकर उसने उसे समझाया कि उसे वापस लौटते समय किस-किस को क्या-क्या उत्तर देना है और फिर बोला:

"तुम्हारे क़िस्से सुनकर मैं इस निर्णय पर पहुँचा हूँ, क़ादिर, कि तुम में बुराइयां बहुत हैं, पर साथ ही कुछ अच्छाइयां भी हैं। तुम्हारी अच्छाइयों के लिए ही मैं तुम्हें इनाम देना चाहता हूँ। अब घर जाओ। तुम्हारा भाग्योदय होनेवाला है। हर किसी को ऐसा सुख नहीं मिलता। लेकिन देखो, कहीं अपनी नासमझी के कारण मौक़ा मत चूक जाना। अच्छा, जाओ!"

क़ादिर का भाग्य फिर क़ैरागच तले पैर पसारकर लेट गया और उसके खर्राटों से सारी घाटी गूंजने लगी। क़ादिर उससे अपना भविष्य भली-भांति मालूम करने के लिए उसे फिर झंझोड़ने लगा, पर वह कहाँ जागनेवाला था – वह पसीने-पसीने हो गया, पर भाग्य किसी तरह जागा ही नहीं। वह थोड़ी देर खड़ा रहा और फिर मुड़कर उसी रास्ते पर डग भरने लगा, जिससे आया था।

वह राजधानी में पहुँचकर ख़ान के सामने हाज़िर हुआ। ख़ान उसे देख बहुत ख़ुश हुआ, उसने अपने सारे अनुचरों व अंगरक्षकों को बाहर भेज दिया और अतिथि को अपने पास बिठा लिया:

"सुनाओ, क़ादिर!"

और क़ादिर ने कहा:

"मेरे भाग्य ने मुझे तुम्हारे दुःख का कारण बता दिया। तुम इस देश पर राज कर रहे हो, और सब तुम्हें पुरुष मानकर तुम्हें ख़ान कहकर पुकारते हैं। जब कि वास्तव में तुम स्त्री हो। तुम्हारे लिए यह रहस्य छिपाये रखना मुश्किल होता है और सेना-संचालन करना, शासन चलाना अकेले तुम्हारे बस का काम नहीं है। तुम कोई योग्य पति चुन लो, फिर सुख से रहने लगोगे।"

"तुम्हारे भाग्य ने बिलकुल सच कहा, क़ादिर," ख़ान ने लजाते हुए कहा और अपनी बहुमूल्य टोपी उतार दी: काली चोटियां रंगीन क़ालीन को छूने लगीं, और क़ादिर ने देखा कि उसके सामने पूनम के चांद-सी सुन्दर लड़की खड़ी है।

ख़ानरूपी युवती शर्म से लाल होकर बोली:

"मेरा रहस्य जाननेवाले तुम पहले बांके नौजवान हो। तुम ही मेरे पति और मेरे देश के ख़ान बन जाओ!"

क़ादिर यह शब्द सुनकर स्तब्ध रह गया और होश में आने पर सिर और हाथ हिलाने लगा:

"नहीं, नहीं, मैं ख़ान नहीं बनना चाहता! मेरे भाग्य का उदय होनेवाला है।"

और वह आगे चल दिया।

बूढ़े, बुढ़िया और उनकी रूपवती बेटी ने सिर नवाकर उसका हार्दिक स्वागत किया।

"हमारे लिए क्या ख़बर लाये हो, प्यारे क़ादिर?"

"आपके लिए ख़बर यह है," क़ादिर ने उत्तर दिया, "कि पुराने ज़माने में, जिस जगह आपका खेत है, वहाँ एक धनी आदमी ने विदेशियों की लूट-मार से डरकर सोने से भरे बड़े-बड़े चालीस घड़े गाड़ दिये थे। इसी लिए आपकी ज़मीन पर कोई फ़सल नहीं उगती है। आप सोना खोदकर निकाल लीजिये और आपकी मिट्टी फिर उपजाऊ हो जायेगी, फिर आप इस इलाक़े में सबसे ज़्यादा धनी हो जायेंगे।"

ग़रीब लोग ख़ुशी से नाच उठे, हंसने लगे, रोने लगे और क़ादिर को सीने से लगाने लगे।

बूढ़ा बोला:

"तुमने हम सबको सुखी कर दिया, क़ादिर। हमारे साथ रह जाओ। सोना खोदने में हमारी मदद करो। आधा ख़ज़ाना तुम ले लो और हमारी बेटी से शादी कर लो। तुम मेरे बेटे और दामाद बन जाओ।"

क़ादिर को बूढ़ा और बुढ़िया अच्छे लगे, उनकी बेटी तो उसे और भी ज़्यादा पसन्द आयी, फिर भी वह उनके यहाँ रात बिताने को भी नहीं रुका।

"नहीं," क़ादिर ने कहा, "मेरे भाग्योदय होनेवाला है।"

और वह आगे चल दिया।

वह चलता रहा, चलता रहा – उसके जूते घिस गये, पांव चूर-चूर हो गये, बड़ी मुश्किल से सुनसान पगडण्डी पर लंगड़ाता हुआ चलता रहा। एक चट्टान देखकर वह उस पर बैठ गया और सोचने लगा:

"मेरी यात्रा का अन्त होनेवाला है, पर मेरा भाग्योदय कब होगा?"

वह बैठकर यह सोचने ही लगा था कि देखा – उसके सामने शेर खड़ा है।

"क्यों, क़ादिर," शेर बोला, "मेरे लिए सलाह या दवा लाया?"

"दवा तो मैं नहीं लाया, पर तुम्हारी बीमारी से पिण्ड छुड़ाने का एक तरीक़ा है। तुम दुनिया के सबसे मूर्ख आदमी का दिमाग़ खा लो – फ़ौरन ठीक हो जाओगे।"

"धन्यवाद, क़ादिर। मैं अब सर्वत्र ऐसे बेवकूफ़ को खोजूँगा। क्या तुम इस काम में

मेरी मदद करोगे? अच्छा, सुनाओ, तुम सफ़र में कैसे-कैसे लोगों से मिले, उनसे क्या-क्या बातें कीं। जब तक नहीं सुनाओगे, तुम्हें जाने नहीं दूँगा।"

कोई चारा न रहा। क़ादिर ने उसे बूढ़े कैराग़च के तले अपने भाग्य के साथ हुई बातचीत, ख़ानरूपी युवती और बूढ़े, बुढ़िया व उनकी रूपवती बेटी के बारे में बता दिया।

शेर की आंखें चमक उठीं, वह दांत पीसने लगा और उसकी अयाल खड़ी हो गयी। वह बोला:

"कितना मूर्ख है तू, क़ादिर! सुखी होने का इतना अच्छा मौक़ा तुझे मिला था, पर तूने उसे छोड़ दिया। तूने राज और सम्मान को ठुकरा दिया, धन और समृद्धि को ठुकरा दिया, तूने दो सुन्दर युवतियों को ठुकरा दिया... अगर मैं दुनिया के तीन चक्कर लगाऊँ, तो भी मुझे तुमसे ज़्यादा मूर्ख किसी हालत में नहीं मिलेगा। तेरे दिमाग़ से ही मेरा पेट ठीक होगा!.."

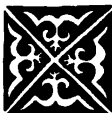
शेर दौड़कर क़ादिर पर कूदा। क़ादिर डर के मारे सिर कटे मेढ़े की तरह ज़मीन पर गिर पड़ा। और इसी से उसकी जान बच गयी: शेर सीने के बल चट्टान से टकराया और वहीं ढेर हो गया।

"मेरा भाग्य कितना अच्छा है!" क़ादिर ख़ुशी से फूला न समाता चिल्लाया। "मेरी मृत्यु निश्चित थी, पर मैं ज़िन्दा बच गया। मेरा भाग्य कितना अच्छा है!"

क़ादिर जब अपने गांव लौटकर आया, उसे कोई पहचान नहीं सका: चेहरा-मोहरा तो उसका पहले जैसा था, पर स्वभाव बिलकुल दूसरा। मानो बांके नौजवान का दूसरा जन्म हुआ हो, वह बिलकुल नया आदमी बन चुका था। वह हमेशा हंसमुख रहने लगा, सबसे नम्रतापूर्वक व्यवहार करने लगा। उसने फिर कभी कोई शिकायत भी नहीं की और किसी से ईर्ष्या भी नहीं की। अब वह सुबह से शाम तक गीत गाता मेहनत करता रहता। सब उसकी बुद्धिमत्ता और मधुर स्वभाव की प्रशंसा करते न अघाते। क़ादिर की सम्पन्नता दिन-प्रतिदिन बढ़ने लगी, उसका अपना घर बस गया और वह सुख व सम्मान के साथ जीने लगा।

"क्या हाल हैं, क़ादिर?" उसके मित्र पूछते।

"मैं दुनिया भर में सबसे ज़्यादा सुखी हूँ!" क़ादिर मुस्कराता हुआ उत्तर देता।



अक़्लमंदों की दूर बला

बहुत दिन पहले जिरेंशे-शेशेन नाम का एक ज्ञानी था। उसका ज्ञान समुद्र-सा गहरा और निस्सीम था, उसके मुख से शब्द बुलबुल के मुंह से गीत जैसे झरते थे। किन्तु अपने सारे गुणों के बावजूद जिरेंशे स्तेपी में सबसे ज़्यादा ग़रीब था। जब वह अपनी मिट्टी की झोंपड़ी में लेटता, तो उसके पैर देहली के बाहर निकले रहते, और ख़राब मौसम में हवा और पानी असंख्य छिद्रों में से होकर उसकी झोंपड़ी में आते रहते।

एक बार जिरेंशे अपने साथियों के साथ स्तेपी में जा रहा था। दिन ढलने लगा था, और घुड़सवार उजाला रहते किसी घर तक पहुँचने के लिए घोड़ों को सरपट दौड़ा रहे थे। अचानक उनके रास्ते में एक चौड़ी नदी दिखाई दी। नदी के उस पार गांव था, और इस किनारे पर कुछ स्त्रियां बोरियों में उपले इकट्ठा कर रही थीं।

उनके पास पहुँचकर घुड़सवारों ने उनसे दुआ-सलाम की और पूछा कि वे नदी कैसे पार कर सकते हैं।

तब झुण्ड में से एक किशोरी निकलकर आगे आयी, जिसे उसकी सखियां क़ाराशाश के नाम से पुकारती थीं। वह जीर्ण-शीर्ण, पैवंद लगा हुआ कुरता पहने हुई थी, पर उसका मुख अद्वितीय सौन्दर्य से दमक रहा था: उसकी आंखें सितारों जैसी थीं, मुखड़ा चांद का सा और बदन – किसी सुघड़ और सुनम्य लता सरीखा।

"दो घाट हैं," लड़की ने कहा। "जो बायें है – पास होते हुए भी दूर है; और जो दायें है – वह दूर होते हुए भी पास है।" उसने उन्हें दो पगडण्डियां दिखा दीं।

केवल जिरेंशे ही युवती के शब्दों का अर्थ समझ सका और उसने घोड़े को दायें मोड़ लिया।

कुछ समय बाद उसे घाट नज़र आ गया। वहां तल रेतीला था और पानी छिछला। वह आसानी से घोड़े पर नदी पार कर गया और बड़ी जल्दी गांव में पहुँच गया।

उसके साथियों ने निकटवर्ती घाट चुना और शीघ्र ही पछताने लगे। वे नदी के मध्य तक भी नहीं पहुँच पाये थे कि उनके घोड़े बुरी तरह काई में फंस गये। घुड़सवारों को सबसे गहरे स्थान में घोड़ों से उतरना पड़ा और लगाम थामे पैदल चलकर किनारे तक पहुँचना पड़ा। जब वे तर-बतर होकर ठिठुरते हुए गांव में पहुँचे, अंधेरा छाने लगा था।

जिरेंशे ने नुक्कड़वाले तम्बू-घर के आगे अपना घोड़ा रोक दिया। वह गांव का सबसे ग़रीब तम्बू-घर था, और वह फ़ौरन भांप गया कि वह उसी लड़की के माता-पिता का है, जिसने उन्हें घाट का रास्ता बताया था। वह वहीं अपने साथियों की प्रतीक्षा करने लगा।

बांके नौजवानों से मिलने क़ाराशाश की मां निकली और उसने उन्हें घोड़ों से उतरकर तम्बू-घर में सफ़र की थकान दूर करने को कहा। तम्बू-घर अन्दर से भी उतना ही दरिद्र था जितना कि बाहर से। गृहणी ने अतिथियों के लिए क़ालीनों के स्थान पर भेड़ की सूखी खालें फैला दीं।

कुछ समय बाद क़ाराशाश उपलों से भरी पूरी बोरी लादे तम्बू-घर में आयी। वसन्त ऋतु थी, और सूर्यास्त से पहले तेज़ बारिश हो चुकी थी। स्तेपी से सारी स्त्रियां गीले उपले लेकर आयी थीं और उस रात उनके परिवारों को बिना खाये सोना पड़ा था।

केवल क़ाराशाश सूखे उपले लेकर आयी थी। उसने अलाव जलाया, अतिथियों ने तापा और कपड़े सुखा लिये।

"तुमने अपने उपलों को बारिश से कैसे बचा लिया?" आगंतुकों ने उससे पूछा।

लड़की ने उन्हें बताया कि जब वर्षा शुरू हुई, वह उपलों की बोरी पर लेट गयी और उसे अपने बदन से ढके रखा। उसके कपड़े गीले हो गये, पर कपड़े तो चूल्हे के पास बड़ी आसानी से सुखाये जा सकते हैं। उसके लिए ऐसा करने के सिवा और कोई चारा नहीं था, क्योंकि उसका पिता गड़रिया है, रात को भूखा और तर-बतर लौटता और बिना आग के उसको बहुत परेशानी होती। अन्य स्त्रियां वर्षा के समय स्वयं बोरियों के नीचे छिप गयीं, जिससे उनके कपड़े भी भीग गये और उपले भी।

मेहमानों ने उसका जवाब सुना और उसकी बुद्धिमत्ता पर आश्चर्यचकित रह गये।

इस बीच उन्हें यह जानने की इच्छा हुई कि उन्हें खाने में क्या खिलाया जायेगा।

क़ाराशाश ने उनसे यह कहा :

"मेरे पिता ग़रीब हैं, पर मेहमाननवाज़ हैं। जब वह बाय का रेवड़ हांककर लायेंगे, तो अगर मिल गया, तो आपके लिए एक भेड़ काटेंगे, और अगर नहीं मिला, तो – दो भेड़ें।"

जिरेंशे के अलावा और कोई लड़की की बात का अर्थ न समझ सका, सबने उसे मज़ाक़ समझा।

क़ाराशाश का पिता आया। अपने तम्बू-घर में अजनबियों को देखकर वह बाय से बिन बुलाये अतिथियों की ख़ातिरदारी करने के लिए भेड़ मांगने भागा।



बाय ने उसे बिना कुछ दिये भगा दिया।

तब गड़रिये ने अपनी एकमात्र भेड़ काटी, जो शीघ्र ही ब्यानेवाली थी, और उसके मांस से आगंतुक बांके नौजवानों के लिए स्वादिष्ट बेसबरमाक* पकाया।

मेहमान तभी जाकर क़ाराशाश के शब्दों का अर्थ समझा।

खाना खाते समय जिरेंशे क़ाराशाश के सामने बैठा था। उसकी सुन्दरता और बुद्धिमत्ता पर मुग्ध होकर उसने, इस बात का संकेत देते हुए कि उसे उससे प्रगाढ़ प्रेम हो गया है, अपना हाथ सीने पर रखा।

क़ाराशाश ने, जो उस पर बराबर नज़र रखे हुए थी, उसकी यह हरकत देख ली और अपनी उंगलियों से आंखों का स्पर्श किया : वह इस प्रकार यह कहना चाहती थी कि युवक की भावना उसकी दृष्टि से छिपी नहीं रही है।

तब जिरेंशे ने, यह पूछने की इच्छा से कि कहीं उसका पिता उसके महर में इतने जानवर तो नहीं मांगेगा, जितने कि उसके सिर पर बाल हैं, अपने बालों पर हाथ फेरा।

क़ाराशाश ने यह संकेत देते हुए कि उसका पिता उसे उतने जानवरों के बदले में भी नहीं देगा, जितने कि भेड़ की खाल पर बाल हैं, उस भेड़ की खाल पर हाथ फेरा, जिस पर वह बैठी थी।

अपनी ग़रीबी को याद करके जिरेंशे ने उदासी से सिर झुका लिया।

युवती को उस पर दया आ गयी। उसने खाल का कोना उलटकर उंगलियों से उसकी चिकनी सतह को छुआ। इस प्रकार उसने जिरेंशे को समझा दिया कि योग्य वर मिलने पर उसका पिता उसका विवाह बिना महर के भी कर सकता है।

गड़रिया युवक-युवती के मौन वार्तालाप को बराबर देख रहा था। वह समझ गया कि उन्हें एक दूसरे से प्रेम हो गया है, और उसे यह विश्वास हो गया कि जिरेंशे उतना ही बुद्धिमान है, जितनी उसकी पुत्री। इसलिए जब जिरेंशे ने उसे क़ाराशाश से विवाह करने की इच्छा प्रकट की, तो वह सहर्ष इसके लिए तैयार हो गया।

तीन दिन बाद जिरेंशे नव-वधू को लेकर अपने गांव आ गया।

रूपसी व बुद्धिमान क़ाराशाश की ख्याति शीघ्र ही सारी स्तेपी में फैल गयी और अन्त में ख़ान के महल में भी पहुँच गयी।

वज़ीरों की कपटपूर्ण बातें सुनकर कि दुनिया में क़ाराशाश से सुन्दर और बुद्धिमान और कोई औरत नहीं है, ख़ान को ग़रीब जिरेंशे से डाह होने लगी और उसने उससे उसकी पत्नी छीन लेने की ठान ली।

एक बार ख़ान का सन्देशवाहक सरपट घोड़ा दौड़ाता जिरेंशे के पास आया और उसने ख़ान की ओर से उसे अपनी पत्नी के साथ तुरन्त महल में हाज़िर होने का हुक्म दिया।

---

* बेसबरमाक – कज़ाख़ों का मांस से बना राष्ट्रीय खाना।

उनके पास कोई चारा नहीं रहा और वे दोनों चल पड़े।

ख़ान ने जैसे ही क़ाराशाश को देखा, उसने किसी भी क़ीमत पर उसे अपनी पत्नी बनाने की ठान ली और जिरेंशे को अपनी सेवा में रहने की आज्ञा दे दी।

जिरेंशे दिन भर ख़ान के आंखें चौंधियानेवाले महल में टहल बजाता और शाम को थका-हारा अपनी झोंपड़ी में क़ाराशाश के पास लौट आता।

और वहाँ वह स्वतंत्रता का आनन्द लेता हुआ अपनी प्रिय पत्नी की गोद में सिर रखकर कहता था:

"अपनी झोंपड़ी में रहने में कितना सुख है! यह ख़ान के महल से कहीं लम्बी-चौड़ी लगती है!"

जब कि उस समय उसके पैर देहली के बाहर निकले हुए थे।

समय बीतता रहा, पर ख़ान किसी न किसी तरह जिरेंशे को मरवाकर क़ाराशाश को हथियाने के बारे में तरकीबें बराबर सोचता रहा। उसने कई बार जिरेंशे को ख़तरनाक और मुश्किल काम सौंपे, पर वह हर बार बड़ी जल्दी और चतुराई से उन्हें कर देता था और उसे मौत की सज़ा देने का कोई बहाना न मिल रहा था।

एक बार ऐसा हुआ कि ख़ान अपने अंगरक्षकों के साथ स्तेपी से गुज़र रहा था। हवा चल रही थी। स्तेपी में पीरीकती-पोल्ये * लुढ़क रहा था। ख़ान ने जिरेंशे से कहा:

"इस पीरीकती-पोल्ये का पीछा करके उससे पूछो कि वह कहाँ से कहाँ तक लुढ़क रहा है। ख़बरदार रहना, अगर तुम उसका जवाब न लाये, तो तुम्हारा सिर अलग कर दिया जायेगा।"

जिरेंशे पीरीकती-पोल्ये के पीछे भागा, उसने उसके पास पहुँच उसे बरछी से बेध दिया और थोड़ी देर रुकने के बाद वापस लौट आया।

ख़ान ने पूछा:

"क्यों, पीरीकती-पोल्ये ने क्या कहा?"

जिरेंशे ने उत्तर दिया:

"आलीजाह, पीरीकती-पोल्ये ने आपको सलाम कहलवाया है और मुझसे यह कहा है: 'मैं कहाँ से कहाँ तक लुढ़कता रहता हूँ – हवा को मालूम रहता है, कहाँ रुकता हूँ – खाई को मालूम रहता है। यह हर किसी को मालूम है। इतना साफ़ है कि या तो तुम बेवक़ूफ़ हो, जो मुझसे ऐसे सवाल पूछ रहे हो, या वह बेवक़ूफ़ है, जिसने तुम्हें मुझसे यह पूछने भेजा है'।"

---

* पीरीकती-पोल्ये: स्तेपी में उगनेवाला एक प्रकार का पुष्पगुच्छी, जो हवा के साथ लुढ़कता रहता है।

ख़ान आग-बबूला हो उठा, पर ख़ून का घूंट पीकर रह गया और कुछ नहीं बोला, लेकिन जिरेंशे से वह मन ही मन और अधिक द्वेष रखने लगा।

दूसरी बार ख़ान ने जिरेंशे को हुक्म दिया कि वह उसके सामने हाज़िर हो, पर तब न दिन होना चाहिए, न रात, वह न पैदल हो, न घोड़े पर सवार, न महल के अंदर आये, न ही महल के बाहर रहे, ऐसा न करने पर उसने उसे मौत की सज़ा देने की धमकी दी।

आरम्भ में जिरेंशे उदास हो गया, किन्तु बाद में उसने क़ाराशाश के साथ सलाह मशविरा किया और उन दोनों ने इस कठिन समस्या का समाधान खोज लिया।

जिरेंशे ख़ान के सामने भोर में बकरे पर सवार होकर पहुँचा और ठीक दरवाज़े की चौखट पर रुक गया।

ख़ान की चालबाज़ी फिर बेकार रही। तब उसने एक नयी चाल चली।

जब पतझड़ आयी, उसने जिरेंशे को अपने पास बुलवाया और उसे चालीस मेढ़े सौंपकर बोला:

"मैं तुम्हें ये चालीस मेढ़े दे रहा हूँ, तुम्हें सारे जाड़े इनकी संभाल करनी है। लेकिन याद रखो: अगर वसन्त तक इन्होंने भेड़ों की तरह बच्चे नहीं दिये, तो मैं तुम्हारा सिर कटवा दूँगा।"

जिरेंशे मेढ़े हांकता हुआ बहुत उदास घर लौटा।

"आपको क्या हुआ?" क़ाराशाश ने उससे पूछा। "आप इतने उदास क्यों हैं?"

जिरेंशे ने ख़ान की मूर्खतापूर्ण आज्ञा के बारे में उसे बता दिया।

"प्रियतम," क़ाराशाश कह उठी, "इतनी मामूली-सी बात के लिए उदास होने की क्या ज़रूरत है! सर्दी आने तक सारे मेढ़ों को काटकर खा डालते हैं, जब वसन्त आयेगा, खुद देख लेना, सब अपने-आप ठीक हो जायेगा।"

और जिरेंशे ने वैसा ही किया, जैसा क़ाराशाश ने कहा।

वसन्त आया।

एक दिन ख़ान के क़ासिद ने जिरेंशे की झोंपड़ी का दरवाज़ा खटखटाया और एलान किया कि उसके पीछे-पीछे खुद ख़ान घोड़े पर आ रहा है: वह जानना चाहता है कि उसके मेढ़े ब्याये या नहीं।

जिरेंशे ने, यह महसूस करके कि अब उसकी मौत निश्चित है, सिर लटका लिया।

पर क़ाराशाश बोली:

"दिल छोटा मत करो, प्रियतम। तुम स्तेपी में जाकर छिप जाओ और शाम तक नज़र मत आओ। मैं खुद ख़ान से मिलूँगी।"

जिरेंशे स्तेपी में चला गया, और क़ाराशाश झोंपड़ी में रुक गयी। कुछ ही देर में उसे घोड़े की टापें और भयावनी आवाज़ सुनाई दी:

"ऐ, घर में कौन है! आवाज़ दो!"

क़ाराशाश ख़ान की आवाज़ से उसे पहचान गयी। उसने झोंपड़ी से निकलकर उसे झुककर सलाम किया।

"तुम्हारा पति कहां है? मेरा स्वागत उसने क्यों नहीं किया?" ख़ान ने ग़ुस्से में कहा।

क़ाराशाश ने उसे नम्रतापूर्वक उत्तर दिया:

"ज़हांपनाह, मेरे अभागे पति पर दया कीजिये: वह आपको ख़ुश करने के लिए घर से बाहर गये हैं। उन्होंने जैसे ही सुना कि आप हमसे मिलने आ रहे हैं, उनका दिल कचोटने लगा, क्योंकि हम ग़रीब हैं और हमारे घर में बड़े मेहमानों की ख़ातिरदारी के लिए कुछ नहीं है। इसीलिए मेरे पति जल्दी से अपनी पालतू बटेर का दूध निकालने और उसके दूध से आपके लिए क़िमिज़ तैयार करने स्तेपी में चले गये। आप हमारी झोंपड़ी में तशरीफ़ लाइये, जहांपनाह, मेरे पति जल्दी ही लौट आयेंगे और आपकी काफ़ी अच्छी तरह ख़ातिरदारी करेंगे।"

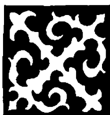
ख़ान ग़ुस्से से पागल हो उठा।

"तू झूठ बोलती है, नालायक़ औरत!" वह चिल्लाया। "कहीं बटेरों का भी दूध दोहा जाता है!"

"आप हैरान क्यों होते हैं, हुज़ूरे आलम?" क़ाराशाश ने ऐसे कहा, जैसे कुछ हुआ ही न हो। "क्या आपको नहीं मालूम कि जिस देश में बुद्धिमान शासन करता है, वहाँ इससे बढ़कर भी चमत्कार होते हैं? आपके ही चालीस मेढ़े आजकल ब्यानेवाले नहीं हैं क्या?"

ख़ान समझ गया कि वह मामूली औरत उसका मज़ाक़ उड़ा रही है। उसकी समझ में नहीं आया कि वह शर्म के मारे कहाँ मुँह छिपाये और वह फ़ौरन घोड़ा मोड़कर उस पर चाबुक बरसाता हुआ आँखों से ओझल हो गया।

उस दिन के बाद उसने जिरेंशे और क़ाराशाश को कभी परेशान नहीं किया और वे अपने अन्तिम दिनों तक सुख से जीते रहे।



ख़ान जानीबेग का घोड़ा

ख़ान जानीबेग के पास एक नसलदार घोड़ा था। उसे घोड़ा नहीं, तूफ़ान कहना चाहिए। ख़ान को उस पर बहुत गर्व था और वह उसे दुनिया में सबसे ज़्यादा प्यार करता था। वह तेज़ घोड़ा एक बार बीमार हो गया। ख़ान दुःखाकुल हो उठा। उसने सारे काम-काज और रंग-रलियां छोड़ दिये, न सोता था, न खाता था, न पीता था। उसकी इस धमकी की ख़बर सबको हो गयी :

"अगर किसी ने मुझे यह बताने का दुःसाहस किया कि मेरा प्यारा घोड़ा मर गया है, तो मैं उसके मुंह में कील ठोक दूंगा!"

दरबारियों में आतंक छा गया। ख़ान के नौकरों की ऊपर की सांस ऊपर और नीचे की नीचे रह गयी। साईस दिन-रात घोड़े के पास रहने लगे। लेकिन घोड़ा लड़खड़ाकर गिरा और मर गया। अब वे क्या आशा कर सकते थे? सब अपनी मौत का इन्तज़ार करने लगे। पति पत्नियों से विदा लेने लगे, माता-पिता – सन्तानों से।

तब बुद्धिमान जिरेंशे-शेशेन ख़ान के पास गया। ख़ान उन्मादपूर्ण दृष्टि से उसे घूरने लगा :

"तुम मुझसे घोड़े के बारे में बात करना चाहते हो?"

"जी, जहांपनाह।"

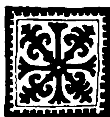
"घोड़े को आख़िर क्या हुआ है? जवाब दो!"

"हुज़ूरे आलम! आप निश्चिन्त रहें। घोड़े को कुछ नहीं हुआ है। वह बिलकुल पहले जैसा ही है, बस चारा मुंह में नहीं लेता है, आँखें नहीं खोलता है, न पैर चलाता है और न ही दुम हिलाता है।"

"इसका मतलब है मेरा घोड़ा मर गया!" ख़ान चिल्लाया।

"सचमुच यही बात है, हुज़ूरे आलम! लेकिन आप इस बात को ध्यान में रखिये कि वह निषिद्ध शब्द, जिसके लिए आपने प्राण-दण्ड देने की धमकी दी थी, मेरे नहीं, आपके मुँह से निकला है। जहाँ तक मैं सोचता हूँ, आप ख़ुद को प्राण-दण्ड नहीं देना चाहेंगे।"

इस प्रकार बुद्धिमान जिरेंशे ने अपनी चतुराई की बदौलत ख़ान के कोप से अपने आप को भी बचा लिया और दूसरों को भी।



लोहार और उसकी पतिव्रता पत्नी

बहुत पुराने ज़माने की बात है। एक शहर में एक कुशल लोहार रहता था। उसके हाथ हर ऐसी वस्तु को गढ़ने में सक्षम थे, जिसकी कल्पना मानव मस्तिष्क कर सकता था – केवल लोहार व उसकी पत्नी के लिए भरपेट रोटी कमाने में असमर्थ थे। उस शहर के लोग बहुत ग़रीब थे और लोहार कहीं काम न मिल पाने के कारण सबसे ज़्यादा अभाव से पीड़ित रहता था। पर वह कभी दिल छोटा नहीं करता था, हमेशा अपने साथियों के साथ हंसी-मज़ाक़ करता और गीत गाता रहता था, पर चिन्ताओं के कारण उसका दिल डूबा जा रहा था। वह स्वयं तो हर तरह की मुसीबत झेलने को तैयार था, पर अपनी युवा पत्नी को, जो बहुत सुन्दर थी, जैसी सौ वर्ष में एक बार पैदा होती है, अभाव में तड़पते देख उसका दिल दुखता था। अचानक लोहार के दिमाग़ में कमाई करने के लिए राजधानी जाने का विचार आया, जहाँ शायद धनी लोगों को उसकी बनाई चीज़ों की ज़रूरत हो सकती थी।

पत्नी से विदा लेते हुए उसने कहा :

"मेरी जान, मैं तीन बरस के लिए परदेस जा रहा हूँ। क्या फिर मुलाक़ात होने तक तुम मुझे याद रखोगी? मेरे साथ विश्वासघात तो नहीं करोगी?"

रूपवती ने ज़मीन पर झुककर एक नीला फूल तोड़ा और उसे पति को देते हुए बोली :

"प्रिय, यह फूल लो और इसे संभालकर रखो, मैं भी पतिव्रत-धर्म का पालन वैसे ही करती रहूँगी। तुम कहीं भी क्यों न रहो, कैसी भी यात्रा पर क्यों न गये हो, इतना यांद रखो : जब तक फूल नहीं मुरझायेगा, तुम्हारे प्रति मेरा प्रेम भी नहीं मुरझायेगा ..."

राजधानी में पहुँचकर लोहार रास्ते में एक चायख़ाने में एक प्याली चाय पीने गया। वहाँ अनेक ग्राहकों के बीच उसे तीन ठाठदार कपड़े पहने आदमी नज़र आये, जो कुछ

खा-पी नहीं रहे थे, मौन बैठे हुए थे, मानो उन्हें कोई दुःख साल रहा हो। आगंतुक को देखकर वे उसको इस तरह से एकटक घूरने लगे कि लोहार परेशान हो उठा।

"आप मुझे ऐसे क्यों देख रहे हैं, सज्जनो!" लोहार ने बात छेड़ी। "मैं ग़रीब हूँ, पर इमानदार आदमी हूँ। राजधानी में दूर-दराज़ के इलाक़े से काम ढूँढ़ने आया हूँ। मैं कुशल लोहार हूँ, और मुझे जो काम सौंपेगा, कभी नहीं पछतायेगा कि उसका वास्ता मुझ से पड़ा।"

तीनों पुरुषों ने एक दूसरे की तरफ़ देखा और उनमें से सबसे बड़े ने लोहार को बुलाकर मित्रतापूर्वक कहा:

"हमारा एक-एक शब्द ध्यानपूर्वक सुनो, लोहार। हम तीनों ख़ान के वज़ीर हैं, जिसकी ख़बर चायख़ाने के मालिक को नहीं है और होनी भी नहीं चाहिए। हम समय काटने या कुतूहलवश नहीं बल्कि एक महत्त्वपूर्ण कार्य करने के लिए बाज़ारों, कारवां-सरायों, चायख़ानों और भीड़-भाड़ की अन्य जगहों के चक्कर काट रहे हैं। ख़ान ने हमें उसके लिए सोने और चांदी का महल बनवाने का हुक्म दिया है। उसने अपनी इच्छा पूरी होने पर इनाम देने का वादा किया है और समय पर महल तैयार न करने पर मौत की धमकी दी है। हम बड़ी उलझन में फंस गये हैं, क्योंकि समय बीतता जा रहा है, लेकिन हम सारी राजधानी में किसी तरह ऐसा कारीगर नहीं खोज पा रहे हैं, जो इतना कठिन कार्य करने को तैयार हो। अगर तुम काम करके हमारी सहायता न कर सकते, तो क्या कम-से-कम सलाह तो दे सकते हो?"

लोहार का चेहरा ख़ुशी से खिल उठा और वह बोला:

"बुद्धिमान वज़ीरो, ख़ुद क़िस्मत ने मुझे इस चायख़ाने की राह दिखाई है। आप मुझे आवश्यक सोना और चाँदी दीजिये, सत्तर मददगार दीजिये और मैं आपको निश्चित समय पर ऐसा महल तैयार कर दूँगा, जैसा आज तक किसी ख़ान के पास था ही नहीं।

लोहार ने उसी दिन काम शुरू कर दिया। भट्ठियां दहकने लगीं, हथौड़ों तले मूल्यवान धातु ठनठनाने लगे और चतुर कामगार बड़े कारीगर के निर्देशानुसार काम करते हुए इधर-उधर भागने लगे। नियत समय पर महल बनकर तैयार हो गया। वास्तव में उससे पहले कभी इतने सुन्दर भवन ने किसी राजधानी की शोभा नहीं बढ़ाई थी: उसकी सुन्दरता की तुलना में उस सोने और चांदी का कुछ मूल्य न था, जिससे उसकी दीवारें और छत बनाई गयी थीं।

ख़ान ने जब नया महल देखा, वह बच्चों की तरह आनन्दोल्लास से चिल्ला उठा और उसने तुरन्त अपने वज़ीरों का वेतन तिगुना कर दिया। फिर वह बोला:

"मैं धरती पर इस अलौकिक चमत्कार को कर दिखानेवाले कारीगर को देखना चाहता हूँ!"

लोहार को लाया गया। ख़ान ने उसे अपने बेटे से भी अधिक स्नेहपूर्वक गले लगा लिया, और उसके मुँह से उस समय ऐसे शब्द निकले, जो किसी ने पहले कभी नहीं सुने थे।

"आज से तुम," ख़ान ने कहा, "मेरे घनिष्ठ सलाहकार और दोस्त हुए। मैं चाहता हूँ कि तुम्हारी प्रतिभा और कौशल का उपयोग न तो मेरी प्रजा करे और न ही कोई विदेशी बादशाह। तुम इस सुन्दर महल में मेरे पास रहोगे और केवल मेरे लिए काम करोगे।"

उसी क्षण से वज़ीर, जो हालाँकि अपने जीवन व अथाह समृद्धि के लिए लोहार के आभारी थे, महान कारीगर से मन ही मन जलने लगे, उससे द्वेष रखने लगे और अकेले व तीनों मिलकर मनगढ़ंत बातों से या चुग़ली खाकर उसे किसी तरह बरबाद करने की सोचने लगे।

लोहार महल में रहने लगा। वह रोज़ाना ख़ान को कोई न कोई विचित्र वस्तु लाकर देता था। इसके अलावा उसका हर नया उपहार पहले उपहार से अधिक सुरुचिपूर्ण और बारीक काम का होता था। ख़ान का लोहार के प्रति लगाव ज्यों-ज्यों बढ़ता गया, त्यों-त्यों वज़ीर उससे अधिक घृणा करने लगे। वे सरलहृदय कारीगर की हर हरकत पर नज़र रखने लगे और शीघ्र ही उन्होंने देख लिया कि वह समय-समय पर अपनी क़मीज़ के अंदर से कोई नीला फूल निकालता है, उसे देर तक देखता हुआ कुछ बुदबुदाता है और हौले से चूमकर वापस सावधानीपूर्वक सीने में छिपा लेता है।

वज़ीरों ने ख़ान के पास जाकर कहा:

"हुज़ूरे आलम! आपका चहैता लोहार जादूगर है। उसने महल किसी जादूई फूल की सहायता से बनाया है और उसी की बदौलत वह आपका कृपापात्र बन गया है। उस फूल को वह लोगों की नज़रों से छिपाकर रखता है। हमें लगता है कि यह दुष्ट आपके प्राण लेने के लिए आपके विरुद्ध कोई षड्यंत्र रच रहा है।"

ख़ान शंकाशील और गरम मिज़ाज था। उसने लोहार को तुरन्त बुलवाने का हुक्म दिया, और जब वह आ गया, तो उस पर ग़ुस्से में बरस पड़ा:

"तुम मुझसे छिपाकर कौन-सा फूल सीने से लगाये रखते हो? अगर अपनी जान बचाना चाहते हो, तो सच-सच बताओ!"

लोहार तुरन्त भांप गया कि उसका रहस्य किसने खोला है। उसने न मुरझानेवाला फूल निकालकर ख़ान को अपनी रूपवती पत्नी तथा उसकी विदाई के समय कही सारी बातें ईमानदारी से बता दीं।

"यह ढीठ अपने मालिक के सामने झूठ बोलने का साहस कर रहा है!" बड़े वज़ीर ने लोहार की बात काट दी। "हमें अच्छी तरह मालूम है कि इसकी पत्नी इसे कभी का भूल चुकी है और किसी भी आदमी से ख़ुशी से शादी करने को तैयार बैठी है। दुनिया में ऐसी कोई औरत नहीं है, जो धन और उपहार के लालच में न आये। अगर जहांपनाह इजाज़त दें, तो मैं यह साबित कर सकता हूँ।"

खान बोला :

"ठीक है।"

उसने लोहार को पहले वज़ीर के सबूत लेकर लौट आने तक बिना कोई हानि पहुँचाये हिरासत में ले लेने का हुक्म दे दिया।

पहला वज़ीर सरपट घोड़ा दौड़ाता उस शहर में पहुँचा, जहाँ लोहार की पत्नी रहती थी, उसने वहाँ किसी संदिग्ध व्यक्ति से जान-पहचान कर ली और उसकी मुट्ठी गरम करके उसे अपनी योजना बतायी।

वह व्यक्ति बोला :

"लोहार की पत्नी जैसी पतिव्रता और प्रेममयी स्त्री इस शहर में ही क्या, सारी दुनिया में भी नहीं मिलेगी। इस मामले में केवल जालमाउइज़-केम्पीर तुम्हारी मदद कर सकती है।" और वह बिना कल पर टाले दुष्ट बुढ़िया को वज़ीर के पास ले आया।

जालमाउइज़-केम्पीर नकियाती हुई बोली :

"अजनबी, अगर तुम्हारे पास एक हज़ार अशरफ़ियां हों, तो मैं तुम्हें उस औरत से मिलाने के लिए अपनी सारी चालाकी से काम लेने को तैयार हूँ।"

एक हज़ार अशरफ़ियां लेकर जालमाउइज़-केम्पीर ने आधी अपने पास रख लीं और आधी लोहार की पत्नी को लाकर देती हुई बोली :

"बेटी, तुम्हारा पति परदेस की खाक छानता फिर रहा है और शायद तुम्हें भूल भी चुका होगा। ये रक़म तुम्हारे छोटे-मोटे ख़र्चों के लिए एक ऐसे भले आदमी ने तुम्हें भिजवाई है, जो तुम्हें बहुत प्यार करता है। वह नामी और धनी है, और अगर तुम उससे ज़रा प्रेम से पेश आओ, तो वह तुम्हें सोने में पीली कर देगा और सुखी बना देगा।"

युवा स्त्री ने उत्तर दिया :

"नेक मौसी! उस आदमी को मेरे पास ले आओ। मैं अपना फाटक खुला रखूँगी। उसे रास्ता दिखाकर ख़ुद घर चली जाना। मैं उसका वैसा ही स्वागत करूँगी, जैसे के वह योग्य होगा।"

बुढ़िया वज़ीर से मिलकर बोली :

"लोहार की बीवी ने झट से रक़म लेकर रख ली। वह हर बात के लिए तैयार है। आज की शाम तुम उसके साथ बिताओगे। अब मेरी मेहनत की क़ीमत चुका दो।"

वज़ीर अपनी सफलता पर इतना खुश हुआ कि उसने मुट्ठी-भर अशरफ़ियां बुढ़िया के हाथ में ठूंस दीं।

जब अंधेरा हुआ, वज़ीर लोहार के घर में पहुँच चुका था। रूपवती ने मुस्कान और हंसी-मज़ाक़ के साथ अतिथि का स्वागत किया, उसे चूल्हे के आगे बिठाया और उसके सामने क़िमिज़, गोश्त और मिठाइयां परोस दिये। किन्तु वज़ीर ने पुलकित होकर खाने की तरफ़ हाथ बढ़ाया ही था कि ज़ोर से फाटक खटखटाने की आवाज़ आयी।

"यह क्या हुआ?" वज़ीर ने घबराकर पूछा।

लोहार की पत्नी को खटखटाहट का कारण भली-भांति मालूम था: उसने दिन में ही फाटक पर पति का हथौड़ा लटका दिया था, और उस समय रात्रिकालीन हवा उसे हिलाकर लकड़ी से टकरा रही थी। किन्तु स्त्री ने ख़ुद भी बुरी तरह डरने का दिखावा किया और हाथ पर हाथ मार जल्दी से बोली:

"आदरणीय अतिथि, यह ज़रूर मेरा भाई दरवाज़ा खटखटा रहा होगा। वह ज़्यादा देर नहीं रुकेगा। कृपा करके एक मिनट के लिए पासवाले कमरे में छिप जाइये।"

वज़ीर ने देहली लांघी ही थी कि स्त्री ने उसे पीछे से धक्का दे दिया, और वह सिर के बल अंधेरे गड्ढे में गिर गया। ऊपर से लोहार की पत्नी ने ज़ोरदार ठहाका लगाया।

उसी समय शाही महल में हिरासत में बंद लोहार ने नीले फूल को निकालकर देखा: फूल ताज़ा और ख़ुशबूदार था, वैसा ही जैसा कि प्रिया से बिछुड़ने के दिन था। और लोहार ने उसे हौले से चूम लिया।

अगले दिन लोहार की पत्नी ने गड्ढे में भेड़ के ऊन का ढेर डाल दिया और अपने क़ैदी को उसे धुनने का आदेश दिया।

"देखो, काम लगन से करना, वरना दोपहर में जई की रोटी नहीं मिलेगी!"

वज़ीर को खाने में जई की रोटी पाते गड्ढे में काम करते कई दिन गुज़र गये, जब कि ख़ान उसका इन्तज़ार करता करता अन्त में ऊब उठा।

एक दिन उसने दूसरे वज़ीर से कहा:

"तुम्हारे दोस्त की मेरे सामने आने की हिम्मत नहीं हो रही है, क्योंकि लगता है वह कुछ नहीं कर पाया है। अगर तुम लोगों ने कारीगर की झूठी शिकायत की है, तो तुम्हारी ख़ैर नहीं!"

वज़ीर डर के मारे सन्न रह गया।

"जहांपनाह," उसने कहा, "हमने आपको बिलकुल सच्ची बात बतायी है। आप हुक्म दें, तो मैं इसे साबित करके दिखा दूँ।"

ख़ान बोला:

"ठीक है!"

कुछ समय बीतने पर दूसरे वज़ीर के साथ भी वैसा ही हुआ, जैसा कि पहले वज़ीर के साथ हुआ था। धन व्यर्थ ख़र्च करके वह भी गड्ढे में पहुँच गया। गड्ढे में उसकी दृष्टि भेड़ का ऊन धुन रहे आदमी पर पड़ गयी।

"तुम कौन हो?" दूसरे वज़ीर ने पूछा।

"और तुम कौन हो?" पहले वज़ीर ने उससे पूछा।

तब वे एक-दूसरे को पहचान गये और एक दूसरे को अपनी अप्रत्याशित दुर्गति के लिए दोषी ठहराते हुए आपस में झगड़ने लगे। जब कि लोहार की पत्नी उनको झगड़ते

देख ठहाके लगाती रही। फिर उसने गड्ढे में चरखा उतार दिया और दूसरे वज़ीर को ऊन कातने का आदेश दिया।

"याद रखो, काम ढंग से नहीं किया, तो दोपहर में जई की कोटी नहीं मिलेगी!"

उधर उस समय लोहार ने नीला फूल निकालकर देखा, वह पूर्ववत् ताज़ा और सुगंधित था।

ख़ान ने इस बीच दूसरे वज़ीर के लौटने की प्रतीक्षा किये बिना तीसरे वज़ीर को लोहार की पत्नी के पास भेजा।

"अगर तुम तीन सप्ताह में मेरे सामने हाज़िर नहीं हुए, तो तुम और वे दोनों नीच फांसी से नहीं बच सकोगे।"

तीसरा वज़ीर खिन्नता और घबराहट में अपने अनिष्ट का पूर्वाभास पाकर सफ़र पर निकल पड़ा और शीघ्र ही वह भी बिना कोई ख़ुशी हासिल किये नम गड्ढे में अपने मित्रों से जा मिला। तीनों, जो कुछ हुआ, उसके लिए एक दूसरे को दोषी ठहराने लगे। जब कि लोहार की पत्नी गड्ढे के ऊपर खड़ी ठहाके लगाती रही।

नये क़ैदी को स्त्री से एक करघा और यह निर्देश मिला:

"तुम्हें तीन सप्ताह के अन्दर एक सुन्दर क़ालीन बुनकर देना है। जल्दी से काम में जुट जाओ और आलस मत करो: क्योंकि तुम्हें दोपहर में जई की रोटी मिलना तुम्हीं पर निर्भर करता है..."

उधर एक दिन ख़ान ने लोहार को अपने सामने पेश करने का हुक्म दिया।

"मेरे तीनों वज़ीरों को तुम्हारी पत्नी के पास गये हुए काफ़ी अरसा बीत गया, पर अभी तक वे लौटकर नहीं आये हैं। मुझे सन्देह है कि तुम्हारी पत्नी ने उन्हें अपने जादू से मार डाला है। अगर ऐसा है, तो मैं तुम्हारा और उसका भी सिर कटवा दूँगा। लेकिन अगर वज़ीरों ने तुम पर झूठा लांछन लगाया है, तो उन्हें इससे भी कड़ी सज़ा मिलेगी। मैं ख़ुद तुम्हारे शहर जा रहा हूँ। तुम्हें मेरे साथ सफर पर चलना पड़ेगा।"

कुछ समय बाद ख़ान का भव्य कारवां लोहार के शहर में प्रवेश कर रहा था। अपने घर के निकट पहुँचने पर लोहार ने ख़ान से अपनी पत्नी को इतने सम्मानित अतिथि के पधारने की ख़बर देने की आज्ञा मांगी।

ख़ान ने सहमति प्रकट की और लोहार अन्दर दाखिल हो गया।

पति को देखते ही रूपवती उसके सीने से लग गयी और उन्होंने एक मिनट में ही एक दूसरे को सारी आपबीती सुना दी। इसके बाद लोहार को अंगरक्षकों के साथ ससम्मान अपने घर में ले आया।

स्त्री ने उच्च अतिथि का सिर नवाकर अभिनन्दन किया। वह इतनी आकर्षक थी, उसका व्यवहार इतना आत्मसम्मानपूर्ण था और बातें इतनी बुद्धिमत्तापूर्ण थीं कि ख़ान का

हृदय तुरन्त द्रवीभूत हो उठा और उसने एक साधारण गृहणी का आतिथ्य कृपापूर्वक स्वीकार कर लिया।

ख़ूबसूरत क़ालीन पर क़िमिज़ की प्याली लिये बैठे ख़ान ने पूछा :

"ऐ ख़ातून, क्या तुम्हारे पति की अनुपस्थिति में तुम्हारे पास मेरे तीन वज़ीर आये थे?"

"आपकी उम्र दराज़ हो, जहांपनाह! वज़ीरों की जगह तो अपने ख़ान के दरबार में होती है। वे ग़रीब और अकेली स्त्री के घर में क्यों आए?"

ख़ान चुप हो गया और अपनी व्याकुलता छिपाने के लिए क़ालीन के पेचीदा बेल-बूटों को ध्यान से देखने लगा।

"तुम्हारे पास यह इतना बढ़िया क़ालीन कहाँ से आया?"

"जहांपनाह, यह क़ालीन मेरी नौकरानियों ने बुना है।"

ख़ान की भौंहें सिकुड़ गयीं।

"नौकरानियों ने? लेकिन तुम्हारा पति तो मुझसे कहता था कि वह तुम्हें बहुत ग़रीबी की हालत में छोड़ गया था। नौकरानियाँ रखने के लिए तुम्हारे पास पैसा कहाँ से आया?"

"मेरी नौकरानियां तनख़्वाह नहीं मांगतीं, दिन में जई की एक रोटी के बदले में वे मेरे सारे काम करती हैं।"

"इस बात पर विश्वास करना असम्भव है," ख़ान की भौंहें तन गयीं।

"जहाँपनाह, आप अभी अपनी आँखों से मेरी नौकरानियों को देख लेंगे और वे मेरी बात की पुष्टि कर देंगी," स्त्री ने कहा और दरवाज़े के पीछे ओझल हो गयी।

उसने तीनों वज़ीरों को गड्ढे में से निकालकर फुसफुसाकर कहा :

"मुसीबत आ गयी – मेरा पति लौट आया! अगर उसने आपको मेरे घर में देखा, तो आपका काम तमाम हो जायेगा। मैंने आपको आपकी धृष्ठता की सज़ा दी है, पर मैं आपकी मृत्यु नहीं चाहती। यह उस्तरा लीजिये और जल्दी से अपनी दाढ़ी-मूँछ साफ़ कर लीजिये, ये लीजिये मेरे पुराने कपड़े, बिना देर लगाये इन्हें पहन लीजिये, फिर मैं आपको अपनी सहेलियाँ बताकर घर से बाहर कर दूँगी।"

वज़ीरों ने बिना चूँ किये औरत की बात मान ली। तब उसने उन्हें एक दूसरे का हाथ पकड़ने को कहा और उन्हें उस कमरे में ले आयी, जहाँ ख़ान अपने अंगरक्षकों से घिरा बैठा था।

भयानक शासक को अपने सामने देखते ही वज़ीर स्तब्ध रह गये, जब कि ख़ान हैरानी से उन्हें देर तक देखता रहा और अन्त में बोला :

"कितनी अजीब नौकरानियाँ हैं! क़द और चेहरे से मर्द लगती हैं, पर पहनावे से – औरतें! मुझे इनके चेहरे जाने-पहचाने लगते हैं। कौन हैं ये ऐयार?"

"यही हैं वे," पत्नी की ओर से लोहार ने कहा, "जिन्होंने आपसे मेरी झूठी शिकायत की और मेरी पतिव्रता पत्नी पर लांछन लगाया। तथ्य यही है, मेरे हुज़ूर।"

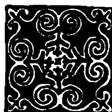
वज़ीर फ़ौरन घुटनों के बल गिर पड़े और उन्होंने अपनी सारी काली करतूतें स्वीकार कर लीं।

ख़ान आरम्भ में उनकी बात गुस्से में सुनता रहा, पर जब वे लोहार के घर में हुई अपनी दुर्गति के बारे में बताने लगे, तो उसके होंठ फड़क उठे, कंधे कांप उठे, और वह इतने ज़ोर से ठहाका लगाकर हंस पड़ा कि उसकी प्याली की सारी क़िमिज़ उसके रेशमी चोगे पर ढुल गयी। ख़ान को हंसते-हंसते आंसू आ गये, फिर वह आराम से बैठकर बोला :

"अरसे से मैं इतना दिल खोलकर नहीं हंसा था! आज से ये तीनों मूर्ख, जिन्हें इस स्त्री ने धोखा दिया और जिन्हें पहले मैं अपने वज़ीर कहता था, मेरे यहाँ तुच्छ मसख़रों का काम करेंगे। और तुम, मेरे कुशल कारीगर," उसने लोहार को सम्बोधित किया, "अपनी पतिव्रता पत्नी को लेकर मेरे सम्मानित अतिथि के रूप में मेरे साथ राजधानी चलोगे, मैं तुम्हारी सेवाओं और योग्यता के अनुरूप पुरस्कार दूँगा।"

कई सदियां बीत गयीं। ख़ान, बाद में विदूषक बने वज़ीरों, लोहार तथा उसकी रूपवती पत्नी की अस्थियां कभी की गल चुकी हैं। किन्तु महान कारीगर द्वारा निर्मित महल आज भी अपने स्थान पर खड़ा अपने अद्वितीय सौन्दर्य की छटा बिखेर रहा है।

सब नाशवान् है। केवल मनुष्य के चिन्तन की तथा उसके सृजन की कृतियां ही अमर हैं।



विचित्र नाम

एक बाप के तीन बेटे थे – दो बड़े बेटे उसकी पहली पत्नी से थे, और छोटा, जिसका नाम असपन था – दूसरी पत्नी से। असपन यद्यपि भला, बुद्धिमान और विनीत था, फिर भी उसके भाई उसे बचपन से ही प्यार नहीं करते थे। लड़के को अनेक बार व्यर्थ का अपमान, तमाचे और मज़ाक़ सहनने पड़े थे, चुपचाप रोना पड़ा था, मगर उसने एक बार भी पिता से शिकायत नहीं की, उसने न कभी भाइयों का बुरा किया और न ही कभी चाहा।

दिन बीतते रहे, बच्चे बड़े होते रहे और पिता बूढ़ा होता गया। पिता की मृत्यु के बाद बड़े भाइयों ने उसकी सारी जमा-पूंजी आपस में बांट ली और छोटे भाई को केवल एक पुराना तम्बू-घर और कुछ भेड़ें ही दीं।

"गायें जब बर्फ़ के छेद में पानी पीती हैं, बछड़ा बर्फ़ चाटता रहता है," उन्होंने असपन से हंसते हुए कहा।

लड़के ने न भाइयों से बहस की और न ही उनसे झगड़ा।

"किसी न किसी तरह गुज़र कर लूंगा," उसने मन में कहा। "धनी होने से ईमानदार होना बेहतर है..."

कुछ समय पश्चात् असपन को एक ग़रीब लड़की पसन्द आ गयी, उसने उससे विवाह कर लिया और अपनी युवा पत्नी के साथ सुख-चैन से रहने लगा।

एक वर्ष बीत गया। एक बार बड़े भाइयों ने छोटे भाई को अपने पास बुलाया और कहा :

"हमें उड़ती ख़बर मिली है कि ख़ान की राजधानी में सांड़ों का भाव चढ़ गया है। हम अपनी झुण्ड को वहाँ बेचने हांककर ले जाना चाहते हैं। ज़रा रास्ते में सांड़ों को संभालने में हमारी मदद कर दो। अगर सौदा अच्छा रहा, तो हम तुम्हें एक बधिया घोड़ा दे देंगे।"

"इनाम के लिए धन्यवाद, भैया," असपन ने उत्तर दिया, "पर मैं तो बिना किसी इनाम के भी तुम्हारी मदद करने को तैयार हूँ।"

"यह तो बहुत ही अच्छी बात है," भाइयों ने चुपके से एक दूसरे को आंख मारी। "तुम अगर इनाम लेने से इनकार करते हो, तो बहुत ही अच्छी बात है। पिता तुम्हारी नेकदिली के लिए तुम्हारी तारीफ़ के पुल यों ही थोड़े ही बांधते थे। सफ़र की तैयारी करो। हम तड़के ही निकल पड़ेंगे।"

सुबह बांका नौजवान अपनी पत्नी से विदा लेने लगा। वह उसके गले लगकर रो पड़ी और बोली:

"तुम्हारी यात्रा सफल रहे, प्रिय! सफलता प्राप्त करके घर लौटो। जब लौटकर आओगे, तो तुम्हारा बेटा, पहली सन्तान, पालने में तुम्हारी बाट जोह रहा होगा।"

असपन को स्तेपी में सांड़ों के साथ काफ़ी भटकना पड़ा, क्योंकि बड़े भाई उसे अपने साथ इसी लिए तो ले गये थे, जिससे कि उन्हें कम-से-कम काम करना पड़े और कम-से-कम परेशानी उठानी पड़े। किन्तु अपनी पत्नी की पहली सन्तान के बारे में कहे शब्द याद करके उसने न थकान की परवाह की, न ही दूरी की और उन सब में सबसे प्रसन्न लगता था।

भाई राजधानी में पहुँचे। उन्होंने बाज़ार के पास पशुओं के लिए एक बाड़ा किराये पर लिया और रात को वहीं डेरा जमाया। उन्होंने अपने काम निबटाये ही थे कि घोड़ों की टापें सुनाई दीं और बाड़े के बाहर ख़ान के घुड़सवार सिपाहियों की टुकड़ी आ पहुँची।

"ऐ सौदागरो," टुकड़ी के मुखिया ने कहा, "अपने सांड़ों को यहीं छोड़ो और हमारे साथ चलो। ख़ान नें तुम्हें अपने सामने हाज़िर होने का हुक्म दिया है।"

बड़े भाई डर के मारे थरथर कांपने लगे, पर छोटे ने उन्हें दिलासा दिलायी:

"हमने कोई बुरा काम नहीं किया है और ख़ान हमारा बुरा नहीं करेगा। केवल उसके साथ आदरपूर्वक पेश आना और उसके प्रश्नों का उत्तर सोच-समझकर देना।"

और सचमुच जब भाइयों को महल में लाया गया, ख़ान बहुत कृपापूर्वक उनसे मिला और बिना किसी प्रकार की सख़्ती दिखाये बातचीत करने लगा:

"हर मौसम में अलग-अलग फ़सल होती है और हर देश में अपने-अपने रीति-रिवाज होते है। हमारे यहाँ ऐसा दस्तूर है: जो कोई राजधानी में अपना माल बेचने आता है, उसे ख़ान के सामने हाज़िर होकर उसकी कही पहेली बुझानी होती है। पहेली बुझानेवाले को पुरस्कार के रूप में व्यापार करने की आज्ञा प्रदान की जाती है और जो नहीं बुझा पाता, उसे हम शहर से निकाल देते हैं। अपनी परीक्षा के लिए तैयार हो जाओ।"

"मर गये!" बड़े भाई फुसफुसाये।

"मुझ पर भरोसा रखो," असपन ने धीरे से कहा।

"ये तीन पहेलियां सुनो और ज्योष्ठता के अनुसार उन्हें बुझाओ," ख़ान ने आगे कहा। "पहली पहेली है: 'घोड़े से ऊँची, कुत्ते से छोटी'—क्या चीज़ है? दूसरी: 'ज़िन्दा

से मरा पैदा होता है, मरे से – ज़िन्दा" – यह क्या होता है? तीसरी है: 'घोंसला एक – उक़ाब चालीस' – यह क्या चीज़ होती है?"

जब तक बड़े भाई माथे पर बल डाले आंखें झपकाते रहे, छोटा भाई आगे निकल आया:

"जहांपनाह, इजाज़त हो, तो बताऊँ: मैं तीनों पहेलियाँ बुझा चुका हूँ।"

"असम्भव!" ख़ान ने आश्चर्य व्यक्त किया।

बांका नौजवान बोला:

"'घोड़े से ऊंची, कुत्ते से छोटी' – काठी होती है, हुज़ूरे आलम। ठीक है ना? 'ज़िन्दा से मरा पैदा होता है' – यह अण्डा होता है और मरे से ज़िन्दा' – चिड़िया का बच्चा। 'घोंसला एक – उक़ाब चालीस' – तीर और तरकश।"

"ठीक कहा!" ख़ान कह उठा। "अगर तुम मेरे तीन और सवालों का जवाब दोगे, तो मैं तुम्हें बहुत क़ीमती भेंट दूंगा।"

"कहिये, हुज़ूरे आलम!" असपन ने तत्परता से कहा।

"कौन-सा पत्थर सबसे भारी होता है?" ख़ान ने पूछा।

"वह, जो हमारे सिर पर गिरे, मेरे हुज़ूर।"

"ठीक! तलवार से तेज़ कौन-सी चीज़ होती है?"

"ज़बान तलवार से तेज़ होती है।"

"ठीक कहा! ऐसी कौन-सी बात है, जिसे दुनिया में कोई नहीं जानता?"

"कोई भी, विद्वानों से विद्वान भी नहीं जानता कि अगले क्षण उसके साथ क्या होनेवाला है?"

ख़ान ने सराहना की दृष्टि से बांके नौजवान की ओर देखा।

"तुम्हारी बुद्धि काफ़ी तेज़ है, लड़के। मैं जानना चाहता हूँ कि तुम कहाँ के हो और तुम्हारा नाम क्या है। हो सकता है, मुझे आगे तुम्हारी ज़रूरत पड़े।"

उत्तर सुनकर ख़ान ने अपने बड़े वज़ीर को असपन को फ़ौरन अशरफ़ियों की थैली देने को कहा और बड़े भाइयों से बोला:

"हालांकि तुममें मेरे पहेलियां बुझाने की अक़्ल नहीं है, पर तुम्हारे छोटे भाई की ख़ातिर मैं तुम लोगों को अपने जानवर बेचने तक राजधानी में रुकने की अनुमति देता हूँ।"

भाइयों ने ख़ान को धन्यवाद दिया, और सिपाही उन्हें बाड़े तक छोड़ आये, जहाँ उनके सांड़ चैन से जुगाली कर रहे थे। तीनों भाई सारी रात नहीं सोये: छोटा भाई – ख़ुशी के मारे कि वह अचानक इतना भाग्यवान् निकला, बड़े भाई – उसकी अक़्ल और ख़ान द्वारा उसे दी गयी भेंट से डाह के मारे।

भोर में बाज़ार खुल गया और वहाँ चहल-पहल शुरू हो गयी, भाइयों ने थोड़े से समय में सांड़ों को भारी नफे में बेच दिया और शहर के परकोटे से बाहर निकल आये।

निर्जन स्तेपी में पहुँचने पर बड़े भाई आमदनी का बंटवारा करने लगे, तो छोटा भाई बोला :

"भाइयो, आइये ऐसा करें : जो सोना मुझे ख़ान ने दिया, उस में से कुछ मैं आपको दे देता हूँ, जिससे हम तीनों के पास बराबर-बराबर सोना हो जाये।"

बड़े भाइयों ने बिना झिझके उसकी अशरफ़ियां ले लीं, किन्तु असपन की उदारता से उनके लालच की आग बुझी नहीं, बल्कि बढ़ गयी। अब उन्हें ख़ान की थैली में रखी सारी अशरफ़ियां हड़पने की इच्छा होने लगी।

वे जानबूझकर रास्ते में पीछे रहकर साज़िश करने लगे :

"चलो, हम असपन को जान से मार देते हैं, लोगों से कहेंगे कि पड़ाव में उसे सांप ने काट लिया। गवाह कोई है ही नहीं, कौन हमारा परदाफ़ाश करेगा?" और वे छुरे निकालकर घोड़ों को एड़ लगाने लगे।

असपन ने जब उन्हें नंगे छुरे लिये आते देखा, तो वह उन लालचियों को उस पर दया करने के लिए मनाने लगा।

"भाइयो," वह बोला, "आप मेरा ख़ून बहाकर क्या करेंगे? धन ले लीजिये, पर मेरी जान बख़्श दीजिये। मेरा घर मत उजाड़िये ..."

किन्तु दुष्टों ने उसकी विनती का उत्तर हंसी में दिया :

"वाह रे वाह! हम तुझ पर दया करेंगे, तो तू ख़ान के पास जाकर हमारा परदाफ़ाश कर देगा। ख़ान हमें तेरी शिकायत पर मौत की सज़ा दे देगा, और तुझे हमारी सम्पत्ति मिल जायेगी। नहीं, तू कितना ही बुद्धिमान क्यों न हो, हमें धोखा नहीं दे सकता।"

छोटा भाई हताश होकर बोला :

"अगर आप लोगों के दिल में ज़रा भी दया नहीं है, तो मुझे मार डालिये। पर कम-से-कम मेरी अन्तिम इच्छा तो पूरी कर दीजिये।"

"तुम क्या चाहते हो?"

"अगर घर लौटने पर आप लोगों को मालूम पड़े कि मेरे बेटा पैदा हुआ है, तो मेरी पत्नी से कह दीजिये कि वह लड़के का नाम 'दुहाई' रखे। यह मेरी अन्तिम इच्छा है ..."

भाई खिलखिलाकर हंस पड़े :

"अरे, ऐसी इच्छा पूरी करने में हमारा कुछ नहीं जाता। ऐसा ही होगा, हम तेरी इच्छा पूरी करने का वादा करते हैं।"

और उन्होंने अपने सगे भाई पर छुरे चला दिये ...

दस वर्ष बीत गये। ख़ान बूढ़ा हो गया, पर अभी हृष्ट-पुष्ट था। लेकिन उसका बड़ा वज़ीर पूर्णतया जराजीर्ण हो चुका था और अपने स्वामी की न सेवा करने योग्य रह गया था, न ही उसे सलाह देने योग्य। तब ख़ान को उस बुद्धिमान नौजवान की याद आयी,

जिसने उसकी सारी पहेलियां बिना अटके सुलझा दी थीं, और उसने उसे अपने दरबार में लाने तथा बड़ा वज़ीर बनाने का फ़ैसला किया।

ख़ान ने घोड़ों पर काठियां कसने का हुक्म दिया और अपने अनेक अंगरक्षकों के साथ स्तेपी में उधर चल पड़ा, जहाँ उसके अनुमान से असपन के ख़ानदान को घूमते रहना चाहिए था। खोज काफ़ी दिनों तक ज़ारी रही। एक दिन घुड़सवार किसी गांव के पास पहुँचे और अचानक उन्हें दूर से आती आवाज़ सुनाई दी :

"दुहाई ! दुहाई !"

"मेरे पीछे चलो !" ख़ान ने चाबुक फटकारा। "वहाँ कोई किसी स्त्री को सता रहा है। जल्दी से उसकी मदद को चलना चाहिए !" और उसने अपने घोड़े को पूरे ज़ोर से एड़ लगायी।

जब स्त्री के सामने अचानक ख़ान और बहुत से सशस्त्र अश्वारोही आ पहुँचे, तो वह भय के मारे थरथर कांपने लगी और उसने हाथों से अपना मुंह ढक लिया। ख़ान ने उससे स्नेहपूर्वक पूछा :

"क्या हुआ, ऐ औरत ? तुम 'दुहाई, दुहाई' क्यों चिल्ला रही थी ? तुम्हें किसने सताया ?"

होश संभालने पर स्त्री ने उत्तर दिया :

"जहांपनाह, मुझे किसी ने नहीं सताया। दुहाई तो मेरे बेटे का नाम है। वह लड़कों के साथ स्तेपी में भाग गया है, खाने का समय हो गया है, इसीलिए मैं उसे आवाज़ दे रही थी..."

ख़ान को आश्चर्य हुआ :

"कितना विचित्र नाम है !.. मैंने पहली बार ऐसा नाम सुना है। तुम्हें और तुम्हारे पति को अपने बेटे का यह नाम रखने की कैसे सूझी ?"

स्त्री ने उसे बताया कि कैसे दस वर्ष पूर्व उसका पति अपने दो भाइयों के साथ काम से राजधानी गया था और लौटते समय रास्ते में वह सांप काटने से मर गया, पर मरने से पहले अपने प्रथम बालक का नाम 'दुहाई' रखने की इच्छा व्यक्त की थी।

ख़ान सोच में पड़ गया। उसके चेहरे पर व्याकुलता झलकने लगी।

"यह बताओ कि तुम्हारे पति का नाम क्या था ? असपन तो नहीं था ?"

"जी, हाँ," स्त्री ने उत्तर दिया, "उनका नाम असपन था।"

"सारी बात समझ में आ गयी !" ख़ान उत्तेजित हो कह उठा। बुद्धिमान और नेक आदमी सांप के काटने से नहीं, लोगों के द्वेष के कारण मारा गया है। अपने बेटे का नाम 'दुहाई' रखने को कहकर उसने अन्तिम क्षण में अपने भयावह अन्त की ख़बर भिजवाई थी। अच्छा, अब यह बताओ, औरत, कि हत्यारे भाइयों ने तुम्हें असपन की अशरफ़ियां दी थीं या नहीं ?"

स्त्री किंकर्तव्यविमूढ़ खड़ी रह गयी :

"मुझ मूर्ख को क्षमा करें, जहांपनाह, पर मेरी कुछ समझ में नहीं आ रहा है कि आप क्या कह रहे हैं। हमारे पास तो न आज कोई फूटी कौड़ी है, न पहले कभी रही थी। पति के भाइयों ने मुझसे उस एकमात्र पशु को भी छीन लिया; जो हमें ससुर से मिला था।"

ख़ान क्रुद्ध हो उठा।

"हत्यारों को हाज़िर करो!"

भाइयों को उसके सामने लाया गया। वे शीघ्र ही समझ गये कि इनकार करने और झूठ बोलने से उन्हें कोई लाभ न होगा और उन्होंने अपना अपराध स्वीकार कर लिया।

ख़ान ने उन्हें उस स्थान पर ले जाकर, जहाँ उन्होंने दुष्कर्म किया था, उनके सिर काट देने तथा उनके द्वारा असपन से लूटा गया सारा धन उसकी विधवा को लौटा देने की आज्ञा दी।

उसी समय स्तेपी से दुहाई भागता हुआ आ पहुँचा। वह मां की तरफ़ लपका ही था कि ख़ान ने उसे अपने पास बुला लिया और उसके गले में हाथ डालकर पूछा :

"तुम्हें पहेलियां बुझाना आता है, दुहाई?"

"आता है," लड़के ने निर्भीकतापूर्वक उत्तर दिया।

"तो फिर बताओ: 'कमंद रंगबिंगी – इधर छुए एक टेकरी, तो उधर दूसरी' – क्या चीज़ है?"

"इन्द्रधनुष!" लड़के ने बेधड़क जवाब दिया।

ख़ान मुस्कराया और प्रसन्न हो उठा :

"शाबाश! तुम बिलकुल पिता जैसे बुद्धिमान हो। तुम मेरे साथ महल में चलोगे। वहाँ पढ़ोगे और मेरी सेवा करोगे। और बड़े हो जाने पर, जब ज्ञान प्राप्त कर लोगे, मैं तुम्हें अपना वज़ीर बना दूँगा।"

दुहाई मां से सटते हुए बोला :

"हुज़ूरे आलम, क्या आपके लिए मेरे अलावा नौकरों की कोई कमी है? और क्या हमारे लोगों में ख़ान के लिए नंगे पैरवाले छोकरे से अधिक बुद्धिमान सलाहकार नहीं मिलेगा? मेरी मां के पास एक ही नौकर, एक ही सलाहकार और एक ही रक्षक है – वह मैं हूँ। मुझे अपनी मां के पास ही रहने की इजाज़त दीजिये!"

और ख़ान को बालक का विरोध करने के लिए कुछ नहीं सूझा।



बुद्धिमान भाई

बहुत दिन हुए एक सदाचारी और ज्ञानी पुरुष रहता था। उसके तीन पुत्र थे। कहते हैं: शिकारी का बेटा तीरों के धार चढ़ाता है और दर्ज़ी का बेटा कपड़े काटता है। और विद्वान के पुत्र बचपन से ही अपना सारा समय ज्ञानवर्द्धक पुस्तकें पढ़ने में बिताते थे। उनमें से बड़ा अभी घोड़े पर चढ़ना भी नहीं सीखा था, पर लोग उन भाइयों के पास न्याय करवाने और सलाह लेने आने लगे।

एक बार उसके पास दो आदमी दो ऊंटनियां और एक ऊंट का बच्चा लेकर आये।

"हमारा मामला ऐसा है," वे कहने लगे, "कि हममें से हरेक के पास एक-एक ऊंटनी है। वे स्तेपी में हमेशा साथ चरती थीं। हाल ही में हम उन्हें लेने गये, तो हमने दो नवजात ऊंट के बच्चे देखे। एक ज़िन्दा था, दूसरा – मरा हुआ। अब हम यह नहीं जान पा रहे हैं कि ऊंट का बच्चा किसका होना चाहिए और उनमें से कौन-सी ऊंटनी उसकी मां है। वे दोनों ही बच्चे को प्यार करती हैं और दूध पिलाती हैं और वह भी दोनों ऊंटनियों को एक-समान प्यार करता है।"

बड़ा भाई बोला:

"ऊंटनियों को नदी किनारे ले जाइये।"

मझला बोला:

"ऊंट के बच्चे को डोंगी में दूसरे किनारे पर ले जाइये।" और छोटा भाई बोला:

"तब आपके झगड़े का ख़ुद-बख़ुद फ़ैसला हो जायेगा।"

उन लोगों ने वैसा ही किया, जैसा की सलाह लड़कों ने दी थी।

ऊंट का बच्चा जब किनारे पर अकेला रह गया, तो वह डर के मारे छटपटाने और दर्द भरी आवाज़ में बलबलाने लगा। ऊंटनियां भी घबराने और ज़ोर-ज़ोर से बलबलाने लगीं। एक ऊंटनी घबरायी हुई किनारे के सहारे-सहारे भागने लगी, जब कि दूसरी पानी में कूद पड़ी और तैरकर बच्चे के पास जाने लगी। तब सब समझ गये कि यही उसकी मां है।

असाधारण बालकों की बुद्धिमत्ता का समाचार कानों-कान सारी स्तेपी में फैल गया। वृद्ध विद्वान को अपने पुत्रों के कारण हर्ष भी हुआ और उन पर गर्व भी।

वर्ष बीतते रहे। बाप बूढ़ा होता गया, बेटे बड़े होते गये। जब पुत्रों ने युवावस्था में पदार्पण किया, विद्वान ने उनसे कहा :

"ज्ञान लम्बी उम्रवाले का नहीं, बल्कि दुनिया देखनेवाले का ज़्यादा होता है। सोने की सच्ची क़ीमत कौन जानता है? धनी नहीं, बल्कि सुनार। भोजन के गुणों का ज्ञान किसे होता है? खानेवाले को नहीं, बल्कि उसे पकानेवाले को। सच्चा रास्ता कौन दिखा सकता है? वह नहीं, जो उस पर जाने की तैयारी कर रहा है, बल्कि उससे गुज़रनेवाला। तुम लोग अपनी पुस्तकें छोड़कर सबसे अधिक ज्ञानवर्द्धक पुस्तक – जीवन की पुस्तक पढ़ने के लिए देशाटन पर निकल जाओ।"

पिता ने पुत्रों को आशीर्वाद दिया और वे कई वर्षों के लिए अपना घर छोड़कर चल पड़े।

एक बार जब तीनों भाई एक रास्ते से गुज़र रहे थे, अपने आस-पास नज़र डालकर बड़ा भाई बोला :

"इस रास्ते से थोड़ी देर पहले एक थका-हारा ऊंट गुज़रा है।"

मझला बोला :

"हां, और उस ऊंट की बायीं आंख नहीं है।"

छोटा बोला :

"और उस पर शहद लदा था।"

उसी समय उन्हें सामने से एक घबराया और हांफता हुआ आदमी आता दिखाई दिया :

"आपने रास्ते में कोई ऊंट तो नहीं देखा?" उसने पूछा। "चोर मेरा ऊंट चुरा ले गये हैं।"

"तुम्हारे ऊंट ने बहुत लम्बा रास्ता तय किया है और वह बहुत थका हुआ है. सच है ना?" बड़े भाई ने पूछा।

"हां," अपरिचित ने जवाब दिया।

"और तुम्हारे ऊंट की बायीं आंख नहीं है ना?" मझले भाई ने पूछा।

"हाँ, हाँ!" अपरिचित खुश हो गया।

"वह शहद तो ढोकर नहीं ले जा रहा था?" छोटे भाई ने पूछा।

"हाँ, हाँ, शहद! जल्दी से बताइये, मेरा ऊंट कहाँ है?"

"यह हम नहीं जानते," भाइयों ने कहा, "हमने उसे देखा नहीं है।"

अपरिचित क्रोधित हो उठा :

"तुम लोगों की झूठ बोलने की हिम्मत कैसे हुई कि तुमने ऊंट को नहीं देखा, जब

कि तुम्हें ऊंट की सारी पहचान मालूम है? ऊंट जरूर तुम्हीं लोगों ने चुराया है और उसे किसी गुप्त स्थान में छिपा दिया है।"

और उसने इतना शोर मचाया कि उसकी आवाज़ थोड़ी दूरी पर जा रहे खान के सिपाहियों ने सुन ली। वे पुकार सुनकर सरपट घोड़े दौड़ाते आये और उन चारों को खान के पास ले गये।

खान ने उनसे पूछताछ शुरू की।

"आप लोग कहते हैं कि आपने लापता हुए ऊंट को नहीं देखा," उसने विद्वान के पुत्रों को सम्बोधित किया, "पर फिर आपने उसके मालिक को उसकी ठीक-ठीक पहचान कैसे बतायी?"

बड़ा भाई बोला:

"ऊंट ने लम्बा रास्ता तय किया है, इसका अनुमान मैंने उसके पद-चिन्हों से लगा लिया: थका हुआ जानवर पैर घिसटता चलता है, उसकी खोजें लम्बी होती हैं।"

मझला बोला:

"ऊंट की बायीं आंख नहीं है, इसका फ़ैसला मैंने इस आधार पर किया, कि उसने चलते-चलते केवल रास्ते के दायीं ओर की घास ही खायी थी।"

छोटा भाई बोला:

"अगर रास्ते पर मक्खियों के झुण्ड के झुण्ड भिनभिना रहे हों, तो यह अन्दाज़ लगाना मुश्किल थोड़े ही था कि ऊंट पर शहद लदा था।"

खान भाइयों की सूक्ष्म-दृष्टि और उसके प्रश्नों का उत्तर आत्म-सम्मान के साथ देने से आश्चर्यचकित रह गया। लेकिन उसे एक बार और उनकी बुद्धिमत्ता की परीक्षा लेने की इच्छा हुई। उसने नज़र बचाकर एक पका हुआ अनार रूमाल में लपेट लिया और उसे भाइयों को दिखाकर पूछा:

"मेरे हाथ में क्या है?"

बड़ा भाई बोला:

"यह कोई गोल चीज़ है।"

मझला बोला:

"इसके अलावा बहुत ही स्वादिष्ट है।"

और छोटे ने पूरी तरह समाधान कर दिया:

"कहने का मतलब है, यह अनार है, जहांपनाह।"

खान का चेहरा खिल उठा।

"बिलकुल ठीक!" वह कह उठा। "मैंने पहले कभी इतने सूक्ष्मदर्शी लोगों को नहीं देखा था। आप जवान हैं, पर मेरे दाढ़ीवाले वज़ीर भी आपकी तुलना में कुछ नहीं हैं। आप मेरे यहाँ तीन दिन रुकिये, आपको बारी-बारी से मेरे लोगों के मुक़दमों का फ़ैसला

करना होगा और अगर मुझे आपके निर्णय न्यायपूर्ण लगे, तो मैं आपको अपने वज़ीर बना लूँगा।"

यह सुनकर बूढ़े वज़ीर तीनों युवा विद्वानों से घोर घृणा करने लगे और उन्होंने उनके साथ अपनी आय, सत्ता और ख़ान की कृपालुता न बांटने के लिए उन्हें हर काम में नुक़सान पहुँचाने की ठान ली।

पहले दिन न्यायालय की अध्यक्षता बड़े भाई ने की। उसके सामने दो आदमी पेश किये गये। उनमें से एक ने कहा:

"मैं एक ग़रीब गड़रिया हूँ। कल तंगी के कारण मैंने अपनी सबसे बढ़िया भेड़ काटी और आज दिन भर बाज़ार में मांस बेचता रहा। मैंने अपनी सारी आमदनी थैली में रखी थी, पर इस आदमी ने उसे मेरी जेब से निकाल लिया।"

दूसरा व्यक्ति झल्लाकर उस पर लगाये आरोप से इनकार करने लगा:

"गड़रिया झूठ बोलता है। मेरे पास रक़म की थैली है, पर वह मेरी अपनी थैली है। यह ठग मुझ पर झूठा दोष लगा रहा है और पराया माल हथियाना चाहता है।"

क़ाज़ी ने कहा:

"थैली मुझे दो। हम एक मिनट में पता लगा लेंगे कि थैली किसकी है।"

उसने ख़ान के नौकरों को एक बरतन में उबलता पानी लाने को कहा और उसमें थैली के सिक्के उलट दिये। पानी पर तत्क्षण चरबी की तह तैर आयी, जैसे उसमें भेड़ का मांस पकाया गया हो। अब कोई सन्देह न रहा कि गड़रिये ने सच कहा था। क़ाज़ी ने उसे रक़म लौटा दी और चोर को हिरासत में लेने का आदेश दे दिया।

दूसरे दिन मझले भाई ने न्याय किया।

अदालत में ठसाठस भरे बोरे जैसा एक मोटा बाय किसी फटीचर अभागे को आस्तीन पकड़कर घसीट लाया।

बाय कहने लगा:

"इस फटीचर ने मुझसे यह रोना रोकर कि इसका बेटा मर रहा है, मुझसे एक चरक* गोश्त उधार लिया था। इसने क़सम खाकर कहा था कि यह क़र्ज़ एक सप्ताह में लौटा देगा, चाहे अपनी पिण्डली का गोश्त काटकर देना पड़े। बच्चा काफ़ी दिन हुए मर चुका है, सप्ताह पर सप्ताह बीतते जा रहे हैं, पर यह चालबाज़ न तो मुझे मांस लौटा रहा है और न ही उसकी क़ीमत।"

क़ाज़ी ने ग़रीब से पूछा:

"तुमने बाय का उधार क्यों नहीं चुकाया?"

---

* चरक – पुराना कज़ाख़ी बाट – २५० ग्राम।

"मेरे पास कुछ नहीं है," ग़रीब ने डर के मारे थरथर कांपते जवाब दिया, "मैं पतझड़ से पहले बाय का हिसाब साफ़ नहीं कर सकूँगा।"

"लेकिन मैं पतझड़ तक इन्तज़ार नहीं कर सकता!" बाय चीखा।

तब क़ाज़ी बोला, "मैं इस मामले का फ़ैसला इस तरह करता हूँ। बाय, तुम छुरा लो और प्रतिवादी की पिण्डली से एक चरक मांस काट लो। ठीक एक चरक! अगर टुकड़ा रत्ती भर भी कम या ज़्यादा हुआ, तो मैं तुम पर कोड़े लगवाने का हुक्म दे दूँगा।"

बाय किंकर्तव्यविमूढ़ हो गया और एकाएक अपने चोग़े के पल्लों में उलझकर गिरता-पड़ता सिर पर पांव रखकर भाग गया। सब उस पर हंसने लगे, और ग़रीब कृपापूर्ण निर्णय के लिए क़ाज़ी को धन्यवाद देने लगा।

तीसरे दिन छोटे भाई को न्याय करने का अवसर मिला। उसके पास दो जवान आदमी आये। उन दोनों में से जो क़द में लम्बा और चौड़े कंधोंवाला था, वह वादी था। उसने शिकायत की:

"मेरे दोस्त ने मुझसे एक अशरफ़ी छीन ली है।"

प्रतिवादी ने सफ़ाई पेश की:

"मैंने अशरफ़ी ईमानदारी से मेहनत करके कमाई है। लोगों का बुरा करने का विचार मेरे दिमाग़ में कभी आता ही नहीं है।"

काज़ी ने वादी से पूछा:

"क्या कोई गवाह मौजूद था, जब तुम्हारे दोस्त ने तुम पर हमला किया?"

"नहीं, कोई गवाह नहीं था।"

"तो फिर," क़ाज़ी ने कहा, "आपका मुक़दमा निबटाना मुश्किल होगा। मैं इस पर विचार करे लेता हूँ। और इस बीच आप लोग कुश्ती लड़कर मेरा दिल बहलाइये। कुश्ती के विजेता को मैं इनाम दूँगा।"

क़ाज़ी सोच-विचार में डूब गया, और बांके नौजवान एक दूसरे का कमरबंद पकड़ कुश्ती लड़ने लगे। पन्द्रह मिनट के अन्दर-अन्दर वादी ने प्रतिवादी को तीन बार पछाड़ दिया।

"बस," क़ाज़ी ने कहा। "सच्चाई ज़ाहिर हो गयी है, और मेरा फ़ैसला तैयार है। मूर्ख से मूर्ख को भी यह स्पष्ट हो गया है कि इन दोनों पहलवानों में कौन ज़्यादा ताक़तवर है। सबके सामने वादी ने प्रतिवादी को लगातार तीन बार पछाड़ा है। इस बात पर कौन विश्वास करेगा कि कमज़ोर ने ताक़तवर से पैसा छीना है? नहीं, प्रतिवादी निर्दोष है, जब कि, ढीठ वादी, तुम्हें झूठी शिकायत और बलप्रयोग के लिए कड़ा दण्ड दिया जाना चाहिए। लेकिन अपने वचनानुसार मैं तुम्हें कुश्ती में कौशल दिखाने के लिए क्षमा-दान देता हूँ। जाओ, अपस में सुलह कर लो और फिर से दोस्त बनने की कोशिश करो।"

सब लोगों ने तीनों भाइयों के न्यायपूर्ण निर्णयों की सराहना की, और ख़ान भी उनसे सन्तुष्ट हो गया। केवल बूढ़े वज़ीर उनसे डाह करने लगे और नाराज़ हो उठे। वे ख़ान के

कान भरने लगे कि तीनों भाई संदिग्ध बदमाश हैं, अनजाने परदेसियों पर विश्वास करना मूर्खता होगी, उन्हें ज़रूर दुश्मनों ने भेजा है और वे उसका बुरा करने की योजना बना रहे हैं। लेकिन ख़ान ने चुगलख़ोरों को डांट दिया और सबके सामने अपनी इच्छा घोषित कर दी:

"मैं तीनों बुद्धिमान युवकों को वज़ीर बना रहा हूँ। दिन में वे सरकारी काम-काज में मेरी मदद किया करेंगे, शाम को क़िस्से सुनाकर मेरा दिल बहलाया करेंगे और रात को मेरे सोते समय पहरा दिया करेंगे।"

दिन बीतने लगे। ख़ान का युवकों से लगाव निरन्तर बढ़ता गया। वह शाम को घंटों उनकी बातें सुनता रहता और विचित्र कहानियों की लोरी सुनता सो जाता था। भाई बारी-बारी से ख़ान की सेवा करते रहे, और वह सब का समान रूप से ध्यान रखता, किन्तु छोटे भाई पर उसकी विशेष कृपा रहती थी। इसीलिए बूढ़े वज़ीर युवक से बहुत द्वेष रखने लगे। अंततः उन्होंने उसके ख़िलाफ़ षड्यंत्र रचने की ठानी।

एक दिन जब छोटे भाई की ख़ान के साथ दिन भर रहने की बारी आयी, वज़ीरों ने चोरी से ख़ान के शयन-कक्ष में एक विषैला सर्प छोड़ दिया। उन्हें आशा थी कि ख़ान को सांप देखते ही अपने चहैते पर बुरे इरादे का सन्देह हो जायेगा और वह ग़ुस्से से आगबबूला हो उठेगा, और तब उसे तीनों भाइयों को सज़ा देने के लिए मनाना आसान हो जायेगा।

रात आयी। ख़ान पलंग पर लेटा हुआ था और युवा वज़ीर उसे एक के बाद एक प्राचीन दन्तकथाएं सुना रहा था। वह इतने क्रमबद्ध ढंग से बोल रहा था कि लगता था जैसे वह अपने सामने कोई अदृश्य पुस्तक रखे हुए हो। जी भर कहानियां सुन लेने के बाद ख़ान आधी रात बाद गहरी नीन्द में सो गया।

तभी चिराग़ बुझाने जा रहे युवक को ख़ान के पलंग की तरफ़ रेंगता भयावह सांप नज़र आ गया। उसने बिना विवेक खोये तलवार निकाल ली और सांप का सिर काटकर उसका कटा धड़ पलंग के नीचे फेंक दिया। वह तलवार म्यान में रखने ही जा रहा था कि शोर से उद्विग्न ख़ान जाग गया और उसने आंखें खोलीं।

युवा वज़ीर को अपने सामने नंगी तलवार हाथ में थामे खड़ा देख वह झट उठ खड़ा हुआ और चिल्लाने लगा:

"बचाओ! मुझे जान से मारना चाहते हैं!"

अंगरक्षक तत्क्षण शयन-कक्ष में भागे घुस आये और उन्होंने युवक को पकड़कर सुबह तक के लिए उसे काल-कोठरी में बंद कर दिया।

ख़ान ने सुबह मामले की जांच करने और बंदी के भाग्य का फैसला करने के लिए अपने सारे वज़ीरों की बैठक बुलवाई।

वज़ीर ज्येष्ठता के अनुसार बोले, पर सभी ने एक ही बात कही: उन्होंने शब्दाडम्बर

का जाल फैलाते हुए और वाक्-चातुर्य में एक दूसरे से होड़ करते हुए युवक पर विश्वासघात, नमकहरामी और अपने शासक की हत्या के प्रयास का आरोप लगाया और अन्त में उसे निर्मम से निर्मम और कष्टप्रद से कष्टप्रद दण्ड – प्राणदण्ड दिये जाने की मांग की। उनकी बातें सुनते समय खान सिर हिलाता रहा तथा साथ ही साथ और अधिक उदास होता गया। वज़ीर मन-ही-मन खुश हो रहे थे, पर इसे प्रकट नहीं होने दे रहे थे और उन्हें अपने निर्ल्लज षड्यंत्र के सफल होने का पहले से ही पूरा विश्वास था।

किन्तु उधर अभियुक्त के बड़े भाई की बोलने की बारी आ गयी।

"जहांपनाह," उसने कहा, "मुझे न्यायिक भाषण के स्थान पर एक प्राचीन नीति-कथा सुनाने की आज्ञा दें, जैसा कि मैं और मेरे भाई आपके सिरहाने बैठकर इतनी रातों से करते आये हैं।"

बहुत पुराने ज़माने में एक पराक्रमी बादशाह था। उसे दुनिया में सबसे ज़्यादा प्यार अपने बोलनेवाले तोते से था, जो सोने के पिंजरे में उसके शयन-कक्ष में रहता था। बुद्धिमान तोता कठिन परिस्थितियों में बादशाह को सलाह भी देता था, दुःख में सान्त्वना भी दिलाता था और अवकाश के समय में उसका मनोरंजन भी करता था।

एक बार बादशाह पिंजरे के पास आया, तो उसने देखा कि तोते ने पर खड़े कर रखे हैं और वह उदास है।

'तुझे क्या हुआ है, मेरे दोस्त?' बादशाह ने पूछा।

तोता बोला:

'मेरे पास दूर देश से मेरे साथी आकर खिड़की पर बैठे थे। वे समाचार लाये कि मेरी बहन का विवाह हो रहा है और वह चाहती है कि मैं शादी में मौजूद रहूँ। आप मुझे अपने देश हो आने की अनुमति दे दीजिये, बादशाह सलामत! आपकी इस कृपा के बदले में मैं वहाँ से आपके लिए एक बहुमूल्य उपहार लेकर आऊँगा।'

'तुम्हें वहाँ उड़कर जाने-आने में कितने दिन लगेंगे?' बादशाह ने पूछा।

'चालीस दिन, बादशाह सलामत। चालीसवें दिन मैं फिर आपके साथ होऊँगा।'

बादशाह ने पिंजरे की खिड़की खोल दी, और पक्षी उल्लसित स्वर में चिल्लाता पंख फड़फड़ाता खिड़की में से आकाश में उड़ चला।

उस समय वहाँ उपस्थित वज़ीर ने कहा:

'मैं किसी भी चीज़ की शर्त लगाने को तैयार हूँ, हुज़ूरे आलम, कि चालाक पक्षी ने आपको धोखा दिया है और वह कभी इस पिंजरे में नहीं लौटेगा।'

दुष्ट लोग अविश्वासी और शंकालू होते हैं, मेरे हुज़ूर, और वह वज़ीर दुष्ट आदमी था।

लेकिन चालीस दिन बीतते ही तोता अपने वचनानुसार वापस लौट आया। बादशाह उसके आने पर बहुत प्रसन्न हुआ और उसने मज़ाक़ में पूछ लिया:

'मेरे लिए तू कौन-सा उपहार लाया है, मेरे मित्र?'

तोते ने चोंच खोली और बादशाह की हथेली पर एक नन्हा-सा दाना रख दिया।

बादशाह विस्मित हुआ, पर तोते की बुद्धिमत्ता जानने के कारण उसने अपने सफ़ेद दाढ़ीवाले माली को आवाज़ दी और उसे वह बीज बोने को कहा। एक ही दिन में उस बीज से एक सुगठित सेब का वृक्ष निकल आया, दो दिन में उसमें फूल निकल आये और तीसरे दिन – वह अनेक सुगंधित फलों से सुशोभित हो उठा।

माली ने सबसे लाल सेब तोड़ा और उसे बादशाह के पास ले जा रहा था कि उसे रास्ते में वज़ीर ने रोक लिया। उसने हाथ में सेब ले जाने के लिए माली को फटकारा और सोने की थाली लाने को कहा। बूढ़ा चला गया, पर इस बीच वज़ीर ने फल पर विष मल दिया और माली की लौटने तक प्रतीक्षा करके उसके साथ बादशाह के सामने उपस्थित हुआ। माली ने अद्‌भुत वृक्ष के बारे में बताया और सेबवाली थाली मेज़ पर रखकर चला गया। पर वज़ीर बोला:

'हुज़ूरे आलम, यह सेब देखने में तो सुन्दर है, पर सुन्दरता प्राय: भ्रामक होती है। मुझे सन्देह है कि सेब विषैला है। आप कारागार में से किसी हत्यारे को, जिसे प्राण-दण्ड सुनाया गया हो, यहाँ लाने की आज्ञा दीजिये और आपसे पहले उसे सेब का एक टुकड़ा चख लेने दीजिये।'

बादशाह ने वज़ीर की सलाह मान ली। ज़ंजीरों में जकड़े डाकू को वहाँ लाया गया और उसे सेब का टुकड़ा खाने को बाध्य किया गया और पल भर में वह व्यक्ति मृत पड़ा था।

बादशाह क्रोधोन्मत्त हो उठा। वह लपककर पासवाले कमरे में गया और उसने तोते को पिंजरे में से खींचकर उसकी गरदन मरोड़ दी।

कुछ समय पश्चात् बादशाह को स्वयं यह सेब का वृक्ष देखने की इच्छा हुई। वह बाग़ में निकलकर बाग़बान को आवाज़ देने लगा। उसके पास एक सुगठित शरीर व सुन्दर चेहरे-वाला युवक भागा आया।

'तुम कौन हो?' बादशाह ने पूछा।

'मैं आपका माली हूँ, जहांपनाह।'

'लेकिन मेरा माली तो बिलकुल बुड्ढा था!' बादशाह को आश्चर्य हुआ।

'वह मैं ही हूँ,' सुन्दर युवक ने कहा। 'आपने जब तोते को मार डाला, तो मैंने सोचा कि मैं भी आपके कोप से नहीं बच सकूँगा। तब व्यर्थ के कष्ट न भोगने के लिए मैंने सेब खाकर आत्म-हत्या करने का निर्णय लिया। मैंने एक सेब तोड़कर थोड़ा-सा दांत से काटा कि तत्क्षण मेरा यौवन लौट आया।'

आश्चर्यचकित बादशाह ने, जैसे कोई सपना देख रहा हो, अद्‌भुत वृक्ष के पास जाकर सेब तोड़ा और खा लिया। उसे अपने सारे शरीर में अनिर्वचनीय सुख की अनुभूति हुई

और उसने अपने को फिर वैसा ही युवा और बलशाली महसूस किया जैसा कि वह अठारह वर्ष की आयु में था।

तभी उसकी समझ में आया कि उसने वफ़ादार तोते को व्यर्थ मारा था, वह दुःख और पश्चाताप के मारे रो पड़ा, पर अब देर हो चुकी थी: शासक प्राण ले तो सकते हैं, पर प्राण लौटने का सामर्थ्य उनमें नहीं होता।"

बड़ा भाई मौन हो गया। खान गहन चिन्तन में डूबा निश्चल बैठा रहा। फिर उसने मझले भाई को संकेत से बोलने का आदेश दिया। और वह कहने लगा:

"जहांपनाह, मैं भी आपको एक ऐसी ही कथा सुनाना चाहता हूँ। यह घटना भी बहुत दिन पहले घटी थी, पर दूसरे देश में और दूसरे बादशाह के साथ। उस बादशाह को बचपन से ही शिकार का शौक़ था। वह अपने तेज़ घोड़े पर स्तेपी में कई दिनों और महीनों तक वन्य पशु-पक्षियों का पीछा किया करता था। बादशाह का एक चहेता उक़ाब था, जिसका जैसा उक़ाब न तो उससे पहले किसी शिकारी के पास था और न ही उसके बाद किसी के पास हुआ।

एक बार बादशाह एक हिरन का पीछा करते-करते निर्जन स्तेपी में पहुँच गया। सूरज निर्ममतापूर्वक तप रहा था, कहीं पानी नहीं था, बादशाह को बहुत तेज़ प्यास लगी थी। अचानक उसे एक चट्टान नज़र आ गयी, जिसमें से पतली धारा में एक चश्मा फूट रहा था। बादशाह ने सोने का प्याला निकालकर उसमें पानी भरा और पीना ही चाहा था कि एकाएक उक़ाब ने झपट्टा मारा और सारा पानी बिखेर दिया।

बादशाह क्रुद्ध हो उठा और उसने उक़ाब पर चिल्लाकर फिर पानी भरा। किन्तु उक़ाब ने फिर झपट्टा मार अपने सीने से बादशाह के हाथ से प्याला गिरा दिया। बादशाह ने क्रोध में खाली प्याला उठाकर उक़ाब के सिर पर दे मारा। उक़ाब मरकर ढेर हो गया। बादशाह चश्मे के पास गया और भय के मारे जड़वत् रह गया: चट्टान की दरार में से एक विशाल सांप रेंगता बाहर निकल आया। चट्टान से जल की नहीं, घातक विष की धार निकल रही थी। बादशाह उछलकर काठी पर सवार हुआ और वहाँ से सरपट दूर भाग चला। किन्तु उस दिन से वह समझ गया कि सतर्कता उतावली से श्रेष्ठ होती है, कि उच्च-पद सांघातिक भूलों से नहीं बचा सकता, कि बुरे और भले में अन्तर बुद्धिमान ही कर सकता है, न कि शक्तिशाली।"

"बहुत हो चुका! चुप हो जा!" बादशाह चिल्लाया और भयानक ढंग से आंखें चमकाता अपने स्थान से उठ खड़ा हुआ। "तुम दोनों ने अपने भाई के साथ षड्यंत्र रचाया है, तुम प्रतिशोध से बचने के लिए, उसके और अपने प्राण बचाने की खातिर दुष्ट को निर्दोष सिद्ध करना चाहते हो। तुम्हारे कहने का अर्थ यह है कि मेरे समक्ष वह दोषी नहीं है, बल्कि मैं मूर्ख हूँ और उसके प्रति अन्याय कर रहा हूँ। अगर ऐसा ही है, तो फिर उसने अपने स्वामी के ऊपर तलवार क्यों उठाई?"

"इसका हमें पता नहीं," भाइयों ने उत्तर दिया। "आप उसी से पूछ लीजिये।"

"बंदी को हाज़िर करो!" ख़ान ने पहरेदारों को आवाज़ दी।

और तीनों भाइयों में सबसे छोटे को ख़ान और वज़ीरों के सामने ला खड़ा किया गया।

युवक को मर्मान्वेषी दृष्टि से घूरते हुए ख़ान ने पूछा:

"बिना कुछ छिपाये सच-सच बताओ, क्योंकि तुम्हें किसी तरह की चालबाज़ी मृत्यु-दण्ड से नहीं बचा सकती – कल रात को तुमने किस इरादे से मेरे पलंग के पास तलवार निकाली थी?"

"आपको मौत से बचाने के लिए, हुज़ूर," युवक ने शान्तिपूर्वक उत्तर दिया।

"तुम्हारे अलावा मुझे मौत का ख़तरा और किस से था?"

"सांप से, जो आपको डसने जा रहा था और जिसे मैंने तलवार से काट दिया।"

"सांप से? तुम झूठ बोल रहे हो! सांप मेरे शयन-कक्ष में आ ही कैसे सकता था?" ख़ान ने विस्मय से पूछा।"

"आपके अत्यधिक अनुभवी वज़ीर, जिन पर आप इतना भरोसा रखते हैं, आपके प्रश्न का उत्तर मुझसे बेहतर ढंग से दे सकते हैं।"

ख़ान लपककर शयन-कक्ष में गया और कुछ समय पश्चात् सिर लटकाये, धीरे-धीरे चलता न्याय-कक्ष में लौट आया। वह डबडबाती आंखों के साथ सबसे छोटे भाई के पास आया और उसे गले लगाकर रुंधे हुए कंठ से बोला:

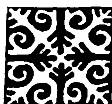
"मुझे क्षमा कर दो, मेरे विश्वस्त मित्र और उद्धारक! अब मुझे सत्य मालूम हो गया है। अपमान के बदले में जो चाहो, मांग लो, मैं सबके समक्ष सौगंध खाकर कहता हूँ कि मैं तुम्हें और तुम्हारे भाइयों को कुछ भी देने से इनकार नहीं करूँगा।"

युवक ने कहा:

"हम सबको जाने दीजिये, जहांपनाह, अपनी सेवा से मुक्त कर दीजिये। हमें अपना देशाटन जारी रखने दीजिये। हमारी यात्रा अभी समाप्त नहीं हुई है, हमने जीवन की पुस्तक, सबसे ज्ञानवर्द्धक पुस्तक अभी आधी भी नहीं पढ़ी है।"

ऐसी प्रार्थना ख़ान के लिए अप्रत्याशित थी। वह फिर क्रुद्ध हो गया, उसका चेहरा तमतमा उठा, पर अब अपना दिया वचन भंग करना असम्भव था।

और तीनों भाई ख़ान को छोड़कर आगे चल दिये।



लकड़हारे की बेटी

किसी ज़माने में एक लकड़हारा रहता था। वह धुएं से काले पड़े मिट्टी के झोंपड़े में अपनी नौ बरस की लड़की के साथ रहता था। वह बहुत ग़रीब था: सामान के नाम पर उसके पास कुल जमा एक टूटी-फूटी कुल्हाड़ी थी और जानवरों के नाम पर – एक मरियल लंगड़ा घोड़ा और बुड्ढा गधा। लेकिन अक़्लमंदों का कहना है: 'धनी का भाग्य उसके पशु-धन पर निर्भर करता है, और निर्धन का – उसकी सन्तान पर। और सचमुच लकड़हारा अपनी बेटी को देखकर अपने सारे कष्ट और अभाव भूल जाता था।

बेटी का नाम आईना-क़ीज़ था। वह इतनी चारु, बुद्धिमान और विनम्र थी कि ऐसा कोई आदमी नहीं मिलता था, जो उसे पहली नज़र में प्यार न करने लगे। दूर-दूर के तम्बू-घरों के बच्चे आईना-क़ीज़ के साथ खेलने आते, दूर-दूर के गांवों के बुज़ुर्ग उससे बातें करने आते।

एक दिन लकड़हारे ने अपने लंगड़े मरियल घोड़े पर लकड़ी का गट्ठर लादा और बेटी से बोला:

"मेरी प्यारी आईना-क़ीज़, मैं बाज़ार जा रहा हूँ और शाम तक लौट आऊँगा। तुम मेरी ग़ैरहाज़िरी में उदास मत होना। अगर मैं लकड़ी बेच पाया, तो तुम्हारे लिए कुछ लेकर आऊँगा।"

"आपकी इच्छा पूरी हो, अब्बाजान," लड़की ने जवाब दिया, "शुभ यात्रा, जाइये, पर ज़रा सावधान रहिये। क्योंकि लोग यों ही तो नहीं कहते हैं कि बाज़ार मनहूस स्थान होता है: वहाँ कुछ लोग पैसा बनाते हैं और कुछ – लूटे जाते हैं। जल्दी से लौटकर आइये, मैं खाना बनाकर आपका इन्तज़ार करती रहूँगी।"

लकड़हारे ने लंगड़े मरियल घोड़े को चाबुक मारा और सफ़र पर रवाना हो गया।

वह बाज़ार में पहुँचकर एक तरफ़ खड़ा हो गया और ग्राहकों की प्रतीक्षा करने लगा। समय बीतता रहा, पर बूढ़े के पास कोई नहीं आया।

उस समय बाज़ार में एक युवा बाय अपनी काली दाढ़ी और रेशमी चोग़े पर इतराता घूम रहा था। उसने फटेहाल बूढ़े को लकड़ियां लिये देखा और उसने उसका मज़ाक़ उड़ाकर बेवक़ूफ़ बनाने की ठान ली।

"ऐ बड़े मियां, लकड़ी बेचनी है?" बाय ने पूछा।

"बेचनी है," लकड़हारे ने उत्तर दिया।

"तुम अपने इस गट्ठर की क्या क़ीमत चाहते हो?"

"एक तंगा।"*

"क्या तुम इस क़ीमत पर लकड़ियां जिस हालत में हैं, उसी हालत में बेचोगे?"

लकड़हारा ग्राहक की बात का अर्थ नहीं समझा और इसमें अपना कुछ नुक़सान न होता सोचकर बोला:

"बेच दूँगा।"

"ठीक है," बाय ने कहा, "यह लो एक तंगा। मरियल घोड़े को लेकर मेरे पीछे-पीछे जल्दी से चलो।"

वे जब बाय के अहाते में पहुँचे, लकड़हारा घर के आगे गट्ठर डालने के लिए रस्सी खोलने लगा। किन्तु तभी बाय ने उसके सीने पर ज़ोर का धक्का मारा और चिल्ला-चिल्लाकर सारा मोहल्ला सिर पर उठा लिया:

"तू यह क्या कर रहा है, बेवक़ूफ़ बुड्ढे? कहीं तू घोड़ा तो अपने साथ ले जाने की नहीं सोच रहा है? मैंने तो तुझसे लकड़ियां 'जिस हालत में थीं, उसी हालत में' ख़रीदी हैं, यानी घोड़ा अब मेरा है। तुझे अपनी क़ीमत मिल चुकी है, इसलिए यहां से दफ़ा हो जा, इसी वक़्त!.."

लकड़हारा विरोध करने लगा, पर बाय कुछ सुनने को तैयार ही नहीं हुआ। वह हाथ नचा-नचाकर ज़ोर से चिल्लाने लगा और अन्त में बूढ़े का हाथ पकड़कर उसे क़ाज़ी के पास खींच ले गया।

कहते हैं: "दुष्ट मालिक तेज़ घोड़े को भी मरियल कर देता है, और दुष्ट क़ाज़ी किसी की अपनी चीज भी परायी बना सकता है।" क़ाज़ी ने वादी व प्रतिवादी के दावे सुन, दाढ़ी सहलाकर बाय के रेशमी चोग़े पर नज़र डाली और अपने फ़ायदे के लालच में फ़ैसला सुना दिया: लकड़हारे को अपने माल की पूरी क़ीमत मिल चुकी है और यदि उसने ग्राहक की शर्तें मानी हैं, तो सारा दोष उसका अपना ही है।

क़ाज़ी का निर्णय सुनने के बाद बाय अपनी काली करतूत पर ख़ुश होकर काफ़ी देर तक ठहाके लगाता रहा, जब कि लकड़हारा बुरी तरह रोता-धोता कमर झुकाये धीरे-धीरे अपने गांव की ओर चल पड़ा।

---

* तंगा: चांदी का पुराना सिक्का।

पिता के लौटने की प्रतीक्षा में आईना-क़ीज़ न जाने कितनी बार देगची के नीचे लकड़ियां जला चुकी थी। जब वह भारी क़दमों से घर में घुसा, लड़की उसकी आंखों में आंसू देखकर डर के मारे कांप उठी। उसने भागकर पिता के सीने पर सिर रख दिया और खोद-खोदकर उसके दुःख का कारण पूछने लगी। लकड़हारे ने उसे सारी आपबीती सुना दी और लड़की अपनी बुद्धिमत्तापूर्ण बातों और स्नेहपूर्ण चुम्बनों से पिता को सान्त्वना दिलाने लगी। किन्तु उसे बूढ़े को शान्त करने में काफ़ी समय लगा।

सुबह लकड़हारा दुःख के कारण सख़्त बीमार हो गया। आईना-क़ीज़ पिता के सीने से लगकर बोली :

"प्यारे अब्बाजान, आज आपकी तबीयत ठीक नहीं है, आपको बिस्तर से नहीं उठना चाहिए। मुझे अकेले बाज़ार हो आने दीजिये। शायद मेरी क़िस्मत आपसे अच्छी निकले और मैं लकड़ियां अच्छी क़ीमत पर बेच दूँ।"

वृद्ध बेटी को जाने देने के लिए किसी तरह तैयार नहीं हो रहा था, पर आईना-क़ीज़ अपनी बात पर अड़ी रही और अन्ततः उसे मना लिया।

"अच्छा, जाओ, आईना-क़ीज़, अगर तुम्हें इतनी इच्छा हो रही है," बूढ़े ने कहा, "पर इतना जान लो कि तुम्हें वापस अपने सामने देखे बिना मुझे बिलकुल चैन नहीं आयेगा।"

आईना-क़ीज़ ने बूढ़े गधे पर लकड़ी का गट्ठर लादा और उसे कमची से हांकती हुई शहर रवाना हो गयी।

आईना-क़ीज़ ने बाज़ार में पहुँचकर भीड़ में काली दाढ़ी और रेशमी चोग़ेवाले बाय को शीघ्र ही पहचान लिया। बाय घमण्ड से सिर ऊँचा किये बाज़ार में घूम रहा था, उसने जैसे ही लकड़ियां लिये लड़की को देखा, वह कुटिल मुस्कान के साथ सीधा उसी के पास आया।

"ऐ लड़की! क्या लकड़ियां बेच रही है?" बाय ने पूछा।

"बेच रही हूँ," आईना-क़ीज़ ने उत्तर दिया।

"इस गट्ठर का क्या चाहती है?"

"दो तंगा।"

"क्या लकड़ियां तू जिस हालत में हैं उसी हालत में बेचेगी?"

"बेच दूंगी, अगर तुम मुझे पैसे 'उसी हालत में दोगे, जिसमें वे हैं'।"

"ठीक है, ठीक है," बाय ने दाढ़ी ही दाढ़ी में व्यंग्यपूर्वक मुस्कराते हुए जल्दी से कहा। "गधे को मेरे पीछे-पीछे हांक ले चल।"

बाय के घर के आगे आईना-क़ीज़ ने पूछा :

"चचा, 'तुम्हारे' गधे को कहाँ बांधूं?"

लड़की की नम्रता से आश्चर्यचकित बाय ने बिना कुछ बोले अहाते के बीचोंबीच गड़े

खंभे की ओर इशारा किया। आईना-क़ीज़ ने गधा बांधकर क़ीमत मांगी। बाय ने खीसें निपोड़कर उसकी ओर दो तंगा बढ़ाये, किन्तु आईना-क़ीज़ ने उससे कहा:

"चचा, तुमने मुझसे लकड़ियां 'जिस हालत में वे थीं, उसी में' खरीदी हैं और लकड़ियों के साथ-साथ गधा भी तुम्हें मिल गया, पर तुमने पैसे भी 'जिस हालत में वे हैं, उसी हालत' में देने का वादा किया था। मैं दो तंगों के अलावा तुम्हारा हाथ भी लेना चाहती हूँ।"

बाय लड़की के मुँह से ऐसी बात सुनकर पहले तो भौचक्का रह गया, पर फिर उसे गालियां और धमकियां देने लगा, लेकिन आईना-क़ीज़ उससे दबी नहीं। तब वे न्याय के लिए क़ाज़ी के पास गये।

क़ाज़ी ने उनकी बात सुनी, लेकिन इस बार उसने दाढ़ी पर कितना ही हाथ न फेरा, कितना ही रेशमी चोग़े को न देखा, उसे बाय को बचाने की कोई तरकीब नहीं सूझ सकी। उसने फ़ैसला यह किया: ग्राहक को लड़की को दो तंगा लकड़ियों के देने चाहिए और अपने हाथ की छुड़ौती के तौर पर पचास अशरफ़ियां देनी चाहिएं।

बाय ग़ुस्से के मारे भूत होने लगा और लकड़ियां भी, लंगड़ा मरियल घोड़ा भी व गधा भी वापस करने को तैयार था, पर अब पछताये क्या होना था।

आईना-क़ीज़ को रक़म सौंपते हुए वह बोला:

"तूने मुझे बेवक़ूफ़ बना दिया, छोकरी, पर किसी के आगे इस बात की डींग मत हांकना। क्या पिद्दी और क्या पिद्दी का शोरबा। मैं हर हालत में तुझसे अक़्लमंद हूँ। इसका यक़ीन करना चाहती है? तो, आ, शर्त लगा लें। हम दोनों क़ाज़ी के सामने अपने-अपने जीवन का एक-एक अद्भुत से अद्भुत और अविश्वसनीय से अविश्वसनीय क़िस्सा सुनाते हैं। जिसका क़िस्सा बेहतर माना जायेगा, वही जीतेगा। पर यह भी याद रख: अगर प्रतिद्वंद्वियों में से किसी ने भी कहानी पर विश्वास नहीं किया और कहानी सुनानेवाले को झूठा कहा, तो वह फ़ौरन हारा हुआ माना जायेगा। तैयार है क़िस्मत आज़माने को? मैं पांच सौ अशरफ़ियां दांव पर लगाता हूँ, और तू अपनी पचास अशरफ़ियाँ दांव पर लगा सकती है..."

"मैं तैयार हूँ, चचा," आईना-क़ीज़ ने उत्तर दिया, "और अपना सिर भी दांव पर लगाती हूँ।"

बाय ने क़ाज़ी को आंख मारी और कहानी सुनाने लगा:

"एक बार मुझे अपनी जेब में गेहूँ के तीन दाने मिले। मैंने उन्हें खिड़की से बाहर फेंक दिया। कुछ ही दिनों में मेरी खिड़की के सामने इतना घना और ऊँचा गेहूँ उग आया कि ऊंटसवार और घुड़सवार कभी-कभी तो उसमें कई-कई दिनों तक भटकते रहने लगे। एक बार ऐसा हुआ कि मेरे चालीस बढ़िया बकरे गेहूँ में घुस गये और ग़ायब हो गये। मैंने उन्हें कितनी ही आवाज़ें दीं, कितना ही ढूंढ़ा, पर बकरों का नाम-निशान भी नहीं

मिला। पतझड़ आयी, गेहूँ पक गया। मेरे मजदूरों ने फ़सल काट ली, पर उन्हें बकरों की हड्डियां तक नहीं मिलीं। उसके बाद गेहूँ को गाहा गया, पीसा गया: तब तक बकरों को सब भूल ही चुके थे। मैंने एक बार पत्नी से ताज़ा रोटी पकाने को कहा और ख़ुद किताब पढ़ने बैठ गया। पत्नी ने रोटी तंदूर में से निकालकर मुझे परोसी। मैंने एक टुकड़ा तोड़ा और चबाने लगा। अचानक मेरे मुंह में कोई बकरे की-सी आवाज़ में मिमियाया – मैंने मुंह खोला... फौरन एक बकरा मेरे मुँह में से निकलकर कूदा, फिर दूसरा, फिर तीसरा – पूरे चालीस बकरे मेरी किताब पर दौड़ने-कूदने लगे। और कितने मुटिया गये थे मेरे बकरे: हर बकरा चार साल के बछड़े जितना था।"

जब बाय चुप हो गया, क़ाज़ी ने भी अविश्वास से सिर हिलाया, पर आईना-क़ीज़ की तो भौं भी नहीं फड़की।

"चचा," उसने कहा, "मुझे तो लगता है कि तुम्हारा क़िस्सा सोलह आने सच है। तुम जैसे अक़्लमंद लोगों के साथ तो इससे भी कहीं मजेदार घटनाएँ घटती हैं। अब मेरा क़िस्सा सुनो।"

और आईना-क़ीज़ ने क़िस्सा सुनाना शुरू कर दिया:

"एक बार मैंने अपने गांव के बीचोंबीच कपास का बीज बोया। पता है, फिर क्या हुआ? अगले दिन उस स्थान पर बादलों तक ऊँचा कपास का पौधा निकल आया और उसकी छाया ऊंटों के तीन दिनों के सफ़र की दूरी तक पड़ने लगी। जब कपास पक गयी, मैंने उसे चुना, साफ़ किया और बेच दिया। बिक्री से मिली रक़म से मैंने चालीस नार* ख़रीदे, उनपर महंगे कपड़े लाद दिये और मेरा बड़ा भाई कारवां लेकर बुख़ारा रवाना हो गया। भाई चला गया और तीन साल तक उसकी कोई ख़बर नहीं मिली, कुछ दिन हुए मुझे उड़ती ख़बर मिली कि रास्ते में किसी काली दाढ़ीवाले आदमी ने उसे लूटकर मार दिया। मुझे हत्यारे को ढूंढ़ पाने की कोई आशा नहीं रही थी, पर भाग्य ने मेरा साथ दिया: अब मैं जान गयी कि हत्यारे तुम ही हो, क्योंकि तुमने मेरे अभागे भाई का रेशमी चोग़ा पहन रखा है।"

आईना-क़ीज़ ने जैसे ही अन्तिम शब्द कहे, क़ाज़ी अपने स्थान पर उछल पड़ा, और बाय फ़र्श पर ही बैठ गया। अब वह क्या करे? यदि कहे कि लड़की झूठ बोलती है, तो उसे शर्त के अनुसार पाँच सौ अशरफ़ियां देनी पड़ेंगी; यदि कहे कि वह सच कहती है... तो इससे भी बुरा होगा: लड़की अपने मारे गये भाई का हरजाना मांगेगी, इसके अलावा महंगे कपड़े से लदे चालीस ऊंट देने होंगे...

अन्त में बाय से न रहा जा सका और वह चिल्ला पड़ा:

"ख़ुदा करे, तेरी ज़बान कटकर गिर पड़े! झूठ बोलती है, छोकरी, तू बिलकुल

---

* नार – एक क़ूबड़वाला ऊँट।

भूठ बोलती है! ले पांच सौ अशरफ़ियां, ले मेरा चोग़ा भी और फौरन यहाँ से दफ़ा हो जा, वरना कहीं मैं तेरी गरदन नहीं मरोड़ दूँ!"

आईना-क़ीज़ ने अशरफ़ियां उठाकर चोगे में बांध लीं और सिर पर पांव रखकर पिता के पास भागी।

लकड़हारा लड़की को देर करते देख चिन्तित हो उठा और बाज़ार की ओर चलने लगा था। उसे शीघ्र ही भागती हुई आईना-क़ीज़ नज़र आ गयी। वह जैसे ही उसके पास पहुँची, उसने बेटी को सीने से चिपटा लिया और आशंका के कारण पूछने लगा:

"आईना-क़ीज़, मेरी आंखों का तारा! तुम इतनी देर कहाँ लग गयी और तुम्हारे साथ हमारा बुड्ढा गधा क्यों नहीं है?"

आईना-क़ीज़ ने उत्तर दिया:

"आपके सिर के ऊपर आसमान सदा साफ़ रहे, अब्बाजान! मैं शहर से सही-सलामत लौट आयी हूँ और गधे को मैंने काली दाढ़ीवाले आदमी को लकड़ियों समेत 'जिस हालत में था उसी में, बेच दिया।"

"मेरी प्यारी बच्ची," लकड़हारा दुःखी स्वर में बोला, "उस निर्मम बाय ने तुम्हें भी धोखा दिया... अब हम कहीं के नहीं रहे, और इसके लिए दोषी मैं ही हूँ।"

"प्यारे अब्बाजान," आईना-क़ीज़ बोली, "आप इतनी जल्दी दिल छोटा मत कीजिये। क्योंकि मुझे लकड़ियों की बहुत अच्छी क़ीमत मिली है।"

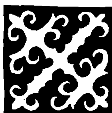
और उसने पिता की ओर लिपटा हुआ रेशमी चोग़ा बढ़ाया।

"यह बहुत खूबसूरत और महंगा चोग़ा है," लकड़हारा वैसे ही दुःखी स्वर में बोला, "मेरे जैसे मोटे काम में यह किस काम आयेगा? और बिना घोड़े और बूढ़े गधे के अब हमें शायद भीख मांगकर गुज़र करनी पड़ेगी।"

तब आईना-क़ीज़ ने बिना कुछ बोले पिता के आगे चोग़ा खोल दिया और उसमें से चमचमाती अशरफ़ियाँ ज़मीन पर बिखर गयीं। लकड़हारा आश्चर्यचकित होकर बेटी को देखता रह गया। उसे इस बात पर विश्वास नहीं हो रहा था कि यह सारा धन वह सपने में नहीं बल्कि वास्तव में देख रहा है। तभी लड़की ने उसके गले में हाथ डाल दिये और उसके साथ शहर में हुई सारी बातें बता दीं।

लकड़हारा बेटी की बातें सुनते-सुनते कभी हंस पड़ता तो कभी रो पड़ता। अन्त में आईना-क़ीज़ ने कहा:

"प्यारे अब्बाजान, जिस जगह धनी कपट जमा करके रखता है, ग़रीब उसी जगह अक़्ल जमा करके रखता है। काली दाढ़ीवाले बाय को अपने किये की उचित सज़ा मिल गयी और उसकी अशरफ़ियों के सहारे आज से हम अपने सारे गांव के साथ सुख-चैन की ज़िन्दगी बसर करेंगे।"



नूरजान के बेटे

बहुत दिन पहले नूरजान नाम का एक भला आदमी रहता था। उसने काफ़ी लम्बी आयु पायी और बुढ़ापा जल्दी नहीं। जब वह पूरे निनानवे वर्ष का हुआ, उसने अपने तीनों बेटों को तम्बू-घर में बुलाया और कहा :

"मेरे बच्चो, मेरे प्यारे बेटो, सबित, ग़बित और खमित! मेरी ज़िन्दगी का दिन सारे कष्टों और चिन्ताओं, सारे सुख और दुःख के साथ ढल चुका है। अब रात होने जा रही है, आंखों के आगे अंधेरा छाने लगा है। अब आराम करने का समय आ गया है। नीन्द की गोद में जाने से पहले तुम सबसे विदा लेना चाहता हूँ और पिता के नाते आदेश देना चाहता हूँ।"

"हम आपकी बात ध्यान के साथ और आदरपूर्वक सुन रहे हैं, अब्बाजान!" भाइयों ने कहा।

नूरजान ने आगे कहा :

"मेरी मृत्यु के बाद तुम लोग सारे जानवरों और मेरी संचित सम्पत्ति को प्यार व ईमानदारी से आपस में बांट लेना और घर-गृहस्थी इस तरह चलाना कि तुम्हारे बारे में न तो सगे बुरा कह या सोच पायें और न ही पराये। यह बात याद रखो कि मेरे रेवड़ में एक भी मेमना और घोड़ों के झुण्ड में एक भी बछेड़ा ऐसा नहीं है, जिसे मैंने चालाकी या धोखाधड़ी से हासिल किया हो। पशुओं के झुण्डों को भेड़ियों से बचाकर रखना और अपनी आत्मा को – झूठ से। मिल-जुलकर रहना और मुसीबत में एक दूसरे का साथ न छोड़ना। और यदि ऐसा हो कि विपत्ति का पहाड़ तुम सब पर एक साथ टूट पड़े तो उससे छुटकारा पाने का यह साधन लो," और नूरजान ने कांपते हाथ से अशरफ़ियों से ठसाठस भरी चमड़े की थैली बच्चों को दे दी। "लो, मेरे प्यारे बेटो! इसमें निनानवे अशरफ़ियां हैं, उतनी ही, जितने बरस मैंने स्तेपी के आकाश तले गुज़ारे हैं। इस रक़म को किसी विश्वस्त स्थान

में छिपाकर रख देना और अपने घर में रोटी का आख़िरी टुकड़ा ख़त्म न होने तक इसे मत छूना। अशरफ़ियों को केवल बुरी से बुरी घड़ी में ही आपस में बांटना। मेरे लिए यह रक़म मेहनत और पसीने, अभावों और आंसुओं का प्रतीक रही है, पर तुम्हारे लिए यह ख़ुशहाली का आधार बने।"

इतना कहकर सफ़ेद दाढ़ीवाले नूरजान ने अन्तिम सांस ली और मृत्यु ने उसकी पलकें वैसे ही कसकर बंद कर दीं, जैसे गृहणियां पतझड़ के वर्षा के दिन तम्बू-घर की चिमनी का मुंह बंद कर देती हैं।

बेटों ने वृद्ध पिता को पूर्ण सम्मान के साथ दफ़ना दिया, सारी रस्में अदा की और अपनी क्षति पर फूट-फूटकर रोये। पिता की क़ब्र पर सबसे छोटा बेटा सबसे ज़्यादा फूट-फूटकर रोया और उसी ने सबसे अधिक शोक मनाया। और नूरजान की अन्त्येष्टि में सारी स्तेपी से आये लोग कहने लगे :

"ऐसे पिता का यश बढ़े, जिसने नूरजान के बेटों जैसे बेटों को पाल-पोसकर बड़ा किया। तीनों बेटे योग्य बांके नौजवान हैं, पर सबसे छोटा सबसे अच्छा है।"

चेहलुम की समाप्ति पर भाइयों ने बिना बहस किये, बिना भला-बुरा कहे विरासत को तीन भागों में बांट लिया, पर यह बात तय करने में काफ़ी समय लगा कि अशरफ़ियों की थैली को कहाँ छिपाया जाये। तब वे पहाड़ में काफ़ी ऊंचाई पर चढ़ गये और चट्टानों के बीच एक गुफा खोजकर, उन्होंने उसमें अपना धन रखकर उसका मुंह पत्थरों से इस प्रकार बंद कर दिया कि चालाक से चालाक चोर को भी उस स्थान में कुछ हाथ लगने की आशा न रहे।

भाइयों ने अपने प्राणों की सौगंध खाकर कहा कि उनमें से कोई भी कभी किसी को रहस्य नहीं बतायेगा और न ही साझे की सम्पत्ति को हाथ लगायेगा। इसके बाद उन्होंने एक दूसरे का प्रगाढ़ आलिंगन किया और एक-एक करके अलग-अलग रास्तों से नीचे उतर आये।

नूरजान की क़ब्र घास और फूलों से ढकती गयी, स्तेपी में कारवां आते-जाते रहे, समय बीतता रहा। आरम्भ में तीनों भाई इतने हिल-मिलकर रहे कि दूर-दराज़ के गांवों में माता-पिता अपने बच्चों को उनका उदाहरण देते थे। बाद में छोटे भाई ने तरह-तरह के निठल्लों और आवाराओं से दोस्ती गांठ ली, शराबख़ोरी और ऐयाशी करने लगा, अपने सामर्थ्य से बढ़कर दावतें देने लगा, घुड़दौड़ों में पैसा गंवाने लगा और रेवड़ को भाग्य भरोसे छोड़ घोड़े पर ख़रगोशों का शिकार करने जाने लगा।

भाई उसे झिड़कियां देते थे :

"तुम्हें क्या हो गया? तुम पिता की सीख भूल गये। समय रहते संभल जाओ, वरना तुम्हारे तन पर फटा कपड़ा भी नहीं बचेगा।"

झिड़कियां सुनकर ख़मित केवल हंस पड़ता था :

"कोई नहीं जानता कि उसका कल क्या होगा।"

"यह सच है," बड़े भाई कहते थे, "हमारा कल कैसा भी क्यों न हो, हमें यह कहावत याद रखनी चाहिए: जब तक जीना, तब तक सीना।"

हुआ वही, जो होना चाहिए था: खमित शीघ्र ही तबाह हो गया। वह अपने बचे-खुचे जानवर बेचकर भाइयों के पास पहुँचा और उन्हें बताया कि उसके रेवड़ को स्तेपी के लुटेरे भगा ले गये। सबित और ग़बित ने दुःख से सिर हिलाया, पर पिता के मरणासन्न अवस्था में कहे शब्द याद कर भाई को डांटा नहीं, बल्कि उसे अपने झुण्डों में से पर्याप्त संख्या में पशु दे दिये, जिससे वह अपने पैरों पर खड़ा हो सके और अपने परिवार का भरण-पोषण कर सके। लेकिन कुछ ही दिन पश्चात् उस इलाक़े के सारे गड़रियों पर अश्रुत-पूर्व विपदा टूट पड़ी।

कड़ाके की गर्मी पड़ रही थी और सारी घास सूख गयी थी। चारे का अभाव हो गया। और शरत् ऋतु में मूसलधार वर्षा होने लगी, समय से पहले प्रचण्ड हिम-पात होने लगा, सारी ज़मीन बर्फ़ से ढक गयी। जानवर भूख और बीमारियों से मरने लगे। सारी स्तेपी में जानवरों की लाशें ही लाशें नज़र आने लगीं। ऐसा समय आ चुका था, जब भाइयों के पास वसीयत में मिले धन को बांटने के अलावा और कोई दूसरा चारा नहीं रहा था।

उन्होंने गुफा के पास पहुँचकर भारी-भरकम पत्थर हटाये और उसके भीतर झांका: थैली जहाँ की तहाँ रखी थी, किन्तु उसमें रक़म कम हो गयी थी। भाइयों ने अधीरता से अशरफ़ियां टोपी में उलट डालीं, उन्हें तीन बार गिना, पर कोई अन्तर नहीं पड़ा। हानि स्पष्ट थी: अशरफ़ियां निनानवे नहीं थीं, जैसा कि उनके पिता ने कहा था, बल्कि कुल छियासठ थीं।

नूरजान के बेटे किंकर्तव्यविमूढ़ हुए अशरफ़ियों के ढेर के सामने बैठे एक दूसरे को तिरछी नज़र से देखने लगे।

सबित ने कहा:

"किसी ग़ैर के पैसे चुराने का तो प्रश्न ही नहीं उठता: अगर चोर को किसी तरह छिपे धन का पता चल भी जाता, तो वह सारी अशरफियां उठा ले जाता, एक भी वहाँ नहीं छोड़ता। इसका मतलब है – चोरी हममें से किसी एक ने की है। लेकिन किस ने?"

"क़सम खाता हूँ, मैंने अशरफ़ियां नहीं निकालीं," ग़बित बोला।

"क़सम खाता हूँ, मैंने भी अशरफ़ियां नहीं निकालीं," खमित बोला।

"तो इसका मतलब यह है कि तुम नीच, सोचते हो कि यह मेरी करतूत है!" सबित गुस्से में चिल्ला पड़ा।

"कौन जाने, शायद तुम्हारी ही हो!" ग़बित झल्लाकर बोला।

बड़ा भाई मझले भाई पर टूट पड़ा और उसका गला दबा लिया। धुंधली गुफा में छुरे बिजली की तरह चमक उठे।

"ठहरो, भाइयो, ठहरो!" खमित चिल्लाया। "अभी कुछ देर पहले तुमने मुझे ताना दिया था कि मैं अब्बा की सीख भूल गया हूँ, पर तुम खुद अब क्या कर रहे हो। मेरी बात पूरी सुन लो, और इस मामले को शान्ति से निबटा लेंगे। क्योंकि हम कितना ही क्यों न झगड़ें, राज़ किसी तरह नहीं खुलनेवाला। शायद कोई जिन गुफा में आकर कुछ अशरफ़ियां उठा ले गया। हम अब हानि के कारणों के बारे में अटकलें नहीं लगायेंगे। धन अभी भी कम नहीं बचा है: अब्बा की इच्छानुसार इसे बराबर-बराबर बांट लेते हैं और इस झगड़े को हमेशा के लिए भुला देते हैं।"

भाइयों ने छुरे झुका लिये और सबित हांफता हुआ बोला:

"तुम्हारा धन्यवाद, खमित, कि तुमने हमें व्यर्थ के रक्तपात से बचा लिया। सोने के पहाड़ भी मनुष्य के खून के एक बूंद की बराबरी नहीं कर सकते। लेकिन क्या हम आज से शान्ति से रह सकते हैं, जब हमें एक दूसरे पर विश्वास ही नहीं रहा? नहीं, केवल हमारे स्वर्गीय पिता के मित्र, बुद्धिमान बेलतेकेय ही हमारा न्याय कर सकते हैं और हममें मेल करा सकते हैं। चलो, बेलतेकेय से न्याय कराने चलते हैं।"

तीनों भाई पहाड़ से उतरकर घोड़ों पर सवार हो, स्तेपी में सरपट घोड़े दौड़ाते उस स्थान की ओर चल पड़े, जहाँ बेलतेकेय का खानदान जाड़े में पड़ाव डाले हुआ था।

लम्बी से लम्बी और कठिन से कठिन यात्रा भी कहीं न कहीं समाप्त हो ही जाती है। चालीसवें दिन भाई यशस्वी बेलतेकेय के गांव में पहुँच गये। वृद्ध ने अपने मित्र के पुत्रों का हार्दिक स्वागत किया और उन्हें स्वादिष्टतम खाने और क़िमिज़ परोसने को कहा।

वृद्ध बोला:

"सुबह तक आराम करो। कल मैं तुम्हारे झगड़े का निबटारा करूँगा।"

रात बीत गयी। सफ़ेद दाढ़ीवाले बेलतेकेय ने तड़के ही अतिथियों को नाश्ता कराया और फिर बोला:

"तुम्हारे झगड़े के बारे में सोचता-सोचता मैं सारी रात नहीं सोया। मुझे विश्वास नहीं होता कि मेरे मित्र नूरजान के बेटों में से कोई चोर हो सकता है। लेकिन तुम्हें अपनी निर्दोषता सिद्ध करनी होगी और इसका केवल एक ही तरीक़ा है। तुम इसी समय अपने पिता की क़ब्र पर जाओ और उसे खोदकर मृत की दाढ़ी के तीन बाल लाकर दो, हर आदमी एक-एक बाल लाये, तुम केवल इसी प्रकार मेरे और एक दूसरे के समक्ष अपने को निर्दोष सिद्ध कर सकते हो।"

भाई सोच में पड़ गये। सर्वप्रथम सबित ने मौन भंग किया:

"मैं चोर नहीं हूँ। लेकिन, आदरणीय बेलतेकेय, आपने जो कहा है, उसे करने से तो मैं सारा सन्देह और दोष मेरे सिर मढ़ा जाना बेहतर समझूँगा।"

"मैं भी चोर नहीं हूँ," ग़बित बोला, "लेकिन मैं भी, आदरणीय बेलतेकेय, आपका

कहा करने से इनकार करता हूँ, भले ही आप मेरे अब्बा के दोस्त हैं और हम तीनों से उम्र में दुगुने बड़े हैं।

पर खमित बोला :

"लगता है, मेरे भाई अपना भेद खुलने से डरते हैं। क्या ये दोनों ही मिलकर मुझसे छिपकर गुफा में नहीं गये थे? मैं भी चोर नहीं हूँ, ज्ञानी बेलतेकेय, इसीलिए मैं इसी क्षण पिता की क़ब्र पर जाने और आपके आदेश का ठीक-ठीक पालन करने को तैयार हूँ। सत्य की जय हो!" और उसने दरवाज़े की ओर क़दम बढ़ाया।

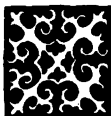
तभी सफ़ेद दाढ़ीवाले बेलतेकेय ने हथेलियां ऊपर की ओर किये हाथ आगे बढ़ाये और प्रभावशाली स्वर में बोला :

"ठहरो, लड़के, सफ़र पर जाने की जल्दबाज़ी मत करो! सत्य की जय हो चुकी है। धन तुम्हीं ने चुराया है, खमित, तुम्हीं ने और किसी ने नहीं। जो अपने पिता की क़ब्र को नापाक करने को तैयार है, वह सब कुछ कर सकता है; चोरी भी, अपराध भी, नीचतापूर्ण धोखाधड़ी भी और शपथभंग भी। तुम, अभागे, अपने कलंक और अपराध का प्रायश्चित कैसे करोगे?"

खमित के चेहरे पर हवाइयां उड़ने लगीं और वह जड़वत् ज्ञानी के सामने खड़ा रहा। उसने सिर और आंखें नीचे झुकाये अपने पर लगाया आरोप सुना और फिर बिना कुछ कहे, हाथों से चेहरा ढंककर बाहर भागा और उछलकर घोड़े पर सवार हो सरपट निस्सीम हिम में आंखों से ओझल हो गया।

उस दिन से उसे किसी ने न किसी गांव में देखा, न किसी चरागाह में और न ही किसी ने अतीत या वर्त्तमान की चर्चा छेड़ते समय बातचीत में उसका नाम लिये जाते सुना।

बड़े भाइयों ने डबडबाती आंखों से वृद्ध बेलतेकेय को उसके न्यायपूर्ण निर्णय के लिए धन्यवाद दिया और अब्बा का स्वर्ण लेकर अपने परिवारों में लौट आये। फिर कभी उनमें आपस में कोई झगड़ा नहीं हुआ, वे मिलजुलकर पशुओं के झुण्ड चराते-हांकते और उनमें वृद्धि करते रहे, बाल-बच्चों और पोते-पोतियों का पालन-पोषण करते रहे और बहुत दिनों तक जिये, जब तक कि उनके जीवन का भी कष्टों व चिन्ताओं, दुःख व सुख से भरा अन्तिम दिन न आया।



अदाक़
(दंत-कथा)

ख़ान अबलाय बहुत भयंकर, क्रूर और निर्मम था। लोग उसे "क़ानी-शेर" – रक्तपिपासु – अकारण ही नहीं कहते थे। उसका पेट हमेशा भरा रहता था, पर आंखें सदा भूखी रहती थीं, उसकी पीठ कभी बोझ से दबी नहीं थी, पर अपने स्वभाव से वह पत्थर से भी कठोर था, उसके शरीर ने कभी ठण्ड का स्पर्श नहीं जाना था, पर उसका हृदय बर्फ़ से भी ज़्यादा ठण्डा था। वह मां से बच्चा छीन लेता था, दूल्हों से दूल्हन, घुड़सवार से घोड़ा, राहगीर से – लाठी, सिर से पोस्तीन की फटी टोपी भी उतार लेता था और नंगे सिरवालों का सिर तक धड़ से अलग कर देता था। उसने ज़िन्दा और मरे, पास के और दूर के – सब पर असह्य कर लाद दिये थे: चारे पर भी कर मांगता था और चारे के अकाल में भी, अच्छे मौसम के लिए भी और बुरे के लिए भी, ऊंट के पांवों के निशानों के लिए भी और चूल्हे से उठते धुएं के लिए भी। लोग दुःख के मारे कहने लगे: "न्यायप्रिय के राज में सदा वसन्त रहता है, अत्याचारी के राज में वसन्त झांकता भी नहीं।"

अबलाय आये दिन अपनी असंख्य सेना लेकर पड़ोस के देशों पर आक्रमण किया करता था और उसके रक्तपातपूर्ण हमलों के बाद स्तेपी में कई दिनों तक घास नहीं उगती थी।

जीतकर लौटने के बाद ख़ान अगले आक्रमण तक अपना समय दावतों और भोगविलास में बिताता था, घुड़दौड़ करवाता था, जंगली जानवरों का शिकार करता था, प्रतियोगिताएं करवाता था और जैसे उसके व्यभिचार-प्रिय मनोरंजन की कोई सीमा नहीं होती थी, वैसे ही बंदियों और प्रजा पर निर्मम अत्याचार की भी।

एक बार क़लमीक़ी स्तेपी से क़ीमती माल लूटकर लौटने पर ख़ान ने कोकचेताऊ की चट्टानी पहाड़ी की तलहटी में, निर्मल जल की झील बोराबाय के किनारे एक सुरम्य स्थान में पड़ाव डाला और अपने सैनिकों के साथ शत्रु क़बीले पर अपने विजय की ख़ुशियां मनाने लगा। दावत के लिए हज़ारों मोटी-ताज़ी बछेड़ियां और दसियों हज़ार भेड़ें काटी गयी, क़िमिज़ की नदियां बहने लगीं। तारीफ़ों के पुल बांधते-बांधते चाटुकार शायरों की जीभें सूज गयीं, प्रशस्ति-गान करते-करते गायकों के गले बैठ गये, दोम्ब्राओं व कोबिज़ों

के तार वादकों को चालीस बार बदलने पड़े, पर अबलाय था कि नये-नये मनोरंजनों की मांग किये जा रहा था और किसी प्रकार सन्तुष्ट होने का नाम ही नहीं ले रहा था।

राग-रंग जब अपने ज़ोरों पर था, वह एकाएक अपने रंगबिरंगे क़ालीन पर से उठा और तम्बू-घर में गया, जहाँ औरों के लिए प्रवेश निषिद्ध था, और वहाँ से वसन्त के सुहावने दिन जैसी सुन्दर क़लमीक़ी युवती का हाथ पकड़े बाहर निकला।

सैनिकों की नज़र कमसिन सुन्दरी पर पड़ते ही उनमें हर्षावेश की एक प्रचण्ड लहर व्याप्त हो गयी, उनमें उस पर से नज़रें हटाने की शक्ति ही नहीं रही।

खान ज़ोर से चिल्लाया:

"इस लड़की से कौन शादी करना चाहता है? आवाज़ दो!"

भीड़ उमड़ पड़ी, हज़ारों हाथ खान की ओर बढ़ गये, आवाज़ों की शोर से आस-पास के इलाक़े गूंज उठे, मानो उन्मत्त ऊंटों का झुण्ड बलबला उठा हो।

"मैं! मैं! क़लमीक़ लड़की को मुझे दे दो, खान!" सिपाही चिल्लाने लगे, वे एक दूसरे से ज़ोर से चिल्लाने की कोशिश कर रहे थे।

केवल सीधे-सादे कपड़े पहने एक बांका नौजवान, जिसकी दृष्टि निर्मल थी और मुख से ओज टपक रहा था, एक ओर मौन खड़ा उदासी से युवती को देखता रहा। वह सबसे युवा सैनिक और गड़रिये का लड़का अदाक़ था।

खान ने हाथ उठाया और तत्क्षण शान्ति छा गयी।

"एक दुलहन के लिए हद से ज़्यादा दूल्हे हैं!" उसने ठहाका लगाते हुए कहा और बंदिनी की ओर मुड़ा:

"तुम खुद अपना पति चुन लो, हम फ़ौरन तुम्हारी शादी कर देंगे।"

युवती का चेहरा पीला पड़ा था, वह उदास थी, किन्तु उसने खान को निःसंकोच दृढ़तापूर्वक उत्तर दिया:

"मैं चाहती हूँ, हुज़ूरे आलम कि मेरा पति वही हो, जो शूरता और बुद्धिमत्ता में सबसे श्रेष्ठ हो।"

"इसका पता कैसे लगाया जाये?"

"आप, हुज़ूरे आलम, झील के ऊपर की सबसे ऊंची चोटी पर एक सफ़ेद झण्डा लगाने का हुक्म दीजिये। जो कोई एक ही तीर चलाकर डण्डे सहित झण्डे को गिरा देगा, वही सर्वश्रेष्ठ शूरवीर माना जायेगा। इसके बाद मैं एक लोक-कथा सुनाऊँगी, और जो उसका अर्थ बतायेगा, वही सबसे बुद्धिमान माना जायेगा।"

"ठीक है," खान ने कहा।

कल्पनातीत ऊंचाई पर सफ़ेद झण्डा फहराने लगा, पर लगे तीरों के बादल के बादल ऊपर उड़े और वर्षा की बूंदों की तरह नीचे चट्टानों पर गिर पड़े: एक भी तीर निशाने पर नहीं लगा।

ख़ान आगबबूला हो उठा। उसने युवती की चोटी पकड़कर अपने पैरों में गिरा दिया और उस पर हाथ उठाया :

"लौंडी, तूने मुझसे चालबाज़ी करने और मेरे सिपाहियों को नीचा दिखाने की सोची है! तूने उन्हें एक असम्भव काम करने को कहा है। दुनिया में ऐसा कोई वीर नहीं है, जिसका तीर इतनी ऊँचाई तक जा सके।"

उसी समय आकाश में किसी की दर्दभरी चीख सुनाई दी। सबने सिर उठाकर देखा : एक जंगली बतख डर के मारे सर्र से पहाड़ी पर से उड़कर निकली और उसका पीछा एक रक्तपिपासु उक़ाब कर रहा था, जो उसे दबोचने ही वाला था। अचानक भीड़ के ऊपर एक तीर सनसनाता हुआ निकला और पलक झपकते उसने सफ़ेद झण्डे को भी गिरा दिया था और ऊपर उठकर उक़ाब की गरदन में जा धंसा। हिंस्र पक्षी खून में लथपथ पहाड़ी की ढलान पर लुढ़कता हुआ झील में जा गिरा, जब कि अनाहत बतख आकाश की नीलिमा में ओझल हो गयी।

"तीर किसने चलाया?" आश्चर्यचकित ख़ान ने पूछा।

कोई उत्तर नहीं मिला।

"तीर किसने चलाया?" उसने दुबारा पूछा।

तब सिपाहियों ने एक साथ उत्तर दिया :

"अदाक़ ने!"

"मेरे पास आओ, अदाक़, मैं तुम्हें देखना चाहता हूँ, बहादुर," ख़ान ने कहा।

बांका नौजवान जब उसके पास पहुँचा, तो उसने उसे यह कहते हुए सीने से लगा लिया :

"मैं तुम्हारी तीरंदाज़ी की तारीफ़ करता हूँ। मुझे आज तक मालूम ही नहीं था कि तुम सचमुच मेरे सबसे अधिक शूरवीर सैनिक हो। इस क़ैदिन को ले जाओ। यह तुम्हारी है!"

"मुक़ाबला अभी ख़त्म नहीं हुआ है, हुज़ूरे आलम!" अदाक़ ने कहा। "रूपवती को अभी एक दंत-कथा सुनाना और बाक़ी है।"

ख़ान ने क़लमीक़ युवती पर नज़र डाली और युवती अपनी आस्तीन से तिरस्कार के आंसू पोंछकर उठ खड़ी हुई और दंत-कथा सुनाने लगी :

"एक बार एक दुष्ट चील एक कबूतरी के घोंसले पर टूट पड़ी। वह उसके बच्चे के टुकड़े-टुकड़े करनेवाली ही थी कि कबूतरी स्तेपी पर चीखती हुई उड़ गयी और तब उसे एक बाज़ मिला। उसके दुःख के बारे में जानकर बाज़ चील पर टूट पड़ा और उसने उसका सिर फोड़ दिया।

'हम तुम्हारा एहसान कैसे चुकायें, हमारे उद्धारक?' कबूतरी ने पूछा।

बाज़ बोला :

'जब तुम्हारी बच्ची बड़ी हो जाये, उसके पंख मज़बूत हो जायें, तो वह मेरे पास आये, जिससे मैं उसके सीने के गोश्त का एक टुकड़ा चोंच मारकर निकाल लूँ और अपनी भूख मिटा लूँ।'

बहुत से दिन बीत गये। बाज़ इस घटना को कभी का भूल चुका था, पर बुड्ढी कबूतरी को वह सदा याद रही और वह अपनी बड़ी होती बेटी को देख-देखकर डर के मारे सूखती रही। इस बीच दिन दूनी रात चौगुनी, खिलती कली-सी उसकी बेटी युवावस्था में पक्षियों में सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी हो गयी।

उससे एक बहादुर बाज़ को प्यार हो गया, और वह भी उस से प्यार करने लगी।

'तुम सदा के लिए मेरी हो जाओ!' बाज़ उसे मनाने लगा।

किन्तु युवा क़बूतरी ने उत्तर दिया:

'मैं पहले एक बाज़ के प्रति अपना कर्त्तव्य निभाऊँगी।' और उसने प्रियतम को अपने उद्धार के बारे में बता दिया।

'तुम जाओ,' बहादुर बाज़ ने रोते हुए कहा। 'प्राण जाये, पर वचन न जाये। मैं तुम्हें नहीं रोकूँगा।'

दूल्हे और दुल्हन ने फूट-फूटकर रोते हुए एक दूसरे से विदा ली और कबूतरी सारी स्तेपी पार कर बाज़ को खोजने लगी।

रास्ते में एक चील उस पर टूट पड़ी। वह उसके चोंच मारने ही जा रही थी, पर अपरिचिता की दुःख गाथा सुन उसके हृदय में दया उमड़ पड़ी और उसने उसे छोड़ दिया।

फिर उसे तीन उल्लू मिले। लेकिन उन्होंने भी, उसकी बहादुरी के बारे में सुनकर तथा यह जानने पर कि चील ने उस पर दया की, उसे नहीं छुआ।

आखिर कबूतरी ने दूर इलाक़े के छोर पर बाज़ का गांव ढूंढ़ लिया।

'तुम कौन हो?' बाज़ ने सुन्दरी से पूछा।

उसने उसे गुज़री घटना की याद दिलायी। बाज़ बोला:

'मैंने तुमसे सुन्दर और शुद्धहृदय पक्षी कभी नहीं देखा। पर मैंने तो कभी तुम्हारी मां से वचन लेकर मज़ाक़ किया था। मैंने तुम्हें बचपन में इसलिए थोड़े ही बचाया था कि तुम्हारी जवानी में तुम्हारा बुरा करूँ। तुम चैन से अपने दूल्हे के पास लौट जाओ।'

कबूतरी अपार हर्ष के साथ अपने प्रिय बाज़ के पास उड़ चली, पर वह अपने घोंसले से थोड़ी-सी दूरी पर थी कि एक निर्मम उक़ाब ने उसे पकड़ लिया और उसकी विनती व आहों को अनसुनी कर परदेस ले गया। और कौन जाने उक़ाब के क्रूर पंजों में फंसी उस अभागिन चिड़िया पर क्या बीती ..."

युवती की कहानी पूरी होने तक किसी के मुंह से एक शब्द भी नहीं निकला, न कोई कवच खनका, न झील में किसी लहर ने छपाका मारा, न घास की कोई पत्ती सरसरा-यी और खान स्वयं भी काफ़ी देर तक मौन बैठा सोचता रहा।

"तुम्हारी कहानी बहुत पेचीदा और उलझी हुई है," अन्त में खान कह उठा। "तुम इसका अर्थ बता सकते हो, अदाक़?"

"बता सकता हूँ," बांके नौजवान ने उत्तर दिया। "लेकिन, जहांपनाह, पहले आप सब सिपाहियों के सामने वचन दीजिये कि मेरी बात सुनकर न आप क़ैदिन को मौत की सज़ा देंगे, न उससे बदला लेंगे और न ही मुझसे।"

"वचन देता हूँ!" कुतूहल से दग्ध खान ने कहा। "जल्दी से बताओ!"

अदाक़ ने कहा:

"आप ने अभी-अभी कहानी नहीं, एक सच्चा दुःख भरा क़िस्सा सुना है: रूपवती ने उसमें आप-बीती सुनायी है। जब यह लड़की नन्ही बच्ची थी, इनके तम्बू-घर को स्तेपी के एक डाकू ने लूट लिया था, पर किसी उदारहृदय वीर ने, जो संयोगवश पास में ही था, बच्ची को मौत से बचा लिया और लुटेरे को मार डाला। वीर ने मज़ाक़ में कहा कि यह लड़की सयानी होने पर उसके पास आये और उसकी पत्नी बन जाये। समय बीतता रहा। लड़की बड़ी होती रही और ऐसी हो गयी, जैसी कि आप उसे देख रहे हैं। इसे एक लायक़ बांके नौजवान से प्रेम हो गया। किन्तु जब उसने इसका हाथ मांगा, इसने सारा क़िस्सा उसे सुना दिया और बांके नौजवान ने अपने सुख को ठुकराकर ज़ोर देकर कहा कि ईमानदार आदमी के लिए अपने दिये वचन को तोड़ना मृत्यु से भी बुरा होता है।

लड़की का वीर तक पहुँचने का रास्ता आसान नहीं रहा। एक दिन एक परदेसी ने इस पर हमला कर दिया, पर यात्रिणी की असाधारण आप-बीती सुनकर उसके मन में इसके प्रति सम्मान जाग उठा और उसने इसको छोड़ दिया। फिर निर्जन स्तेपी में इसे तीन चोरों ने पकड़ लिया। युवती के साहस और दृढ़निश्चयिता से विस्मित हो उन्होंने भी इसे छोड़ दिया और कहा:

"हम क्या जंगली जानवरों से भी गये-बीते हैं, जो इस निडर लड़की की बेइज़्ज़ती करें, जिस पर अनजाने परदेसी तक को दया आ गयी!"

काफ़ी समय तक भटकते रहने के बाद सुन्दरी ने वीर का ठिकाना खोज लिया। उस नेक आदमी ने मिलने पर इससे क्या कहा, वह आप इसकी कहानी से जान चुके हैं।

लेकिन जब लड़की आशा संजोये ख़ुशी-ख़ुशी अपने देश अपने मंगेतर के पास लौट रही थी, खान, तुमने इसे क़लमीक़ी स्तेपी में देख लिया और निर्मम उक़ाब की तरह इसे पकड़कर परदेस ले आये। और कौन जाने तुम्हारे चंगुल में फंसकर अब इसके भाग्य में क्या बदा है।"

"अदाक़ ने सच कहा?" खान ने युवती से पूछा।

"अदाक़ सच कहता है, खान," क़लमीक़ी युवती ने उत्तर दिया।

खान की भौंहें सिकुड़ गयी, पर उसने अपने क्रोध व खीज पर नियंत्रण करके कहा:

"बंदिनी के भाग्य के बारे में बातें करने से क्या लाभ, जब उसका निर्णय हो ही

चुका है... तुमने, अदाक़, इसे मुक़ाबले में जीत लिया है। मैं इसे तुम्हें सौंप रहा हूँ और यह शर्त के अनुसार तुम्हारी बीवी बनेगी।"

सैनिकों ने ईर्ष्या से अदाक़ की ओर मुड़कर देखा और क़लमीक़ी युवती भी कुछ आशा लगाये उसे अनिमेष देखने लगी। किन्तु बांका नौजवान मुस्कराकर बोला:

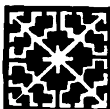
"आज तक, ख़ान साहब, आप मेरे शौर्य के बारे में कुछ नहीं जानते थे और आपको अनुमान भी नहीं था कि आपके ग़रीब से ग़रीब सिपाही के सिर में भी बुद्धि है, पर मेरे दिल को तो आप अभी तक नहीं समझ पाये हैं। जो चीज़ मेरी है ही नहीं, उसे मैं ले ही कैसे सकता हूँ! क्या मैं उन घिनौने चोरों से भी गया-गुज़रा हूँ, जिन्होंने निरीह लोगों को लूटते हुए भी इस युवा दुलहन पर दया की? लेकिन जब आपने इस बंदिनी को मुझे भेंट कर ही दिया है, तो इसके भाग्य का निर्णय करने का अधिकार मुझे है। रूपवती, तुम मेरे घोड़े पर सवार हो जाओ और उसे सरपट दौड़ाती अपने प्रियतम के पास जाओ, तुम्हारी यात्रा सफल रहे और तुम जीवन भर सुखी रहो!"

ये शब्द सुनकर सैनिक स्तब्ध रह गये। ख़ान अबलाय भी चुप था। लड़की ने अदाक़ को सिर नवाकर गद्‌गद कंठ से कहा:

"तुम्हारी कृपालुता के लिए, तुम्हें बहुत-बहुत धन्यवाद सज्जनों के सिरमौर, अदाक़! मैं तुम्हें सच-सच बता दूँ कि अगर तुमने मुझे अपनी पत्नी बनाना चाहा होता, तो मैं बोराबाय झील में कूद पड़ती और उसके बर्फ़ीले तल में अपने जीवन का अन्त कर देती, पर, बांके नौजवान, तुमने मेरा जीवन और मेरी ख़ुशियां मुझे लौटा दीं। तुम मेरे मुंहबोले भाई बनो। तुम मेरे साथ चलो और मेरी शादी में सबसे सम्मानित मेहमान बनो!"

तब सारे सैनिक अदाक़ के कार्य से अभिभूत होकर उसका आलिंगन करने लगे और उन्होंने अदाक़ को युवती के साथ जाने की इजाज़त देने के लिए ख़ान को मना लिया।

अदाक़ और क़लमीक़ी सुन्दरी तेज़ घोड़ों पर सवार हो गये और उनकी लगामें खींचकर स्तेपी में हवा से बातें करते सफ़र पर निकल पड़े।



चालीस गप्पें

बहुत दिन पहले स्तेपी में एक लालची और क्रूर ख़ान राज करता था। वह सैनिक अभियानों, दावतों, शिकार और कोलाहलपूर्ण खेलों से ऊब चुका था। तब उसने स्तेपी के कोने-कोने में अश्रुत-पूर्व मुनादी करवाने के लिए ढिंढोरची भेज दिये:

"जो कोई ख़ान को बिना कोई सच्ची बात कहे, बिना अटके चालीस गप्पें सुनायेगा, उसे अशरफ़ियों से भरी बोरी इनाम में दी जायेगी! लेकिन जो भी कहानी सुनाते समय अटका या उसमें एक भी सच्ची बात कही, उसकी ख़ैर नहीं! ख़ान उसे काल-कोठरी में बंद करवाके भूखों मार देगा!"

कहते हैं, सोने की ख़ातिर तो साधु भी सच्चे रास्ते से डिग जाता है। शुरू में ख़ान के डेरे की तरफ़ आक़िनों, क़िस्साख्वांओं और हाज़िरजवाब लोगों की भीड़ उमड़ पड़ी।

किन्तु एक भी गपोड़िया ख़ान को खुश नहीं कर सका और उन सबको एक-सी कष्ट-दायक सज़ा भुगतनी पड़ी: हज़ारों अभागे लोग काल-कोठरियों में डाल दिये गये। अन्त में गप्पें सुनाकर ख़ान का मनोरंजन करने के इच्छुक लोगों का ख़ात्मा हो गया।

ख़ान अपने शयन-कक्ष में सुसज्जित पलंग पर गहरी उदासी में डूबा लेटा हुआ था। उसे घेरे खड़े वज़ीर डर के मारे हिल-डुल भी नहीं रहे थे। सोने के थालों में उसके लिए अत्यन्त स्वादिष्ट व्यंजन और पेय लानेवाले नौकर दोहरे झुककर उसके आगे खड़े हुए थे।

ख़ान हाथ के इशारे से खाने हटवा देता और समय-समय पर अग़ल-बग़ल इस तरह देखता कि मारे डर के सबकी ऊपर की सांस ऊपर और नीचे की – नीचे रह जाती।

ठीक उसी समय ख़ान के सजे-धजे तम्बू-घर के सामने भिखारियों का झोला लिये एक हंसमुख, चचोड़ी हुई हड्डी जैसा दुबला-पतला, फटेहाल, नंगे पैर लड़का आ खड़ा हुआ।

"जहाँ घूमने की मनाही है, वहाँ क्यों मटरगश्ती कर रहा है?" पहरेदार उस पर बरस पड़े। "क्या चाहता है?"

"मैं ख़ान को चालीस गप्पें सुनाने आया हूँ," छोकरे ने तपाक से जवाब दिया।

पहरेदार को लड़के पर दया आ गयी।

"भाग जा, बेवक़ूफ़! क्यों मुसीबत मोल लेता है? काल-कोठरियां तेरे बिना भी खचा-खच भरी पड़ी हैं। तू ज़िन्दगी से ऊब गया है क्या?"

"घुल-घुलकर मरने से तो एक बार में जान गंवा देना बेहतर हैं," फटीचर ने पहरेदारों को आंख मारकर कहा।

"क्या तुझे खान से बिलकुल भी डर नहीं लगता?" सैनिकों ने आश्चर्य व्यक्त किया।

"हिम्मते मरदां, मददे खुदा!" लड़के ने मुस्कराकर कहा।

और उसे खान के तम्बू-घर में पहुँचा दिया गया।

खान ने लड़के की फटी टोपी और मैले, बिवाइयाँ फटे पैरों पर नज़र डाली और उसके होंठ गुस्से के मारे फड़क उठे।

"तूने चिथड़ों में खान की नज़रों के सामने आने की हिम्मत कैसे की? मैं तुझे पिस्सू की तरह नाखून से कुचल दूँगा!"

"आप नाराज़ न होइये, हुज़ूरे आलम," नन्हे भिखारी ने खान से नज़रें बराबर करके कहा, "जल्दबाज़ी का नतीजा अच्छा नहीं निकलता। इससे तो मेरी गप्पें सुनकर आप मुझे अशरफ़ियों से भरी बोरी दिलवाने का हुक्म देंगे तो कहीं ज़्यादा बेहतर होगा।"

खान गुस्से में तकिये का सहारा लेकर अधलेटा हो गया और भयानक स्वर में फुफकारा:

"अगर ऐसा ही है, तो सुनाओ। मैं सुन रहा हूँ।"

और लड़के ने सुनाना आरम्भ कर दिया:

"मेरे जन्म से कोई सात बरस पहले की बात है कि मैं अपने बारहवें पोते का घोड़ों का झुण्ड चरा रहा था।

एक बार काफ़ी रात गये मैं घोड़ों को पोखर पर ले गया। सूरज पूरी तेज़ी से चमक रहा था और इतनी गर्मी थी कि चिड़ियों के पंखों से धुआं उठ रहा था और दुमों से – लपटें। इसलिए मुझे झील का पानी तक जमा देखकर बिलकुल भी अचरज नहीं हुआ।

मैं लगा कुल्हाड़ी से बर्फ़ काटने। पर मेरी कुल्हाड़ी पहली चोट मारते ही टुकड़े-टुकड़े हो गयी, पर बर्फ़ बाल जितनी भी नहीं फटी। मैं सोचने लगा: अब क्या करूँ? तभी मेरे दिमाग़ में विचार कौंधा!

मैंने कंधों पर से अपना सिर उतारा, गरदन कसकर पकड़ ली और लगा माथे से वर्फ़ पर चोटें मारने। थोड़ी देर में आखिर मैंने बर्फ़ में खड्डा खोद ही लिया। खड्डा इतना बड़ा था कि उसमें कानी उंगली बड़े आराम से जा सकती थी। उसी खड्डे में से मेरे घोड़ों के सारे झुण्ड ने, जिसमें एक लाख घोड़े थे, भरपेट पानी पिया।

घोड़ों ने पानी पिया और घास चरते हुए इधर-उधर घूमने लगे। तब मैं झुण्ड की ओर पीठ करके बैठकर घोड़ों की गिनती करने लगा, सब सही-सलामत हैं या नहीं। मैंने देखा – एक बछेड़ा कम है। आखिर वह गया कहाँ?

मैं फंदा लगा डण्डा रेत में गाड़कर उस पर चढ़ गया और अग़ल-बग़ल देखने लगा कि कहीं बछेड़ा तो नज़र नहीं आ रहा है।

नहीं, कुछ नज़र नहीं आया।

फिर मैंने डण्डे के ऊपरी सिरे में छुरा गाड़ दिया व कुछ और ऊपर चढ़ गया। फिर भी कुछ नज़र नहीं आया।

तभी मुझे याद आया कि मुझे बचपन से ही साक़िच* के बजाय सुइयां चबाने की आदत है। मैंने मुंह में से सूई निकालकर छुरे की मूठ में गाड़ दी – अब जो हो, सो हो – और उससे भी ऊपर चढ़ गया।

न जाने पूरे दिन रेंगता चढ़ता रहा या पूरा महीना, पर जैसे ही मैंने सूई के नाके में से झांककर देखा, खोया हुआ बछेड़ा मुझे फ़ौरन नज़र आ गया: उफनते समुद्र के बीचों-बीच सूई जैसी नुकीली चट्टान निकली हुई थी, बछेड़ा उस चट्टान पर एक सुम पर खड़ा था और चट्टान के चारों ओर, लहरों पर उसका बछेड़ा कूद-फांद रहा था।

मैंने ज़्यादा देर सोच-विचार नहीं किया, डण्डे पर सवार हो गया और छुरे से चप्पू की तरह खेता समुद्र पर तैरने लगा। खेता रहा, खेता रहा, पर फिर भी वहीं का वहीं रह गया। तब मैं छुरे की धार पर जा बैठा और डण्डे से समुद्र तल पर धक्का मारकर पलक झपकते चट्टान के पास जा पहुँचा। पर डण्डा तल में डूब गया, मानो वह लोहे का बना हो।

बिना फंदे के बछेड़े को अब कैसे पकड़ूं? मैंने रेत से रस्सी बटी, घोड़े की गरदन में डाली और उसकी ओर पीठ किये उछलकर काठी पर सवार हो गया, फिर नन्हे बछेड़े को आगे बिठाकर समुद्र पर सरपट दौड़ाता वापस लौटने लगा।

मैंने आधा रास्ता ही पार किया था कि घोड़ा एक लहर से ठोकर खाकर गिर पड़ा और डूबने लगा।

मैं सोचने लगा कि 'करम के बलिया, पकाई खीर हो गया' दलियावाली क़हावत सच होने जा रही है। पर मैंने हिम्मत नहीं छोड़ी: जल्दी से सरककर नन्हे बछेड़े पर बैठ गया और बछेड़े को कंधे से पकड़कर सरपट आगे चल दिया।

मैंने किनारे पर बछेड़े को पेड़ से बांधा ही था कि अचानक एक खरगोश डाल पर से मेरे पैरों के आगे कूदा। मैं उसके पीछे भागा। खरगोश बायें भागा, मैं – दायें, खरगोश तेज़ भागा – मैं उससे भी तेज़।

भागते-भागते मैंने खरगोश पर तीर चलाया। तीर की नोक सीधी खरगोश की नाक पर लगी और तीर उछलकर वापस मेरे हाथों में आ गया।

---

* साक़िच: मोम और चटनी को दूध में उबालकर तैयार किया गया एक प्रकार का पदार्थ, जिसे मध्य एशियावासी प्रायः दांतों को स्वच्छ व मज़बूत रखने के लिए चबाते हैं।

तब मैंने तीर को भोथरा सिरा आगे करके छोड़ा। एक दिन बाद वह जाकर ख़रगोश को लगा और उसे लिये चट्टान में धंस गया।

मैंने ख़रगोश की खाल उतारी, उसकी चरबी खुरची और अलाव जलाने के लिए पल्ले में मेंगनियां इकट्ठी करने लगा।

पर इसी बीच – यह क्या हुआ? – मेरा बछेड़ा हिनहिनाया, दुबककर फूत्कार करने लगा और हवा में ऊपर उठने लगा।

मैं पहले तो आश्चर्यचकित रह गया, पर मेरी समझ में फ़ौरन आ गया कि मैंने घोड़े को पेड़ से नहीं हंस की गरदन से बांध दिया था।

मैंने मेंगनियां ज़मीन पर फेंक दी और सिर पर पैर रखकर बेचारे घोड़े को खोलने भागा। पर मेंगनियां चहचहाती, पंख फड़फड़ाती ऊपर उड़कर बादलों तक जा पहुँची – मैं उन्हें देखता रह गया। मालूम पड़ा मैंने पल्ले में बटेर और भरत पक्षी भर लिये थे।

हालांकि मेरे पास जलावन नहीं रहा था, फिर भी मैंने आखिर अलाव सुलगा ही लिया। फिर मैंने तांबे के नये देग में ख़रगोश की चरबी डालकर आग पर रख दिया। देखा – मेरा नया देग चू रहा है, उसकी दीवारों में से चरबी की मोटी-मोटी धारें बह रही हैं, थोड़ी देर में शायद उसके पेंदे में कुछ नहीं बचेगा। मुझे चरबी को छेददार देग में उलटना पड़ा। और बेशक उस देग में से एक भी बूंद चरबी नहीं टपकी। हां, याद आया, पिछली चरबी से मैंने दस मशकें भर ली थीं।

फिर मुझे चरबी अपने जूतों पर मलने की सूझी। चरबी केवल एक जूते के लिए ही काफ़ी रही, दूसरे के लिए बिलकुल नहीं बची।

रात को सोने के लिए मैं देग के नीचे दुबक गया और ऊंघने लगा। कच्ची नीन्द में अचानक सुनाई दिया – शोर, होहल्ला मचा हुआ है, मार-पिटाई हो रही है! मैं डर के मारे झट से उठ खड़ा हुआ, – ये तो मेरे जूते आपस में लड़ रहे थे। बिना चरबी मला जूता अपने भाई को दबोचे बड़ी बेरहमी से उसे पीटे जा रहा था:

"ले, लालची, यह ले! अब तुझे मालूम पड़ेगा कि अपना और पराया हड़पना क्या होता है! क्या मेरे लिए तू ज़रा-सी भी चरबी नहीं छोड़ सकता था?"

मैं लड़ाकों को अलग करने लगा।

"अरे, बस भी करो, झगड़ालुओ! जामे से बाहर हुए जा रहे हो! किसी ने ठीक ही कहा है: मिलें दो अक़्लमद, होगा ज़रूर फ़ायदा; मिलें दो बेवक़ूफ़ – हो गये दोनों के दोनों बाज़ार बंद।

उन्हें बड़ी मुश्किल से चुप करा पाया। उन दोनों को मैंने पास में ही रख लिया – एक जूता दायीं बग़ल में, दूसरा – बायीं बग़ल में दबा लिया – और फिर सो गया।

सुबह नीन्द खुलने पर देखा: बिना चरबी मला जूता ग़ायब है, रूठकर चुपचाप भाग गया। मैंने बचा हुआ जूता दोनों पैरों में पहना और भगोड़े का पीछा करने लगा।

दिन भर भागता रहा, पूरे साल भागता रहा – पर दूसरा जूता किसी तरह हाथ नहीं आया। भागता-भागता किसी गांव में पहुँच गया। वहाँ तो भीड़ ऐसी लगी हुई थी कि अंत ही नज़र नहीं आ रहा था। लोगों का तांता बंधा हुआ था: कोई सांड़ पर आ रहा था, कोई गुबरैले पर, कोई कांटा-चूहे पर, कोई सांप पर, कोई पहाड़ी बकरे पर, तो कोई सारस पर।

दावत शुरू हुई।

मैंने पूछा:

"दावत किस खुशी में हो रही है?"

"यह तो," जवाब मिला, "चेहलुम का खाना है, न कि दावत।"

"किस का चेहलुम है?"

"बाय के बेटे का। वह कोई सात बरस पहले चरागाह में रेवड़ हांककर ले गया था और तब से लापता है।"

नौकर मेहमानों को गोश्त की रकाबियां परोसने लगे, तभी उनके बीच मुझे नज़र आ गया – पूछिये: कौन? – अपना भागा हुआ जूता।

मैं खुशी के मारे चिल्ला उठा, उसने मेरी आवाज़ सुन मुड़कर देखा और स्तब्ध रह गया, रकाबी गिरते-गिरते बची।

शायद इस डर से कि कहीं उसे भागने के लिए मार न पड़ जाये, वह मुझे रकाबी के बाद रकाबी परोसने लगा और बराबर कहता रहा:

"तुमने मेरे लिए ज़रा-सी भी खरगोश की चरबी नहीं छोड़ी, जब कि तुम्हें कुछ भी देते मेरा दिल नहीं दुखता है!"

उसने मेरे आगे तम्बू-घर जितना ऊँचा खाने का ढेर लगा दिया।

मैं मन ही मन खुश होने लगा: अब मैं अपने हिस्से का भी खा लूँगा और अपने सारे रिश्तेदारों के हिस्से का भी! मैंने दोनों हाथों में गोश्त उठाया और मुंह पूरा खोलने की तैयारी कर ही रहा था कि भौचक्का रह गया: मेरे मुंह की तो बात ही छोड़िये, सिर तक नहीं था, – मैं उसे झील पर, बर्फ़ में खोदे गड्ढे के पास छोड़ आया था..."

मैंने जूतों से विनती की:

"मेरे लाड़लो, ज़रा लपककर मेरा सिर ला दो, इनकार मत करो... मैं तुम्हारा बदला ज़रूर चुकाऊँगा।"

जूते मेरा काम करने लपके, और मैं बैठा इन्तज़ार करता रहा। जब तक मैं इन्तज़ार करता रहा, मेहमानों ने अपने मुंहों को ज़रा देर भी आराम नहीं करने दिया: सारा गोश्त चटकर गये और ऊपर से रकाबियां भी खा गये। मेरे लिए एक टुकड़ा भी नहीं बचा। करमहीन खेती करे, बैल मरे या सूखा परै।

मैंने सिर कंधों पर जमाया ही था कि बादल घिर आये और आकाश से खरबूज़े गिरने

7

लगे। मैंने एक ख़रबूज़ा काटना चाहा, चाकू उसमें घुसेड़ा, पर शायद ताक़त ज़रूरत से ज़्यादा लगा दी: चाकू ख़रबूज़े के अंदर गुम हो गया।

'चाकू ढूंढ़कर रहूँगा, चाहे उसकी ख़ातिर मुझे अपने पेट में ही क्यों न घुसना पड़े'— मैंने क़सम खायी।

मैंने कमरबंद खोला, उसका एक छोर पकड़ा और सिर के बल ख़रबूज़े में गोता लगा दिया।

मैंने अथक खोज में कई दिन बिताये, जूते घिस डाले, पोस्तीन का कोट तार-तार हो गया, पर चाकू मिला ही नहीं।

अचानक मुझे एक आदमी मिला।

"क्या कर रहे हो?" उसने पूछा।

"चाकू ढूंढ़ रहा हूँ।"

"बेवकूफ़ हो और बेवक़ूफ़ ही रहोगे!" अजनबी चिल्लाया। "दिमाग़ में क्या भूसा भरा है, जो चाकू ढूंढ़ रहे हो! मैं तो सात साल से यहाँ अपने बकरों का रेवड़ ढूंढ़ रहा हूँ, पर अभी तक नहीं ढूंढ़ पाया हूँ..."

मैं फ़ौरन समझ गया कि मेरे सामने वही बाय का बेटा है, जिसके चेहलुम का खाना मैंने हाल ही में खाया था।

मैंने उससे कहा:

"गालियां बकने और बेकार का झगड़ा मोल लेने से तो बेहतर होगा कि तुम बकरों पर थूक दो और जल्दी से अपने अभागे मां-बाप के पास लौट जाओ।"

"यानी तुम्हें मेरे बकरों से मेरे मां-बाप ज़्यादा प्यारे हैं!" बाय का बेटा गुर्राया और उसने झट से मेरी दाढ़ी पांचों उंगलियों में दबोच ली।

मुझसे सहा न जा सका। मैं भी उससे उलझ गया, और लड़ाई छिड़ गयी।

हमारे झगड़ने से ख़रबूज़ा हिलने लगा और सारी दुनिया में लुढ़कने लगा। लुढ़कता, लुढ़कता ऊँचे पहाड़ की चोटी पर जा चढ़ा और यहीं उसके दो टुकड़े हो गये।

पहाड़ से बाय का बेटा कहाँ गिरा, मैंने नहीं देखा, पर मैं सीधा झील के किनारे पर जा गिरा, जहाँ अपना घोड़ों का झुण्ड छोड़ गया था। गिरा इतने जोर से कि ज़मीन धंस गयी! पर मैं सही-सलामत था। न जाने क्यों अचानक मुझे प्यास लगी। शायद उसी तर गोश्त के कारण, जिसे चेहलुम में चख भी नहीं पाया था।

मैंने बर्फ़ में खोदे गड्ढे में सिर डाला और लगा पानी पीने। मैंने सारी झील पी डाली, पर प्यास बुझी ही नहीं। मैंने उठने की कोशिश की, पर किसी तरह उठ ही नहीं पाया। मुझे फ़ौरन पता नहीं चला कि मामला क्या है, पर मालूम पड़ा कि बात बहुत मामूली है: जब तक मैं पानी सुड़कता रहा, मेरी मूंछों के इर्द-गिर्द साठ जंगली बतखें और सत्तर कलहंस जमकर चिपक गये थे।

"इतनी जंगली चिड़ियों का," मैंने सोचा, "मैं क्या करूँगा?"

मैंने सारी चिड़ियां कांख में दबा ली और बाद में उनके बदले में एक सारस ले लिया। और आपको इतना ज़रूर मालूम होना चाहिए कि हालांकि वह सारस ऊंट से भी काफ़ी ऊँचा था, पर कुएं का पानी बिना गरदन झुकाये पीता था..."

"तब तो ज़रूर वह कुआं बहुत ही उथला होगा!" ख़ान लड़के को कम-से-कम कहानी के अन्त में गड़बड़ाने के इरादे से अचानक चिल्ला उठा।

"हो सकता है, कुआं ज़्यादा गहरा नहीं था, लेकिन उसमें भोर में फेंका हुआ पत्थर केवल रात होते-होते ही पानी तक पहुँच पाता था," लड़के ने बिना पलक झपकाये उत्तर दिया।

"इसका मतलब है, तब दिन छोटे होते थे!" ख़ान अपनी बात पर अड़ गया।

"हाँ, शायद दिन ज़रूर छोटे होते थे, अगर ऐसे एक दिन में भेड़ों के रेवड़ पूरी स्तेपी एक छोर से दूसरे छोर तक पार कर लेते थे," तुरन्त उत्तर मिला।

ख़ान का चेहरा फक हो गया और वह होंठ चबाने लगा। और फटीचर ने कहानी का अन्त इस प्रकार किया:

"हुज़ूरे आलम, मैंने आपकी इच्छानुसार चालीस गप्पें सुना दी है। अब ईमानदारी से मेरा हिसाब चुकता कर दीजिये! और अगर आपको अपने ख़ज़ाने की कोई परवाह नहीं है, तो मैं चालीस बार और चालीस, चालीस गप्पें सुनाने को तैयार हूँ। क्योंकि बात में से बात वैसे ही निकलती है, जैसे नेकी से नेकी!"

खीज के मारे मुंह बनाते हुए ख़ान ने वज़ीरों को संकेत किया और वे बोरी में अशरफ़ियां भरने लगे। और ज्यों-ज्यों बोरी फूलती गयी, त्यों-त्यों ख़ान पर लालच हावी होता गया।

बोरी लगभग पूरी भरी ही थी कि अचानक ग़रीब लड़के ने अपना गंदा हाथ उठाया और फिर बोल उठा।

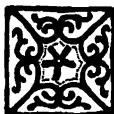
"ख़ान," उसने कहा, "मैं सोना लेने से इनकार करता हूँ! उसे आपके पास ही रहने दीजिये। इसके बदले में मेरी केवल एक इच्छा पूरी कर दीजिये: आपकी काल-कोठरियों में जो क़ैदी सड़ रहे हैं, बस उन्हें आज़ाद कर दीजिये।"

फटीचर की बात सुनकर ख़ान मानो पागल हो उठा। वह चीख मारकर बोरी की तरफ़ ऐसे लपका, जैसे गिद्ध मरे जानवर पर, और बोरी को बांहों में कसकर उससे चिमटकर बैठ गया।

वज़ीर फ़ौरन सारी बात समझ गये: ख़ान अपना फ़ैसला कर चुका था। और वे चाबियां खनखनाते जल्दी से जेल के ताले खोलने दौड़ पड़े।

सारी काल-कोठरियां शीघ्र ही ख़ाली हो गयीं। गप्पें सुनानेवाला भिखारी बालक भी कहीं ग़ायब हो गया।

पर ख़ान को किसी भी तरह अशरफ़ियों की बोरी से अलग न किया जा सका। वह तीन दिन बाद मर गया।



दो ठग

बहुत दिन हुए, पुच्छहीन युग* में दो हंसोड़ ठग थे: एक सिर-दरिया की स्तेपी की खाक छाना करता था, दूसरा – सरी-अर्का की स्तेपी की। उनकी चालबाज़ियों की धूम दूर-दूर तक फैली हुई थी, और वे अनेक बार एक दूसरे के बारे में क़िस्से सुन चुके थे।

अन्तत: उन दोनों ने मन-ही-मन कहीं आमने-सामने मिलकर अपनी-अपनी चालाकी और धूर्त्तता का मुक़ाबला करने की ठानी।

वे अपने-अपने जूतों पर चरबी चुपड़कर और चोगों के पल्ले उड़सकर सफ़र पर निकल पड़े। वे चलते रहे, चलते रहे और एक दिन कारवां के रास्ते में एक ताज़ा बने मज़ार के पास उनकी भेंट हो गयी। उन्होंने पुराने मित्रों की तरह एक दूसरे का अभिवादन किया, गले मिले और बातचीत करने लगे।

"कोई खबर है?" सिर-दरियावाले ठग ने पूछा।

"खबर है," सरी-अर्कावाले ठग ने उत्तर दिया। "यह नया मज़ार देख रहे हो? इसमें हाल ही में एक नामी बाय को दफ़नाया गया है। वह बहुत से ढोर व ढेर सारा सोना छोड़ गया है और सारा माल-असबाब उसके कूढ़-मग़ज़ बेटे को मिला है।"

सिर-दरियावाला ठग बोला:

"बाय अपना माल कभी किसी को नहीं देगा, पर ग़रीब को भी हाथ पर हाथ धरे नहीं बैठा रहना चाहिए... चलो, बाय के बेटे को झांसा देकर सौ अशरफ़ियाँ निकलवा लेते हैं, फिर उन्हें आधा-आधा बांट लेंगे।"

सरी-अर्कावाले ठग ने उत्तर दिया:

"तुम्हारे मुंह में घी-शक्कर! मुझे मंजूर है। पर यह किया कैसे जाये?"

---

* पुच्छहीन युग – परी-कथाओं का कल्पित युग, जब पशुओं की पूंछ अभी नहीं निकली थी।

चोर-चोर मौसेरे भाई ठहरे, उन्हें सौदा पटाते कभी देर लगती है? उन्होंने साथ बैठकर खाया, पिया, तम्बाकू के दम लगाये और हर दृष्टिकोण से सोच-समझकर फ़ैसला कर लिया।

सिर-दरियावाला ठग मज़ार के अन्दर घुसकर छिप गया। सरी-अर्कावाला ठग सिर पर हरा अमामा लपेटकर घुमक्कड़ दरवेश का रूप रखकर मरहूम बाय के गांव में पहुँच गया।

"मेरे बच्चे," ठग ने बाय के बेटे से कहा, "एक बार तुम्हारे बाप ने मुझसे सौ अशरफ़ियां उधार ली थीं और कहा था: 'मैं मांगते ही तुम्हें पूरी रक़म लौटा दूँगा। ज़िन्दा रहा, तो ख़ुद लौटा दूँगा, मर गया – तो बेटा चुका देगा।' मुझे अपना पुराना क़र्ज़ वापस मिलने की तारीख आ गयी है। तुम अपने अब्बा की इच्छा पूरी करो।"

बाय का बेटा यह ख़बर सुनकर मुंह बाये खड़ा रह गया। क्योंकि लेवाल के लिए तो छ: भी कम होते हैं, पर देवाल के लिए पाँच भी ज़्यादा होते हैं! उसने सोचकर कहा:

"तुम यह कैसे साबित कर सकते हो कि तुम धोखा नहीं दे रहे हो?"

ठग ने उलाहना भरे ढंग से गरदन हिलाई और ठण्डी सांस लेकर जवाब दिया:

"अगर तुम्हें मेरे हरे अमामे* पर विश्वास नहीं होता, तो अपने बाप की क़ब्र पर चलो, शायद वही तुम्हें सच्ची बात बता दे।"

बुरी तरह घबराया हुआ युवा बाय मज़ार के पास पहुँचा और उसने डर के मारे कांपते हुए पूछा:

"अब्बा, क्या हरे अमामेवाला दरवेश सच कहता है कि आप उसके सौ अशरफ़ियों के क़र्ज़दार हैं?"

तभी मज़ार में छिपा सिर-दरियावाला ठग उसे बनावटी आवाज़ में जवाब देने लगा:

"वह सच कहता है, बिलकुल सच कहता है, मेरे बेटे! इस क़र्ज़ के कारण मैं यहाँ घोर कष्ट भुगत रहा हूँ। दरवेश का क़र्ज़ फ़ौरन चुका दो, ताकि मेरी सूखी हड्डियों को चैन मिले!"

ठण्डे पसीने से तर-बतर बाय का बेटा भागा-भागा घर पहुँचा और उसने बिना चूं किये ठग को गिनकर सौ अशरफ़ियां दे दीं।

सरी-अर्कावाले ठग ने सोना कांख में दबा लिया और सोचने लगा:

"अब मेरा यार जब तक ऊब न जाये मज़ार में बैठा रहे, मैं तो अकेला भी स्तेपी में रास्ता ढूँढ़ लूँगा।"

कई दिन और सप्ताह बीत गये। वह अपने तम्बू-घर में लौट आया, उसने सोना चूल्हे के नीचे गाड़ दिया और अपनी पत्नी को सख़्त हिदायत दे दी:

---

* हरा अमामा – हाजी प्राय: हरा अमामा बांधते थे।

"अगर कोई ऐसा-ऐसा आदमी हमारे यहाँ आ धमके, तो उससे कह देना कि मेरी अचानक मौत हो गयी और मुझे रिवाज के अनुसार दफ़ना दिया गया है। उसे जल्दी से जल्दी चलता कर देना, पर जब तक वह न खिसके, रोज़ शाम को खड्ड में मेरे लिए खाना लाती रहना। मैं तब तक वहाँ छिपा रहूँगा।"

सिर-दरियावाला ठग अंधेरे मज़ार में बैठा अपने साथी की प्रतीक्षा करता रहा और अन्त में समझ गया कि वह उसे चकमा दे गया। वह किसी तरह बाहर निकला और सरी-अर्का की ओर मुंह करके बोला:

"स्तेपी भले ही विशाल सही, पर आदमी भी कम चालाक नहीं होता! तुम मुझसे छिपे नहीं रह सकोगे, दोस्त, अगर यह सच है कि चिकने घड़े पर पानी नहीं ठहरता। ज़रा ठहरो, बच्चू, जैसा तुमने बोया है, वैसा ही काटोगे!"

यह कहकर उसने कमरबंद कसा और चालबाज़ का सुराग़ लगाने निकल पड़ा। वह चरागाह के बाद चरागाह पार करता महीने भर आगे चलता गया। आखिर उसे धोखेबाज़ का तम्बू-घर मिल ही गया और उसने दरवाज़ा खोलकर देहलीज़ पर क़दम रखा।

अपरिचित को देखते ही सरी-अर्कावाले ठग की पत्नी रोने-बिलखने लगी:

"हाय, मेरे अभागे पति मर गये, उन्हें दफ़नाये आज तीन दिन हो गये! आप कोई भी क्यों न हों, परदेसी, मुझे मेरे ग़म के साथ अकेला छोड़ दीजिये!.."

"घाट-घाट का पानी पिये के आगे तुम बेकार ढोंग रच रही हो, मालकिन!" सिर-दरियावाले ठग ने मन में सोचा, पर प्रकट में आंसू बहाता हुआ बोला:

"खातून, आपने यह खबर सुनाकर मेरे दिल के टुकड़े-टुकड़े कर दिये। मेरा दोस्त मर गया, हाय! हाय! कैसी मुसीबत टूट पड़ी! मैं मरहूम की याद में दो आंसू बहाये बिना कैसे जा सकता हूँ! खुदा की क़सम, मैं यहाँ चालीस बरस गुज़ार दूँगा, जब तक कि रो-रोकर मेरी आंखें न फूट जायें।" और वह रोना जारी रखते हुए आराम से सम्मानित स्थान पर बैठ गया।

दिन पर दिन बीतते रहे, सिर-दरियावाला ठग दोस्त के तम्बू-घर में रहकर उसी का भेड़ का गोश्त खाकर और क़िमिज़ पीकर उसे याद करता रहा। उसकी नज़रों से यह भी छिपा न रह सका कि गृहणी हर रोज़ शाम को भरी पोटली खाने की लेकर कहीं ग़ायब हो जाती है। एक बार ठग ने दबे पांव उसका पीछा किया और खड्ड के रास्ते का पता लगा लिया।

कुछ समय बाद पड़ोसियों ने गृहणी को अपने यहाँ बुलाया। वह ठाठदार कपड़े पहनकर दिन भर के लिए चली गयी और केवल रात को घर लौटी। सिर-दरियावाले ठग ने समय व्यर्थ नहीं गंवाया। उसने घरवाली के कपड़े पहने, तरह-तरह के खानों की पोटली बांधी और अंधेरा होने पर खड्ड में उतरकर सरी-अर्कावाले ठग के पास पहुँच गया।

सरी-अर्क़ावाला ठग किसी चालबाज़ी का सन्देह न कर खाने पर टूट पड़ा। उसने पूछा :

"क्या उस जालसाज़ का अभी जाने का इरादा नहीं है?"

सिर-दरियावाले ठग ने आवाज़ बदलकर उत्तर दिया :

"नहीं, खिसकने का नाम ही नहीं लेता है, दिखावा कर रहा है, जैसे उसे बहुत गहरा सदमा पहुँचा हो। पर वह बराबर कुछ ढूंढ़ता रहता है, हर चीज़ पर नज़र रखता है। क्या तुमने उससे कुछ छिपाकर रखा है? मुझे डर है, कहीं वह छिपा माल न ढूंढ़ ले।"

सरी-अर्क़ावाला ठग हंसने लगा :

"तुम घबराओ मत, पगली, वह सूखकर कांटा हो जाये, तो भी उसे कुछ नहीं मिलेगा। पर फिर भी तुम चूल्हे पर नज़र रखना। अगर कुछ गड़बड़ देखो, तो मुझे फ़ौरन ख़बर देना।"

"ठीक है," सिर-दरियावाले ठग ने कहा, पर उसने मन-ही-मन सोचा : "अहा, तो यह बात है – माल चूल्हे के नीचे है!"

गृहणी जब घर लौटी, सिर-दरियावाला ठग क़िमिज़ पीता और टप-टप आंसू बहाता अपने स्थान पर ऐसे बैठा दिखाई दिया, जैसे कुछ हुआ ही न हो।

गृहणी ने झटपट खाने की कुछ चीज़ें लीं और इस डर से कि पति उससे नाराज़ हो जाएगा, जल्दी-जल्दी घर से निकल पड़ी।

सरी-अर्क़ावाला ठग पत्नी को देखकर बिलकुल भौचक रह गया और बोला :

"जल्दी बताओ, क्या हुआ? तुम दूसरी बार क्यों आयी हो?"

पत्नी ने उत्तर दिया :

"तुम्हारी उम्र बड़ी हो, पर तुम्हें क्या हुआ है? मैं तो आज पहली बार आयी हूँ।"

"अरी, बेवक़ूफ़, तुमने तो मुझे तबाह कर दिया!" ठग चिल्लाया और सिर पर पैर रखकर तम्बू-घर की ओर भागा।

पर वहाँ सोने की जगह धूल उड़ रही थी।

बुजुर्गों ने ठीक ही कहा है : "ऊंट जब तक पहाड़ के नीचे नहीं जाता, तब तक ही जानता है मुझसे ऊँचा कोई नहीं"।

सरी-अर्क़ावाले ठग ने सोचकर कहा :

"हार जीत क़िस्मत के हाथ। पर जो हिम्मत छोड़ देता है, वह अपनी हालत और बिगाड़ लेता है। अगर घोड़ा सरपट न भागे, तो उसे क़दम-क़दम ही चलाना पड़ता है।"

उसने अपनी पत्नी से विदा ली, बिना सींग के बछड़े पर सवार हुआ और उसे शाखी टहनी से हांकता हुआ सिर-दरिया की स्तेपी के लिए रवाना हो गया।

जब सरी-अर्क़ावाला ठग स्तेपी में रास्ता पूछता-पूछता आगे बढ़ रहा था, सिर-दरिया-वाला ठग घर पहुँचकर अपनी पत्नी से तुरन्त सारे गांव में उसके अचानक मरने की ख़बर

फैलाने को कहकर स्वयं कफ़न सिर से पैर तक लपेटकर मुर्दे की तरह लम्बा लेट लिया। पत्नी ने सब कुछ इसके कहे अनुसार किया। स्त्री का रोना-बिलखना सुनकर आस-पास के तम्बू-घरों के लोग जमा होने लगे, आपस में बातें करते हुए उसकी मृत्यु पर खेद प्रकट करने लगे, फिर झूठे मृत को उठाकर एक सुनसान मज़ार पर ले गये और उसके मातम का खाना खाने बैठे।

उसी समय सरी-अर्क़ावाला ठग अपने बिना सींग के बछड़े पर बैठा गांव में आ पहुँचा। वह यह पता लगाकर कि किसे दफ़नाने की तैयारी की जा रही है, फ़ौरन सारा मामला भांप गया: "अरे, अरे, यह चाल तो जानी-पहचानी है," लेकिन उसने बुरी ख़बर से गहरा सदमा पहुँचने का दिखावा किया और रोता हुआ कह उठा:

"मेरा दोस्त मर गया, तो मैं भी मर जाऊँगा! मैं उसके बिना सुखी नहीं रह सकता और उसके बिना मेरी ज़िन्दगी में अंधेरा छा गया है। मेरी बस एक ही विनती है: मुझे अपने दोस्त के पास लिटा दीजिये, कम-से-कम मरने के बाद तो हमें जुदा न कीजिये।"

इतना कहकर वह ज़मीन पर गिर पड़ा और सांस रोककर मर जाने का ढोंग रचने लगा।

और उसी दिन उसे भी अपने मित्र की बग़ल में दफ़ना दिया गया।

लोग अपने-अपने घर लौट गये और दोनों ठग मज़ार में अकेले रह गये।

"अस्सलाम-अलैकुम!" सरी-अर्क़ावाला ठग धीरे से बोला।

"अलैकुम-अस्सलाम!" सिर-दरियावाले ठग ने वैसे ही धीरे से जवाब दिया।

"बाय की अशरफ़ियों का बंटवारा करने का वक़्त आ गया है ना?" सरी-अर्क़ावाले ठग ने पूछा।

"लगता है, आ गया है..."

उन्होंने इतनी ही बात की थी कि बाहर से घोड़ों की टापें, होहल्ला और ख़नखन सुनाई दी, और मज़ार में चोरों – चालीस दु:साहसी गलाकाटुओं का गिरोह घुस आया।

वे गोला बनाकर बैठ गये और लूट के माल का बंटवारा करने लगे। उनतालीस आदमियों के हिस्से में अशरफ़ियों का एक-एक ढेर आया, पर चालीसवें के हिस्से में एक पुरानी तलवार आयी। किन्तु चोरों में से कोई भी पुरानी तलवार लेने को तैयार नहीं हो रहा था, हर कोई सोना ही लेना चाहता था। उनमें बहस छिड़ गयी। गिरोह का सरदार बोला:

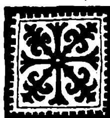
"बेवक़ूफ़ो, क्या तलवार मुट्ठी भर सिक्कों से ज़्यादा क़ीमती नहीं है? उसके बल पर दिलेर आदमी अपनी जान भी बचा सकता है और दौलत भी हासिल कर सकता है। यह पुरानी तलवार तो किसी बहादुर के भी काम आ सकती है। देखो ज़रा, मैं एक ही वार में इन दोनों मुर्दों के कैसे दो टुकड़े करता हूँ।" और उसने म्यान से तलवार खींच ली।

दुर्गति की प्रतीक्षा किये बिना ही सफ़ेद कफ़न ओढ़े दोनों ठग तत्क्षण उठ खड़े हुए और चिल्लाने लगे:

"अरे अंधे गुनाहगारो, मरदूद खूंख्वारो! ज़िंदा लोगों के आंसुओं से तुम्हारा मन नहीं भरा, तो मुर्दों की मिट्टी भी ख़राब करने लगे! ख़ुदा के ग़ज़ब से डरो! कांपो! तुम्हारी मौत की घड़ी आ गयी!"

फिर क्या हुआ! "चोर के पैर नहीं होते..." चोर सारा माल-मता छोड़कर एक दूसरे को धकेलते सिर पर पैर रखकर भाग छूटे: कुछ दरवाज़े से निकल भागे, कुछ माथा मार-मारकर दीवार फोड़कर बाहर भागे। पलक झपकते वे मज़ार से कोसों दूर पहुँच चुके थे।

ठगों ने फ़ौरन कफ़न उतार फेंके, अशरफ़ियां भाइयों की तरह आपस में बांट लीं और अपनी चालबाज़ियों पर दिल खोलकर हंसकर अपने-अपने गांव का रास्ता पकड़ा: एक सिर-दरिया की स्तेपी को रवाना हो गया, दूसरा सरी-अर्क़ा की स्तेपी को।



साहसी गधा

एक गधा बोझा ढोते-ढोते बुरी तरह ऊब गया। एक बार उसने अपने मित्र ऊंट से कहा :

"ऊंट, ओ ऊंट! मैं तो बोझा ढोते-ढोते ऊब गया हूं: मेरी सारी पीठ उधेड़ रखी है! चलो, मालिक को छोड़कर भाग जाते हैं, दोनों मिलकर आज़ादी से रहेंगे, जो मन में आयेगा, करेंगे।"

ऊंट चुप्पी माधे थोड़ी देर तक सोचता रहा और फिर बोला :

"हमारा मालिक सचमुच बहुत बुरा है: चारा खराब खिलाता है, काम ढेरों करने को मजबूर करता है। मैं तो बड़ी ख़ुशी से भाग जाता, पर भागूं कैसे?"

गधे के पास इसका जवाब तैयार था।

"मैंने सब भली-भांति सोच लिया है," कहने लगा, "तुम फ़िक्र मत करो। कल मालिक हम पर नमक लादकर शहर ले जायेगा। शुरू में तो हम उसकी आज्ञानुसार शान्ति से चलेंगे, पर चढ़ाई पर चढ़ते ही दोनों ही एक साथ गिर पड़ेंगे और दिखावा करेंगे मानो हम बिलकुल अशक्त हो गये हैं। मालिक हमें गालियां देने लगेगा, हम पर डण्डे बरसाने लगेगा, पर हम टस से मस नहीं होंगे। वह थककर चूर हो जायेगा और मदद लाने घर चला जायेगा। फिर हमें पूरी आज़ादी मिल जायेगी – कहीं भी भाग सकते हैं, बस हमारे पैर हमें धोखा न दें।"

ऊंट बहुत खुश हुआ :

"बहुत अच्छी तरकीब सोची तुमने, बहुत ही अच्छी! हम वैसा ही करेंगे, जैसा कि तुमने कहा है!"

उन्होंने सुबह होने तक इन्तज़ार किया। सुबह होते ही मालिक ने उन पर नमक की बोरियां लाद दीं और शहर हांक ले चला।

आधे रास्ते तक वे सदा की तरह चलते रहे: ऊंट आगे-आगे, गधा उसके पीछे और दोनों के पीछे मालिक डण्डा लिये। चढ़ाई उन्होंने पार की ही थी कि गधा और ऊंट ज़मीन पर गिर पड़े और पूर्णतया अशक्त होने का और खड़े न हो पाने का दिखावा करने लगे।

मालिक लगा उन्हें कोसने:

"अरे आलसियो, अरे कामचोरो! डण्डे की मार पड़ने से पहले उठ खड़े हो जा!"

पर उनके कान पर तो जूं भी नहीं रेंगी, पड़े रहे, मानो कुछ सुन ही नहीं रहे हों।

मालिक भड़क उठा और लगा उन पर कस-कसकर डण्डे बरसाने।

उसने ऊंट के उनतालीस डण्डे मारे – कोई असर नहीं हुआ, पर जैसे ही उसने चालीस-वीं बार मारने के लिए डण्डा उठाया – ऊंट ज़ोर से बलबलाया और झट उठ खड़ा हुआ।

"यह हुई ना बात," मालिक बोला, "पहले ही खड़ा हो जाना चाहिए था!" और वह फिर गधे की पिटाई करने लगा।

उसने उस पर चालीस डण्डे बरसाये – गधे ने आह भी नहीं भरी, पचास डण्डे मारे – गधा हिला भी नहीं, साठ डण्डे मारे – गधा जैसे पड़ा था, वैसा ही पड़ा रह गया।

मालिक ने देखा – हालत ख़राब है: गधा शायद दम तोड़नेवाला है, बड़ी मुसीबत है, पर कोई कर ही क्या सकता है।

उसने गधे का बोझ उतारकर ऊंट पर लाद दिया और आगे चल दिया।

ऊंट बोझ के मारे बड़ी मुश्किल से चल पा रहा था और गधे को कोसता जा रहा था:

"नासपीटे गधे, तेरे कारण मेरी खाल उधेड़ी गयी है, मैं दुगुना बोझ ढो रहा हूँ।"

गधा मालिक व ऊंट के दर्रे में ओझल होने तक इन्तज़ार करता रहा, फिर उठा और सिर पर पैर रखकर भागा।

वह तीन दिन तक भागता रहा, उसने तीन पहाड़ और तीन घाटियां पार की और अन्त में एक तेज़ नदी के किनारे एक खुले मैदान तक पहुँच गया।

गधे को मैदान बहुत पसन्द आया और वह वहीं रहने लगा। जब कि उस ज़मीन पर अनेक वर्षों से एक ख़ूंख्वार शेर राज करता था।

एक बार शेर को अपनी जागीर का दौरा करने की इच्छा हुई। वह सुबह सफ़र पर निकला और दोपहर में उसे गधा दिखाई दिया।

गधा बड़े मज़े से मैदान में दुम हिलाता घूमता हुआ घास चर रहा था।

शेर ने सोचा: "यह कौन-सा जानवर है? मैंने ऐसा जानवर कभी नहीं देखा।"

और गधे की शेर पर नज़र पड़ते ही सन्न रह गया। "अब तो," वह सोचने लगा, "मैं मारा गया!" और उसने मन-ही-मन ठान ली, "बिना आत्म-रक्षा किये मरने से बेहतर होगा कि मैं इस भयानक पशु को अपनी बहादुरी दिखा दूं।"

उसने पूंछ उठायी, कान हिलाये और गला पूरा फाड़कर लगा चींपों-चींपों करने!

शेर की आंखों के आगे अंधेरा छा गया। वह पलटकर सिर पर पैर रखकर भागा, उसने डर के मारे पीछे मुड़कर भी नहीं देखा।

रास्ते में उसे भेड़िया मिला:

"आप किस से इतनी बुरी तरह डर गये हैं, महाराज?"

"मैं एक ऐसे जानवर से डर गया, जिससे भयावह पशु दुनिया में और कोई नहीं है: उसके कानों के स्थान पर पंख है, मुंह अथाह खाई जैसा है और जब वह दहाड़ता है, तो धरती कांपने लगती है, आकाश धुंधला पड़ जाता है।"

"सुनिये, सुनिये," भेड़िया बोला, "आपकी मुठभेड़ कहीं गधे से तो नहीं हुई? यही बात है। ठीक है, कल हम दोनों उसे कमंद फेंककर बांध लेंगे।"

दूसरे दिन भेड़िया कमंद ढूंढ़ लाया। उसने उसका एक छोर शेर की गरदन पर बांध दिया, दूसरा – अपनी पर, और दोनों खुले मैदान की ओर चल पड़े।

भेड़िया आगे-आगे चल रहा था और शेर – पीछे-पीछे, अड़ता हुआ।

गधे ने उन्हें दूर ही से देख लिया और उसने फिर अपनी वही चाल चली: पूंछ उठायी, गला फाड़ा और लगा पहले से भी ज़ोर से रेंकने।

शेर ने चिल्लाकर भेड़िये से कहा:

"मेरे यार, लगता है तुम मुझे इस भयावह पशु का भोजन बनाने पर तुले हुए हो!" वह पूरी ताक़त जुटाकर एक ओर भागा – और भेड़िये का सिर धड़ से अलग हो गया।

शेर भागता हुआ घर पहुँचा, वह बुरी तरह हांफ रहा था।

उसी समय फुर्र से मुटरी उसके पास आ पहुँची। उसने चहचहाकर, बुदबुदाकर शेर से सारा क़िस्सा मालूम किया और फिर बोली:

"ज़रा ठहरो, मैं अभी मैदान में जाकर देखती हूँ कि वहाँ कौन-सा जानवर घूम रहा है और वह क्या कर रहा है। सारी बात का पता लगाकर तुम्हें सारा ब्योरा बताऊंगी।"

मुटरी मैदान की ओर उड़ चली।

गधे ने उसे दूर से ही देख लिया, ज़मीन पर लेट गया और टांगें लंबी खींच लीं, मानो मर गया हो।

मुटरी ने नीचे नज़र डाली और ख़ुश हो उठी: भयावह पशु की तो टें बोल गयी!

वह सीधी गधे पर उतरी और उसके शरीर पर चहलक़दमी करती हुई सोचने लगी कि भीमकाय पशु पर अपनी विजय के बारे में शेर को कौन-सा झूठा क़िस्सा गढ़कर सुनाये।

अचानक उसे ज़मीन पर गेहूँ का एक दाना पड़ा नज़र आ गया, उसने चोंच से दाने का निशाना बांधा, एक क़दम पीछे हटी और सिर के बल गधे के घुटनों के बीच जा गिरी।

तत्क्षण गधे में जान आ गयी। उसने मुटरी को कसकर दबोच लिया और लगा पूंछ से उसे कोड़े मारने। उसने उसे इतना मारा, इतना मारा कि मुटरी के परों के छितरे

बिखर गये। फिर उसके एक ऐसी दुलत्ती झाड़ी कि मुटरी लुढ़कती हुई मैदान के दूसरे छोर पर जा गिरी।

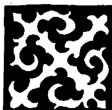
वह वहाँ पड़ी रही, ज़ब होश आया, तो किसी तरह लंगड़ाती-लंगड़ाती, कराहती, कांखती वापस उड़ चली।

मुटरी उड़ते-उड़ते दूर से ही शेर से चिल्ला-चिल्लाकर कहने लगी:

"भागो यहाँ से, दूर भाग जाओ, जब तक सही-सलामत हो! मनहूस जानवर ने मुझे जीवन भर के लिए अपाहिज कर दिया! देखो, कहीं तुम पर भी ऐसी न गुज़रे।"

शेर बिलकुल भीगी बिल्ली बन गया। उसने अपना बोरिया-बिस्तर समेटा और हमेशा-हमेशा के लिए दूसरे देश चला गया।

और साहसी गधा आज भी खुले मैदान में सुख-चैन मे रह रहा है।



तीन मित्र

न जाने यह सच है या झूठ, पर कहते हैं कि बहुत पहले एक बकरी के बच्चे, मेमने और बछड़े में दोस्ती हो गयी थी और वे एक दूसरे को भाई की तरह मानते थे।

एक बार बकरी के बच्चे ने बहुत दूर की एक पहाड़ी पर नज़र डाली और बोला:

"भाइयो, तुममें से किसी ने शाम को सूरज को पहाड़ी के पीछे अस्त होते देखा है?"

"मैंने देखा है," मेमने ने कहा।

"मैंने भी देखा है," बछड़ा बोला।

"तो चलो फिर," बकरी के बच्चे ने सुझाव दिया, "तीनों चलकर देखते हैं कि सूरज रात भर कहाँ छिपा रहता है।"

और मित्र उसी दिन चुपचाप अपने झुण्ड से भाग गये।

वे स्तेपी में चलते रहे, चलते रहे। सफ़र लम्बा था, पर पहाड़ी भी तो बराबर निकट होती जा रही थी। मित्र ख़ुश होने लगे। अचानक उनके रास्ते में एक नाला पड़ गया। अब उसे कैसे पार करें? बकरी का बच्चा बोला:

"कोई बात नहीं, फांद लेंगे!"

"मुझे तो डर लगता है," मेमना बोला।

"मुझे भी डर लगता है," बछड़ा बोला।

"वाह रे डरपोको," मेमना हंस पड़ा। "मुझे तो किसी चीज़ का डर नहीं।" उसने दौड़ लगायी और पलक झपकते दूसरे किनारे पर जा पहुँचा।

उसके बाद मेमने ने छलांग लगायी – छलांग उसने ज़ोरदार लगायी, बस उसके पिछले खुर ही पानी में भीगे।

बछड़ा अपनी जगह पर खड़ा पैर पटकता रहा, पटकता रहा – पर कोई और चारा नहीं था, फिर उसने भी छलांग लगा दी। छलांग लगायी और – छप्प से सीधा पानी में! डूबते-डूबते बचा। साथियों ने उसके कान पकड़कर उसे बाहर खींच लिया।

बकरी का बच्चा बोला :

"हमने, बछड़े, तुझे मौत से बचाया है। तुझे हमारी भलाई का बदला चुकाना चाहिए। हमें पीठ पर बिठाकर पहाड़ी तक ले चल।"

नटखट मेमना और बकरी का बच्चा बछड़े पर सवार हो गये और हंसी-मज़ाक क... आगे बढ़ने लगे।

कुछ समय बीतने पर बछड़ा दुःखी स्वर में रंभाने लगा :

"तुम लोग बहुत भारी हो। मैं तुम्हारा ऊंट तो हूँ नहीं। आगे जो पत्थर चमक ... है, बस उसी तक ले जाऊँगा, और फिर बस, वहीं उतर जाना।"

वे लोग पत्थर तक पहुँचे, पर वहाँ तो पत्थर नहीं – बल्कि एक सफ़री थैला ज़मीन पर पड़ा हुआ था। उसमें ठूंस-ठूंसकर कोई चीज़ भरी हुई थी। शायद किसी अनाड़ी का सामान गिर गया था। उन्होंने थैला खोला, उसमें चार जानवरों की खालें निकलीं : साह, भालू, भेड़िये और लोमड़ी की।

"बहुत अच्छी चीज़ें मिली हैं, काम आयेंगी," बकरी के बच्चे ने कहा।

वे थैला उठाकर आगे चले। अब पहाड़ी बिलकुल पास थी, हाथ आगे बढ़ाकर छुई जा सकती थी। पहाड़ी तले एक सफ़ेद तम्बू-घर लगा था। तम्बू-घर में शोर मचा हुआ था, गाने और डफली की आवाज़ें सुनाई दे रही थीं। राहियों ने रुककर एक दूसरे की ओर देखा – जो हो, सो हो! – और दरवाज़ा खोल दिया।

देखा : तम्बू-घर में दावत चल रही है। चित्तीदार साह क़िमिज़ पी रहा है, मोटा भालू हलवा खा रहा था, भूरा भेड़िया बाउरसक़* सटक रहा है, भूरी लोमड़ी दोम्ब्रा** बजाकर गा रही है :

दोम्ब्रा बजाता है टुन-टुन शान से
आज सब के दोस्त बन जाएँगे हम।
दुशमनी पर कल उतर आएँगे हम :
हाथ धोना होगा सब को जान से।

तीनों दोस्त तम्बू-घर में घुसे और देहलीज़ पर जड़वत् खड़े रह गये : उनकी फ़ौरन समझ में आ गया कि वे मुसीबत में फंस गये हैं। और हिंस्र जंतुओं ने जैसे ही बिनबुलाये

---

* बाउरसक़ – गुंधी मैदा के टुकड़ों को चर्बी में तलकर बनाया जानेवाला एक क़ज़ाखी व्यंजन।

** दोम्ब्रा – एक प्रकार का तारवाला क़ज़ाखी वाद्य यंत्र।

8–297

मेहमानों को देखा, उनकी आंखें चमक उठीं: इतना स्वादिष्ठ भोजन खुद ब खुद उनके मुंह में चला आ रहा है! लोमड़ी ने चालाकी से जंतुओं के गिरोह को आंख मारी और होंठों पर ज़बान फेरती हुई मीठी-मीठी बातें बनाने लगी:

"आइये, आइये, तशरीफ़ लाइये, मेहमानो। खुदा की इनायत से आप लोग हमारे त्योहार की दावत में आ पहुँचे। ज़रा चूल्हे के पास सरककर बैठिये, बच्चो। हम अभी आप लोगों की खातिरदारी करते हैं... तब तक क्या आप लोग डफली बजाकर, गाना गाकर हमारा मन नहीं बहलायेंगे?"

मेमने को काटो तो खून नहीं – वह मौन था। बछड़ा पीछे हट गया और चुप रहा। पर बकरी का बच्चा अपने घुंघराले बाल झटकार बोला:

"लाओ, लोमड़ी, दोम्ब्रा दो! मैं आपको दोम्ब्रा बजाकर गाना सुनाता हूँ।"

और उसने तार छेड़ दिये:

दोम्ब्रा बजता है टुन-टुन शान से
दुशमनों को मारेंगे हम जान से
शेर का हम को नहीं है कोई डर
मोटे भालू का भी हम तोडेंगे सर
भेड़िए से डरनेवाले हम नहीं
लोमड़ी से दबनेवाले हम नहीं
बोल देंगे चारों पर धावा अभी
ज़ालिमों को करते हैं पसपा अभी!

जंतु सुनते रहे: यह कैसा धृष्टतापूर्ण गीत है!

"अरे, तुम लोग हो कौन?" चित्तीदार साह दहाड़ा।

"हम स्तेपी के शिकारी हैं," बकरी के बच्चे ने उत्तर दिया।

"और कहाँ जा रहे हो?" भालू गुर्राया।

"माल लेकर बाज़ार जा रहे हैं।"

"माल कैसा है?" भेड़िया फुसफुसाया।

"जानवरों की खालें हैं।"

"तुम ये कहाँ से लाये?" लोमड़ी चीखी।

"तुम्हारे भाई-बंदों क़ी उतारी हैं," बकरी के बच्चे ने कहा और थैले में से चारों जानवरों की खालें निकालकर रख दीं।

दंतैले जंतु डर के मारे बुत हो गये और फिर अपनी-अपनी आवाज़ में चीखते हुए सिर पर पैर रखकर भाग गये।

तीनों मुंहबोले भाई पराये तम्बू-घर में मौज उड़ाने लगे। उन्होंने जंतुओं के छोड़े तरह-तरह के स्वादिष्ट व्यंजन खाये, आराम किया और फिर सोचने लगे कि आगे क्या किया जाये।

बकरी का बच्चा बोला:

"हमने बहुत अच्छा किया कि दुशमनों को बुरी तरह डरा दिया, लेकिन होश संभालने पर वे लौट आये, तो बहुत बुरा होगा। फिर हमारी हड्डियां भी ढूंढ़े नहीं मिलेंगी। बेहतर होगा मुसीबत आने से पहले जल्दी से घर भाग चलें। अपने झुण्ड में हमें किसी खूंख्वार जानवर का खतरा नहीं होगा। अपने झुण्ड में गड़रिये हमारा बाल भी बांका नहीं होने देंगे।"

बकरी के बच्चे को मित्रों को ज़्यादा देर नहीं मनाना पड़ा।

"तुम सच कहते हो, भाई," मेमना बोला।

"तुम्हारा कहना सही है," बछड़ा बोला।

और एक मिनट बाद ही तीनों के तीनों सफ़ेद तम्बू-घर से दूर और पहाड़ी से और भी दूर पहुँच चुके थे। आगे-आगे बकरी का बच्चा भागा जा रहा था, उसके पीछे – मेमना और बछड़ा – उनके पीछे।

शाम होते-होते वे घर पहुँच गये। गड़रिये उन्हें देखकर इतने हर्षित हो उठे कि उन्होंने उन्हें डांटा तक नहीं। इस प्रकार सब कुछ अच्छा रहा।

बस एक ही बात बुरी हुई: तीनों मित्र किसी तरह पता नहीं लगा सके कि सूरज का रैन-बसेरा कहां है।



कलावंत गधा

दुनिया में भांति-भांति के लोग रहते हैं और इसमें कोई अचरज की बात नहीं कि किसी ज़माने में किसी गांव में जाक़्सीबाय नाम का एक बूढ़ा बातूनी रहता था, जिसे कोई दुःख नहीं था। इस आदमी के पास एक गधा था। देखने में उसमें और दूसरे गधों में कोई अन्तर नहीं था, लेकिन उसने ऐसा गला पाया था कि जब वह अपने थान पर रेंकना शुरू कर देता, तो आस-पास के गांवों के लोग कानों में उंगली दे लेते थे।

एक बार जाक़्सीबाय प्राचीन शहर तुर्किस्तान आया और उसने गधे को फ़ौरन बाज़ार की ओर मोड़ दिया। वहाँ उसने अपने गधे को पेड़ से बांध दिया और ख़ुद अपने चोग़े के पल्ले उठाये चायख़ाने में घुस गया। अच्छे चायख़ाने में हमेशा भीड़ रहती है और जहाँ लोग होते हैं, वहीं बातें होती हैं, जहाँ बातें होती हैं, वहीं बहस छिड़ जाती है, जहाँ बहस हो रही हो, बातें हो रही हों, वहाँ कोई जाक़्सीबाय को बतियाने में, बहस करने में कभी मात नहीं दे सकता। कहते हैं: "बातूनी की ज़बान में लगाम नहीं होती..."

गधा काफ़ी देर तक अपने स्वामी की बाट जोहता रहा। सूरज तप रहा था, मक्खियां भिनभिना रही थीं, कुकुरमाछियां बुरी तरह काट रही थीं। गधा बहुत देर से भूखा था और उसे प्यास लग रही थी। आख़िर वह क्या करता? और उसने वही किया, जो उसके स्थान पर उसकी जात का कोई भी प्राणी कर बैठता: पूंछ उठायी, कनौतियां आगे को खड़ी की, नथुने फुलाये, मुंह खोला और... लगा गला फाड़कर रेंकने।

बाज़ार में काम से और बिना काम के जमा हुए लोग चौंक उठे और सबने एक साथ उसकी ओर पलटकर देखा।

"वाह, क्या आवाज़ है!" सारा बाज़ार कह उठा। "ऐसी आवाज़ हमने तुर्किस्तान में अभी तक नहीं सुनी थी!"

"वाह, क्या ख़ुशख़बरी है!" गधा ख़ुश हो उठा। "रास्तों की ख़ाक छानते-छानते इतने साल हो गये, पर अपनी वक़अत का मुझे आज ही पता चला। सारे तुर्किस्तान में मेरी धाक जम गयी!"

उसी क्षण से गधे को विश्वास हो गया कि वह जन्मजात महान गायक है। भूखे सियार को कभी-कभी न जाने कहां-कहां मुंह मारना पड़ता है और मूर्ख गधे की खोपड़ी में न जाने कैसी-कैसी बातें उपजती हैं!

गधा सोचने लगा:

"अब मैं आगे से जाक़्सीबाय के लिए काम नहीं करूंगा! जल्दी ही मेरा नाम हो जायेगा, मुझे सम्मान मिलेगा। पर नाम और सम्मान पीठ पर लकड़ी ढोनेवाले को थोड़े ही मिलते।"

उसने जोश में आकर पूरा ज़ोर लगाकर रस्सी तुड़ा ली और सरपट शहर से बाहर भाग निकला। अलविदा, बूढ़े बातूनी, जाक़्सीबाय! अलविदा, पुराना तुर्किस्तान!

गधा सुनसान रास्ते पर भटकने लगा, – सूरज और ज़ोर से तप रहा था, मक्खियां और ज़्यादा भिनभिन करके परेशान कर रही थीं, कुकुरमाछियां और ज़्यादा ज़ोर से काट रही थीं। भगोड़ा थक गया, भूख और प्यास के मारे निढाल हो गया। और आस-पास न कहीं छाया थी, न घास की कोई पत्ती, न ही कोई छोटा-मोटा डबरा।

"यश कमाना आसान नहीं होता," गधे ने एक ठण्डी सांस ली, "पर अल्लाह अपने चुनिंदा बंदे को बेमौत नहीं मरने देगा।" और वह आगे चल दिया।

अचानक – न जाने यह शकुन था या अपशकुन – गधे को अपने सामने मिट्टी की चहारदीवारी से घिरा एक विशाल बाग़ दिखाई दिया। दीवार एक जगह पर ढही हुई थी और दरार में से छायादार वृक्ष, मुलायम दूब से ढके आकर्षक मैदान और निर्मल जल की नालियाँ देखी जा सकती थीं। प्रलोभन अत्यन्त सम्मोहक था और गधा बदन सिकोड़कर दरार में से अनजाने बाग़ में घुस गया। सारी दुनिया से बेख़बर होकर वह मरभुक्खे की तरह चारे-पानी पर टूट पड़ा। वह रास्तों का ध्यान रखे बिना लानों और फुलवारियों को रौंदता तब तक घूमता रहा, जब तक कि उसका पेट न भर गया और उसे डकारें न आने लगीं। तब उसने दम लेने के लिए रुककर सिर उठाया और... अप्रत्याशित बात से चौंक उठा।

झाड़ियों के झुरमुट में से जन्नत की परी जैसी सुन्दर एक जवान हिरनी सीधी उसी की ओर आ रही थी। वह हिरनी भी चोरी से बाग़ में घुस आयी थी। वह सुबह से स्तेपी में उछलती-कूदती रही थी और खेलती-खेलती चहारदीवारी तक पहुँची, उसे फांदकर शानदार घास चरने लगी थी। गधे को देखते ही वह भागने की तैयारी करके जड़वत् खड़ी रही।

गधा हिरनी पर पहली नज़र पड़ते ही उसके प्यार में पागल हो उठा। उसका दिल भयाकुल हिरन-मूसा की तरह कूद रहा था, वह आंखें निकाले सुन्दरी को देख रहा था और उमंग में सोच रहा था: "मेरा भाग्य वास्तव में मुझ पर कृपालु है: उसने मुझे विरला स्वर प्रदान किया है, इस अद्भुत बाग़ में पहुँचा दिया है और अब एक अतिसुन्दर दुलहन से मेरी भेंट भी करा दी।"

और वह कनौतियां हिलाकर विनम्रतापूर्वक बोला:

"कुलांगना! आपने अपने स्वर्गिक सौन्दर्य से मेरा मन मोह लिया है। मुझे आपके लिए गाने की आज्ञा दीजिये। मेरा मधुर स्वर सुनकर आप महान गायक के प्रेम को अस्वीकार न कर सकेंगी।"

हिरनी ने अग़ल-बग़ल झांका और धीरे से बोली:

"गधे, क्या आपका चुप रहना बेहतर नहीं होगा? देखिये, कहीं आपके उत्साह के कारण हम पर भी ऐसी न बीते, जैसी सात लापरवाह चोरों पर बीती थी।"

और उसने यह नीति-कथा सुनाई:

"एक बार रात को सात चोर एक धनवान के घर में घुस गये। वे तहख़ाने में पुरानी शराब के विशाल ढोलों के बीच दुबककर बैठ गये और घर में सन्नाटा छाने की प्रतीक्षा करने लगे, जिससे कि अपनी सोची कर सकें। पर शराब की गंध से उनकी मति भ्रष्ट हो गयी और वे चुल्लु भर-भरके मूल्यवान पेय अपने गले के नीचे उतारने लगे। इसका परिणाम यह हुआ कि नशे में चोर भूल गये कि वे कहाँ हैं और गला फाड़-फाड़कर विनोदी गीत गाने लगे। घरवालों ने उनकी आवाज़ें सुन लीं, धनवान के पहरेदार तहख़ाने में जा पहुँचे और उन्होंने बिनबुलाये मेहमानों की मुश्कें कस दीं। आख़िर मैं और आप भी तो, गधे, गृहस्वामी के बुलाये बिना इस बाग़ में पधारे हैं और उसकी आज्ञा के बिना स्वादिष्ट घास का रसास्वादन कर रहे हैं!"

"आप अतिसुन्दर हैं, हिरनी," गधे ने उसके प्रत्युत्तर में कहा, "लेकिन आप वीरान स्तेपी में बड़ी हुई हैं और शायद अच्छे गायन के बारे में बहुत कम जानती हैं। मैंने तो सारा जीवन लोगों के बीच बिताया है, तुर्किस्तान में रह चुका हूँ और दावे के साथ कह सकता हूँ कि मैं कला में दक्षता प्राप्त कर चुका हूँ। मेरे गीत गाना आरम्भ करने की देर है और फिर आप मुझसे यही विनती करेंगी कि मैं उसे कभी न रोकूँ।"

किन्तु हिरनी बोली:

"क्या आपके लिए सावधान रहना और शोर न करना बेहतर नहीं रहेगा? जो कोई ज़रा-सा भी असावधान होता है, उस पर अवश्य विपत्ति टूट पड़ती है, जैसा कि एक मूर्ख लकड़हारे के साथ हुआ था।"

और हिरनी ने यह नीति-कथा सुनाई:

"एक लकड़हारे को जंगल में देर हो गयी और रात में वह घने वन में भटक गया। उसे अचानक पास ही से ज़ोरदार आवाज़ें आती सुनाई दीं। लकड़हारा जल्दी से पेड़ पर चढ़ गया और घनी शाखाओं में दुबक गया। तीन जिन आये। वे पेड़ के तले बैठकर अपने सामने एक मूल्यवान सुराही रखकर दावत उड़ाने लगे। जैसे ही, कोई जिन सुराही को हाथ से छूता, वह ऐसी सुगंधित क़िमिज़ से लबालब भर जाती, जैसी शायद जिनों के अलावा और किसी ने कभी न पी होगी।

भोर हुआ। जिनों ने जादूई सुराही पेड़ के नीचे छिपा दी और भिन्न-भिन्न दिशा में चले गये। लकड़हारा पलक झपकते नीचे उतरा और सुराही उठाकर जंगल से भाग निकला। घर लौटकर उसने अपने सम्बन्धियों व पड़ोसियों को बुलाया और उनके सामने अपने हाथ लगी दुर्लभ वस्तु की डींग हांकने लगा। वह बार-बार सुराही को हाथ से स्पर्श करता और सुगंधित क़िमिज़ की धारें नीचे रखे प्यालों में गिरने लगतीं। लकड़-हारा ख़ुशी के मारे इतना पागल हो उठा कि सुराही सिर पर रखकर सारे तम्बू-घर में हा-हा-ही-ही करता चक्कर काटने लगा। अचानक वह ठोकर खा गया और जादूई सुराही गिरकर टुकड़े-टुकड़े हो गयी। कहीं हम भी, गधे, तुम्हारी मूर्खता के कारण इस स्वादिष्ट दूब से वंचित न रह जायें।"

गधे ने एक ठण्डी सांस ली और निराशापूर्वक बोला:

"ऐ हिरनी, प्रकृति ने आपको असीम सौन्दर्य प्रदान किया है, पर उसने आपके सीने में निष्ठुर हृदय रख दिया है। फिर भी मुझे पूरा विश्वास है कि मेरे गायन के मनमोहक सुर आपके कठोर स्वभाव को मृदु बना देंगे और आपके मन में उदात्त भाव जगा देंगे।"

हिरनी गधे को शान्त करने का प्रयास करती रही:

"मैं आप से विनती करती हूँ, गधे, कि समय रहते होश में आ जाइये और अपनी आवाज़ तुर्किस्तान के बाज़ार के लिए बचाकर रखिये। क्योंकि मुंह से असमय निकला एक भी शब्द हमें असाध्य कष्ट पहुँचा सकता है। एक जवान सौदागर ने भी इसका ध्यान नहीं रखा और उसे बाद में बहुत पछताना पड़ा था।

और उसने एक और नीति-कथा सुनाई:

"एक नौजवान सौदागर दावत उड़ाने के बाद आधी रात को शहर की अंधेरी गलियों से होकर घर लौट रहा था। उसकी जेबें अशरफ़ियों से भरी थीं। "अगर मुझ पर लुटेरे टूट पड़ें और मेरा धन छीन ले जायें तो?" सौदागर ने भय के मारे सोचा। और वह अपना हौसला बढ़ाने के लिए ख़ुद से ज़ोर-ज़ोर से बातें करने लगा: "ज़रा नज़र तो आयें लुटेरे!.. मैं उनके टुकड़े-टुकड़े कर डालूँगा... मैं ख़ुद शैतान तक से नहीं डरता!" रात देर गये घर लौटनेवाले राहगीरों की घात में पास की गली में गुण्डों का एक गिरोह चक्कर काट रहा था। गुण्डों ने सौदागर की आवाज़ सुन ली और उन्होंने उस पर हमला कर धन व कपड़े छीन लिये और उसे शहर में नंगा भटकने के लिए छोड़ गये। अब शायद, गधे, हमारा भी, मुसीबत को बुलावा न देकर, थोथी बातें करना छोड़, पराये बाग़ से चले जाने का समय हो आया है।"

इस पर गधा कह उठा:

"ऐ निर्मम सुन्दरी, हिरनी! आप मुझसे चुप रहने को कैसे कह सकती हैं, जब कि अपनी प्रियतमा के सम्मान में गीत के बोल स्वयं मेरे हृदय में उमड़ते मुंह से निकलने के लिए तड़प रहे हैं?!"

यह कहकर उसने आंखें मूंद लीं, जैसा कि ख्यातिप्राप्त गायक करते हैं, मुंह फाड़ा, जैसा कि सारे गधे एक निश्चित समय पर करते हैं और ज़ोर-ज़ोर से रेंकने लगा। हिरनी चौंककर एक ओर हट गयी और एक छलांग में चहारदीवारी पार करके हवा से बातें करती स्तेपी की ओर दौड़ पड़ी। जब कि गधा सारी दुनिया से बेपरवाह चीपों-चीपों का राग अलापता रहा।

बाग़ का स्वामी मोटा डण्डा लिये भागा आया और उसने गधे को ऐसी मार लगायी कि वह और ज़ोर से रेंकने लगा और बड़ी मुश्किल से चहारदीवारी से ज़िन्दा बाहर निकल सका। गधा सिर झुकाये लड़खड़ाता घिसटता आगे चल दिया।

रात आयी। आसमान पर पूनम का चांद निकल आया। तब स्तेपी के सारे भेड़िये मुंह ऊपर को करके अपने पूर्वजों की परम्परानुसार तरह-तरह के स्वरों में हू-हू करने लगे।

गधे ने न तो कभी भेड़ियों को देखा था और न ही उसने कभी उनकी आवाज़ सुनी थी। रुककर उसने पारखी की तरह ध्यान से सुना और फिर कह उठा:

"ये भी कोई गायक हैं! मैं अकेला अपनी आवाज़ से इनके बेसुरे सहगान को दबा सकता हूँ।"

उसने इतने ज़ोर से सांस खींची कि उसका सारा बदन चरमरा उठा और इतने ज़ोर से रेंका कि उसका खुद का सिर भन्ना उठा। भेड़िये आश्चर्यचकित हुए तत्क्षण मौन हो गये: स्तेपी में आधी रात को गधा कहाँ से आ सकता है? वे बिना आपस में सलाह किये रास्ते की ओर लपके और शिकार उन्हें फ़ौरन नज़र आ गया ... गधे का क़िस्सा यहीं समाप्त हो गया। अगर आप किसी भी क़ीमत पर जाक़्सीबाय के बारे में भी सुनना चाहते हैं, तो सिर पर पैर रखकर प्राचीन शहर तुर्किस्तान दौड़कर जाइये, बिना देर किये वहाँ का बड़ा बाज़ार और बाज़ार में सबसे खचाखच भरा चायखाना ढूंढ़ लीजिये और बेधड़क उसमें घुस जाइये। इस बात की पूरी सम्भावना है कि जाक़्सीबाय अपने गधे के बारे में भूलकर अभी तक वहाँ गुदगुदे नमदे पर बैठा चाय की प्याली पर प्याली पिये जा रहा होगा और तरह-तरह के सच्चे-झूठे क़िस्से गढ़े जा रहा होगा। वह ज़रूर आपको अपने बारे में क़िस्से सुनायेगा – बस सुनते रहिये।



अबाबील की पूंछ फटी हुई क्यों होती है

बहुत पुराने ज़माने की बात है। उस ज़माने की, जब दुनिया में भयानक अजगर ऐदाहर राज करता था। वह केवल ख़ून से ही पेट भरता था और किसी पर दया नहीं करता था। और नीच मच्छर उसकी चाकरी किया करता था।

एक बार ऐदाहर ने मच्छर को बुलाया और कहा:

"जाकर सारी दुनिया का चक्कर लगा और चुपचाप सारे प्राणियों के ख़ून का स्वाद चखकर आ। लौटते ही मुझे बताना कि किसका ख़ून सबसे मीठा है। तू जिसका नाम लेगा, मैं उसी का शिकार किया करूँगा।"

मच्छर उड़ चला। वह उसकी आज्ञा का पालन करके वापस लौट रहा था कि उसे अबाबील मिल गयी।

"कहाँ गया था?"

"मैं अपने स्वामी की आज्ञानुसार सारी दुनिया का चक्कर काटने गया था, जिससे कि पता लगा सकूँ कि किसका ख़ून सबसे मीठा है।"

"तो क्या पता लगा लिया?"

"सबसे मीठा ख़ून मनुष्य का होता है।" मच्छर भिनभिनाया।

अबाबील घबरा उठी।

"तू, मच्छर, अजगर को सच्ची बात मत बताना। मनुष्य भला है, तू उसका नाश मत करवाना।"

"नहीं, बताऊँगा!"

अबाबील ने फिर कहा:

"तुझसे विनती करती हूँ, तू मनुष्य का बुरा मत कर, वह मेरा मित्र है।"

पर मच्छर बोला:

"नहीं, बताऊँगा!"

मच्छर उड़कर ऐदाहर के पास पहुँचा और अबाबील उनके ऊपर चक्कर काटने लगी।

"चल," अजगर फुफकारा, "बता क्या पता करके आया है। खबरदार, जो एक शब्द भी झूठा कहा!"

"मेरे स्वामी, महाराज," मच्छर भिनभिनाकर बताने लगा, "मैं आपको बिना कुछ छिपाये सब सच-सच बताता हूँ। सबसे स्वादिष्ट और सबसे मीठा खून आ... ऽऽ आ... आ..."

वह कहना चाहता था "आदमी का...", पर कह नहीं पाया। अबाबील ने फुर्ती से झपट्टा मारकर अपनी पैनी चोंच से मच्छर की जीभ की नोक काट ली।

मच्छर अजगर के ऊपर पंख फड़फड़ाता चक्कर काटने लगा:

"आ... आ... आ..."

पर उसके मुंह से कोई आवाज़ न निकल सकी।

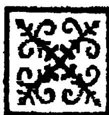
जब कि अबाबील खुशी से चहचहा उठी:

"मैं जानती हूँ, ऐदाहर, तेरा सेवक क्या कहना चाहता था: दुनिया में सबसे मीठा खून अजगर का होता है!"

अजगर अबाबील पर गुस्सा हो उठा, वह कुंडली मारकर मुंह फाड़े आकाश में उछला। पर अबाबील से फुर्तीली चिड़िया दुनिया भर में नहीं है। वह गोता मारकर एक तरफ़ हो गयी और ऐदाहर के मुंह में केवल उसकी पूंछ ही आ सकी। अबाबील ज़ोर लगाकर दर्दनाक मौत से बच निकली।

जब कि भयानक अजगर दांतों में तीन पर दबाये ऊंचाई से धड़ से ज़मीन पर गिरा। वह चट्टान से टकराकर चूर-चूर हो गया।

अबाबील की पूंछ इसीलिए फटी हुई होती है और यही कारण है कि लोग इस चिड़िया को इतना प्यार करते हैं।



दिव्यदर्शी

बहुत दिन हुए दूर-दराज़ के एक गाँव में एक ग़रीब रहता था। माल-असबाब के नाम पर उसके पास केवल लोमड़ी की खाल की एक टोपी थी और एक क़द-मबाज़ घोड़ा। उसकी टोपी इतनी घिस चुकी थी कि उसमें छेद ही छेद रह गये थे, लेकिन उसका घोड़ा ऐसा था कि उसकी जोड़ का दुनिया भर में न मिलता: सूरज को उसकी ख़ूबसूरती से ईर्ष्या होती थी और हवा को उसकी गति से।

एक अन्य गांव में दो धनी – ग़रीब के बड़े भाई – रहते थे। उनके पास घोड़ों के तीस झुण्ड, भेड़ों के तीस रेवड़ और क़ालीनों, बरतनों तथा हथियारों से भरे तीस तम्बू-घर थे।

पर इतना होने के बावजूद भी वे ख़ुश नहीं थे। वे एक क्षण को भी नहीं भूल पाते थे कि उनके छोटे भाई के पास दुनिया का बेजोड़ घोड़ा है और केवल किसी तरह उस घोड़े को मार डालने की तरकीबें ही सोचा करते थे।

एक बार ग़रीब अपनी फटी टोपी पहनकर उछलकर घोड़े पर सवार हुआ और उसे सरपट दौड़ाता भाइयों के पास गया।

उन्होंने उसे देखते ही मुंह फेर लिये, और उनके चेहरे द्वेष के मारे काले स्याह हो गये। ग़रीब ने सिर झुकाकर उन्हें सलाम किया और बोला:

"भाइयो, मुझे ग़रीबी ने कहीं का नहीं छोड़ा, मैं खेत में मज़दूरी करना चाहता हूँ, पर घोड़े के कारण मेरे हाथ बंधे हुए हैं। क्या आप इसे पतझड़ तक के लिए अपने घोड़ों के झुण्डों में मिला लेंगे? इससे आपका कोई नुक़सान नहीं होगा, और मेरी भी चिन्ता दूर हो जायेगी। पतझड़ में मैं आपको, जितना भी आपका खर्च होगा, चुका दूँगा।"

धनवानों ने एक दूसरे की ओर देखकर आंख मारी और विनम्रता व स्नेहपूर्वक ग़रीब से बोले:

"भाई, तुम्हारी मदद करके हमें हमेशा ख़ुशी होती है। तुम घोड़े को हमारे झुण्ड

में छोड़ दो, मजे से पतझड़ तक चरता रहे। और इसके लिए हमें कुछ चुकाने की कोई ज़रूरत नहीं है।"

ग़रीब भाइयों का धन्यवाद कर घोड़े को झुण्ड में छोड़ आया और ख़ुद सन्तुष्ट हो ख़ुशी-ख़ुशी घर लौट आया।

वसंत बीता, ग्रीष्म ऋतु आ गयी। ग़रीब खेत-मज़दूर का काम करता पूर्णत: आश्वस्त रहा: वह ख़ुद का पेट भी भर रहा था और घोड़े के बारे में भी निश्चिन्त था।

लेकिन एक दिन एक अपरिचित उसके पास भागा आया और बोला कि वह उसे अकेले में एक बहुत ज़रूरी बात बताना चाहता है।

ग़रीब उसके पीछे-पीछे गया और जब वे अकेले रह गये, उस व्यक्ति ने बताया कि वह उसके भाइयों का चरवाहा है और बोला:

"सुनो, दोस्त, मुसीबत आ पड़ी है: तुम्हारा क़दमबाज़ दम तोड़ रहा है। तुम्हारे भाइयों ने उसे उसपर सवारी कर-करके अधमरा कर दिया – वह अब शायद तीन दिन भी ज़िन्दा नहीं रह पाये। मुझे तुम पर बहुत दया आयी, इसीलिए तुम्हें यह बताने आ गया। लेकिन तुम अपने भाइयों को मेरा नाम न बताना। अगर तुमसे पूछने लगें कि तुम्हें किसने बताया, तो कह देना: 'मैं दिव्यदर्शी हूँ, मुझे दुनिया में होनेवाली हर घटना मालूम हो जाती है।'"

इतना कहकर वह चला गया। ग़रीब फूट-फूटकर रोने लगा और अपने भाइयों के पास रवाना हो गया।

वे उसे रास्ते में मिल गये और वह रोता हुआ उन्हें शर्मिन्दा करने लगा तथा उलाहने देने लगा:

"भाइयो, मुझ असहाय ग़रीब को नुक़सान पहुंचाते आपको शर्म नहीं आयी? मैंने आपका क्या बिगाड़ा है, जो आपने मेरे घोड़े को मार डाला?"

धनी समझ गये कि ग़रीब को सारा मामला मालूम पड़ गया है और वे इससे इनकार करने लगे:

"लगता है या तो तुम पागल हो गये या नशे में हो! तुम यह क्या बकते हो? तुम्हारा घोड़ा सही-सलामत है और हमारे घोड़ों के साथ मज़े से चर रहा है।"

"नहीं, भाइयो," ग़रीब बोला, "आप लोग मुझे धोखा मत दीजिये: आपने मेरे घोड़े को दौड़ा-दौड़ाकर अधमरा कर दिया और वह तीन दिन भी नहीं जियेगा।"

"यह किसने कहा तुमसे?" धनियों ने पूछा।

"मुझे किसी ने कुछ नहीं बताया। मैं दिव्यदर्शी हो गया हूँ और मुझे दुनिया में होनेवाली हर चीज़ दिखाई देती है," ग़रीब ने उत्तर दिया।

धीरे-धीरे भाइयों के गिर्द लोग जमा होने लगे, सभी जानना चाहते थे कि बात क्या है।

ग़रीब ने चरवाहे की कही सारी बातें दोहरा दीं और भीड़ इस बात की जांच

करने धनियों के घोड़ों के झुण्ड देखने चल पड़ी कि कहीं वह अपने भाइयों पर झूठा दोष तो नहीं मढ़ रहा है। लोग जब उस स्थान पर पहुंचे, तो उन्होंने अपनी आंखों से देख लिया कि ग़रीब सच कह रहा था: उसका घोड़ा बेदम-सा, बड़ी मुश्किल से सांस लेता, ज़मीन पर पड़ा हुआ था और उसके दोनों बाज़ुओं पर फोड़े ही फोड़े थे।

तब भीड़ क्षुब्ध हो उठी और धमकी देकर धनियों से ग़रीब को क़दमबाज़ के बदले में उनके दस बढ़िया तेज़ घोड़े देने की मांग करने लगी।

धनियों के लिए उनका कहा मानने के सिवा कोई चारा न रहा। किन्तु तब से उन्हें अपने भाई से और भी घोर घृणा हो गयी और वे उसे तबाह करने की ताक में ही रहने लगे।

एक बार उस देश के ख़ान की, जिसमें भाई रहते थे, सोने की एक अमूल्य ईंट ग़ायब हो गयी।

ख़ान ने सारे देश में मुनादी करवा दी कि जो कोई सोना छिपाने का स्थान बतायेगा उसे ख़ान के गल्ले से एक हज़ार चुनिंदा भेड़ें और तीन सौ दुधारू घोड़ियाँ इनाम में दी जायेंगी।

जब यह बात धनियों के कानों में पड़ी, वे ख़ान के सामने हाज़िर हुए और बोले:

"जहांपनाह, हमारा एक छोटा भाई है, जो अपने को दिव्यदर्शी कहता है। हमने उसे अपने दोस्तों के सामने डींग मारते सुना था कि वह एक रात में चोर को ढूंढ़ सकता है, पर बस आपको ख़ुश नहीं करना चाहता। आपके उसे मौत की धमकी देने की देर है कि भोर होते होते सोने की ईंट आपके हाथों में पहुंच जायेगी।"

ख़ान ने भाइयों की बात पर विश्वास कर लिया और ग़रीब को तत्क्षण हाज़िर करने का आदेश दिया।

जब ग़रीब हाज़िर हुआ, ख़ान बोला:

"सुना है, तुम अपने को दिव्यदर्शी कहते हो। मैं ख़ुद यक़ीन करना चाहता हूँ कि क्या यह सच है। तुम भोर होने तक मेरी चोरी गयी सोने की ईंट हासिल करके मुझे दे दो, मैं तुम्हें घोषित इनाम के अलावा ऊपर से ऊंटों का एक क़ाफ़िला भी दूँगा। अगर तुमने मेरी आज्ञा का पालन नहीं किया, तो मैं तुम्हें पागल घोड़े की पूंछ से बांधकर उसे स्तेपी में छोड़ देने का हुक्म दे दूंगा।"

ग़रीब तुरन्त अपने भाइयों की चालबाज़ी समझ गया और उसने ख़ान को उत्तर दिया:

"जहांपनाह, आप अपने नौकरों को स्तेपी में मेरे लिए तम्बू-घर लगाने का हुक्म दे दीजिये। मैं मंत्र पढ़ता हुआ अकेला उसमें रात गुज़ारूंगा और शायद सुबह तक आपका सोना ढूँढ़ने में सफल हो जाऊंगा।"

पर मन-ही-मन वह सोच रहा था: "स्तेपी में ये तम्बू-घर लगवा दें, फिर मैं रात में किसी न किसी तरह वहाँ से भाग जाऊंगा।"

ग़रीब के लिए स्तेपी के बीचोंबीच शानदार तम्बू-घर लगवा दिया गया, और वह उसमें अकेला रह गया। आधी रात होते ही उसने टोपी अपनी आंखों तक खींचकर पहन ली और दबे पांव दरवाज़े की ओर खिसकने लगा।

उसी समय ख़ान की सोने की ईंट चुरानेवाला चोर वहाँ से गुज़र रहा था। उसने शानदार तम्बू-घर देख लिया और सोचा कि उसमें ज़रूर कुछ-न-कुछ उसके हाथ लगेगा। चोर दरवाज़ा खोलने ही वाला था कि वह स्वतः उसके आगे खुल गया और वह घबड़ाकर ग़रीब के पैरों में गिर पड़ा।

ग़रीब ने सोच-विचार में ज़्यादा देर लगाये बिना उसे दबोच लिया और उसका गला पकड़ा।

तब चोर गिड़गिड़ाने लगा:

"मुझ पर दया करो, मुझे छोड़ दो–मैं ख़ान का चुराया हुआ सोना तुम्हें दे दूँगा।"

"ठीक है," ग़रीब बोला, "मैं तुम्हें छोड़ दूँगा, मगर तुम मुझे बताओ कि मूल्यवान ईंट तुमने कहाँ छिपा रखी है?"

"यहाँ से पूर्व की ओर जाओ, तुम्हें एक ऊंची टेकरी दिखाई देगी, उस पर एक विशाल काला पत्थर रखा है। मूल्यवान ईंट उसी पत्थर के नीचे गाड़ी हुई है।"

ग़रीब ने चोर को छोड़ दिया। क्योंकि भोर हो चला था, इसलिए वह ख़ान के पास चला गया।

वह ख़ान को पूर्व की ओर ले गया, उनके पीछे-पीछे ख़ान के सारे अंगरक्षक और अनेक नौकर चल रहे थे।

अब वे काले पत्थर के पास पहुंचे, ग़रीब ने नौकरों को ज़मीन खोदने को कहा, और उन्होंने उसे खोदकर सोने की ईंट निकाल ली।

"अरे," ख़ान ग़रीब से बोला, "लगता है तुम तो सचमुच दिव्यदर्शी हो! मैं तुम्हें हमेशा ध्यान में रखूंगा।"

वह इतना खुश हुआ कि उसने फ़ौरन ग़रीब को एक हज़ार भेड़ें, तीन सौ दुधारू घोड़ियां व ऊंटों का क़ाफ़िला देने की आज्ञा दी और उसे अपने घर लौट जाने की अनुमति प्रदान कर दी।

कुछ दिनों बाद उसी चोर ने ख़ान का मनपसन्द तेज़ घोड़ा चुरा लिया। ख़ान दुःख के मारे बिस्तर पर पड़ गया। उसने फिर ग़रीब को बुलवाया और उससे कहा:

"यदि तुम दिव्यदर्शी हो, तो बताओ, मेरा घोड़ा कहाँ है, मैं तुम्हें पहले से दुगुना इनाम दूंगा। अगर तुमने जवाब देने से इनकार किया या ग़लत जवाब दिया, तो मैं तुम्हारा सिर कटवाने की आज्ञा दे दूँगा।"

ग़रीब के काटो, तो खून नहीं, पर उसे ख़ान का विरोध करने का साहस नहीं

हुआ, उसने उससे केवल उसके लिए फिर से स्तेपी में तम्बू-घर लगवाने की प्रार्थना की। ख़ान ने उसकी इच्छा पूरी कर दी।

अकेला रहने पर ग़रीब किसी तरह मौत से बच निकलने की तरकीब सोचने लगा। आधी रात इसी में बीत गयी, फिर वह दबे पांव तम्बू-घर से निकला और सिर पर पैर रखकर भाग निकला।

वह भागता-भागता दो ऊंचे पहाड़ों के बीच की एक तंग घाटी में पहुंचा और पेड़ के तले गिरकर गहरी नीन्द में सो गया।

संयोगवश ख़ान के घोड़े को सरपट दौड़ाता चोर भी उसी तंग घाटी में पहुँचा। उसने चारों ओर नज़र दौड़ाकर सोचा कि वहाँ उसे किसी प्रकार का ख़तरा नहीं और सुबह तक वहीं रहने का फ़ैसला किया।

उसने घोड़े को पेड़ से बांध दिया और ख़ुद सोये हुए व्यक्ति को देखे बिना वहीं लेट गया और उसके ख़र्राटों से सारी घाटी गूँज उठी।

ख़र्राटों के शोर से ग़रीब की नीन्द खुल गयी और उसे काफ़ी देर तक समझ में नहीं आया कि आवाज़ आ कहाँ से रही है। अन्त में उसे अपने क़रीब लेटा व्यक्ति और पेड़ से बंधा घोड़ा नज़र आ गये। अब कोई सन्देह न रहा – उसके सामने चोर और अरग़ामाक़* थे। उसका दिल डर और ख़ुशी के मारे धुकुर-पुकुर करने लगा।

उसने चुपचाप उठकर घोड़ा खोला और उछलकर काठी पर सवार हो, टिटकारी मार हवा से बातें करता ख़ान के तम्बू-घर की ओर दौड़ पड़ा।

भोर हुए ख़ान घोड़े की टापें सुन, जो पहने था उसी में, बाहर भाग निकला और अपने चहेते घोड़े को देखकर अपनी आंखों पर विश्वास न कर पाया। केवल जब वह घोड़े के पास पहुंचा और घोड़ा हिनहिनाने लगा, तभी जाकर उसे विश्वास हुआ कि वह उसी का घोड़ा है। ख़ान ने ख़ुशी में तुरन्त ग़रीब को वह सब देने की आज्ञा दे दी, जिसका वादा उससे किया था और उसपर विशेष अनुग्रह के प्रतीक स्वरूप उसे अपने साथ एक प्याला क़िमिज़ पीने का निमंत्रण दिया।

नौकरों ने ख़ान के लिए तम्बू-घर में से रेशमी मसनदें निकालकर उसे सोने के प्याले में मादक त्यूनेमेल** दिया। ग़रीब ख़ान से कुछ दूरी पर ज़मीन पर ही बैठ गया, नौकरों ने उसे लकड़ी के प्याले में आधा भेड़ का दूध पड़ी क़िमिज़ ढाल दी।

ख़ान ने जब अपनी क़िमिज़ लगभग पूरी पी डाली, तो उसके प्याले में एक बड़ा-सा टिड्डा फुदककर घुस गया। ख़ान ने उसे पकड़ना चाहा, पर वह फुदककर उसके हाथ तले से ज़मीन पर जा बैठा। ख़ान ने उसपर हाथ रखकर पकड़ना चाहा, पर वह फिर

---

* अरग़ामाक़ – तेज़ व हल्के सवारी घोड़े की नस्ल।

** त्यूनेमेल – बढ़िया क़िस्म की क़िमिज़।

फुर्र से प्याले में जा बैठा। ख़ान ने फुर्ती दिखायी, टिड्डे को पकड़ लिया और मुट्ठी में बंद कर लिया।

पर ग़रीब ने कुछ नहीं देखा।

"ऐ दिव्यदर्शी," ख़ान ग़रीब से बोला, "मैं तुम्हारी अन्तिम बार परीक्षा लेना चाहता हूँ: बताओ, मेरी मुट्ठी में क्या है?"

"बाप रे," ग़रीब ने सोचा, "अब तो मारा गया! अब ख़ान मुझ पर दया नहीं करेगा!" उसने एक ठण्डी सांस लेकर ज़ोर से कहा।

"एक बार बच गया, दूसरी बार भी बच गया, पर तीसरी बार, लगता है, मारा गया।"

लेकिन ख़ान ने सोचा कि यह वह टिड्डे के बारे में कह रहा है।

"शाबाश, तुमने ठीक बताया!" ख़ान ने कहा और टिड्डे का सिर काट दिया।

वह ग़रीब के उत्तर पर काफ़ी देर तक हँसता रहा और फिर उसने उसे मूल्यवान भेंट देकर घर जाने की इजाज़त दे दी।

तब से ग़रीब सुख-चैन से जीने लगा, जब कि उसके धनी भाई, उसकी सफलता की बात सुनकर दुःख के मारे एक ही दिन मर गये।



तीन शिकारी

तीन शिकारी थे: दो दाढ़ीवाले, एक बेदाढ़ी।

एक बार वे चिड़ियों का शिकार करने स्तेपी में गये। वे दिन भर शिकार की खोज में भटकते रहे और केवल शाम होते होते एक द्रोफ़ा* मार पाये।

फिर शिकारियों ने एक झोंपड़ी बनायी, अलाव सुलगाया और शिकार को बांटने ही जा रहे थे कि दुविधा में पड़ गये: द्रोफ़ा तो केवल एक थी, जब कि वे तीन थे।

दाढ़ीवाले बोले:

"द्रोफ़ा उसी को मिलेगी, जो सबसे ज़्यादा देर तक चुप बैठा रहेगा, एक शब्द भी नहीं बोलेगा।"

"ठीक है," बेदाढ़ी ने मान लिया, "जैसी तुम्हारी इच्छा।"

तीनों अलाव के पास बैठ गये, ऐसे चुप्पी साध ली, मानो उनकी ज़बान पर ताले पड़े हों और केवल एक दूसरे की ओर देखते हुए इसी बात की प्रतीक्षा करने लगे कि पहले कौन बोलता है।

एक घंटा बीता, दो बीते, तीन घंटे बीत गये – पर किसी ने मुंह नहीं खोला।

तब बेदाढ़ी ने निःशब्द द्रोफ़ा उठायी और उसके पर नोचने लगा।

दाढ़ीवाले उसकी ओर देखते रहे, पर उन्होंने चूं भी नहीं की।

बेदाढ़ी ने द्रोफ़ा के पर नोचकर उसे चुपचाप देगची में डालकर आग पर चढ़ा दिया।

दाढ़ीवाले देखते रहे, पर उन्होंने चूँ भी नहीं की।

द्रोफ़ा पक गयी, बेदाढ़ी ने बिना कुछ बोले उसे देगची में से निकाला और जल्दी-जल्दी खाने लगा।

दाढ़ीवाले उसकी ओर देखते रहे, पर उन्होंने चूँ भी नहीं की।

---

* द्रोफ़ा – स्तेपी की एक बड़ी चिड़िया, जिसकी गर्दन लम्बी होती है और पैर काफ़ी मज़बूत होते हैं।

और जब उसने आखिरी हड्डी चचोड़ डाली, तभी दाढ़ीवाले एक साथ चीख उठे:

"तुमने शर्त तोड़कर द्रोफ़ा को खाने की हिम्मत कैसे की? यह तो लूटमार है!"

बेदाढ़ी हँसने लगा:

"तुम लोग ग़ुस्सा क्यों होते हो? क्या शर्त भूल गये? यही तो तय हुआ था कि जो सबसे ज़्यादा देर चुप रहेगा, उसे ही द्रोफ़ा मिलेगी। है ना? तुम दोनों ही पहले गला फाड़कर चिल्लाये। है ना? यानी द्रोफ़ा मेरी हो गयी। फिर अब बहस करने की बात है क्या?"

दाढ़ीवाले दाढ़ी खुजलाने लगे। वे समझ गये कि वे बुद्धू बन गये। उन्हें खाली पेट ही सोना पड़ा।

अगले दिन शिकारियों ने दो कलहंस और एक चहा मारे।

"हम शिकार का बंटवारा कैसे करेंगे?" दाढ़ीवालों ने पूछा।

बेदाढ़ी बोला:

"तुम दो हो और मैं अकेला। कलहंस भी दो हैं, पर चहा एक है। तुम चहा ले लो और मैं दो कलहंस ले लेता हूँ। तब तुम भी तीन हो जाओगे और हम भी – तीन।"

"अरे, अरे," दाढ़ीवाले बोले, "लगता है, भई, तुम हमें बेवक़ूफ़ बनाना चाहते हो। हर कोई जानता है कि कलहंस चहा से बेहतर होते हैं।"

बेदाढ़ी ने आंख भी नहीं झपकाई।

"सच," वह बोला, "कलहंस चहा से बेहतर होते हैं। पर तुम भी तो मुझसे बेहतर हो। इसीलिए तो मैं तुम्हें अपने बदले चहा लेने को कह रहा हूँ और खुद तुम्हारे बदले कलहंस ले रहा हूँ।"

दाढ़ीवालों ने एक दूसरे से नज़रें मिलायीं – उन्हें लगा शायद बेदाढ़ी ठीक ही कह रहा है। उन्होंने अपनी दाढ़ी खुजलाई और एक ठण्डी सांस लेकर चहा को खाने लगे।

जब कि बेदाढ़ी ने भरपेट कलहंस का मांस खाया।

तीसरे दिन शिकारियों ने एक हंस मारा। उन्होंने उसके पर नोचकर उसे पकाया और देगची आग पर से उतार ली।

"अब हंस को हम कैसे बांटेंगे?" एक दाढ़ीवाले ने पूछा।

"ऐसे," दूसरा दाढ़ीवाला बोला। "हम हंस को देगची में पड़ा रहने देंगे और खुद सो जायेंगे। जिसे सबसे आश्चर्यजनक सपना दिखाई देगा, हंस उसे ही मिलेगा।"

"ठीक है," बेदाढ़ी बोला, "जैसी तुम्हारी इच्छा।"

शिकारी लेट गये। बेदाढ़ी लेटते ही खर्राटे भरने लगा, जब कि दाढ़ीवाले आधी रात गये तक एक दूसरे से अधिक आश्चर्यजनक सपने गढ़ते हुए करवटें बदलते रहे।

सुबह बेदाढ़ी बोला:

"अच्छा, अब सुनाओ अपने-अपने सपने।"

पहला दाढ़ीवाला कहने लगा :

"मुझे बहुत अद्भुत सपना दिखाई दिया। मुझे लगा जैसे मैं तुलपार* बन गया हूँ। मेरे कंधों के नीचे पंख उग आये, पैरों की जगह चांदी के खुर और कंधों पर – सुनहली अयाल। मैंने अयाल झटकारी, पंख फड़फड़ाये, खुर ज़मीन पर मारे और तीन छलांगों में एक छोर से दूसरे छोर तक सारी स्तेपी पार कर ली। तभी एक अतिसुन्दर अपरिचित शूरवीर मेरे सामने आ खड़ा हुआ। वह मेरी पीठ पर सवार हो गया और मैं अपनी पीठ पर बलवान सवार को बैठा महसूस कर इतना ऊँचा उड़ गया कि वहाँ से ज़मीन दिखाई देना बंद हो गया। मेरा सिर चकरा गया और मेरी नीन्द खुल गयी।"

दूसरा दाढ़ीवाला सुनाने लगा :

"तुम्हारा सपना अच्छा है, दोस्त, पर मेरा – उससे भी अच्छा है। मैंने सपने में देखा कि मैं वही अतिसुन्दर अपरिचित शूरवीर हूँ। अचानक तुम तुलपार में बदलकर मेरे पास भागकर आये। मैं उछलकर तुम्हारी पीठ पर सवार हो गया, तुम्हारी अयाल पकड़ ली और आकाश में उड़ चला। हम आकाश में हवा से बातें करते दूर, बहुत दूर पहुँच गये – आगे सूरज, पीछे चांद, पैरों तले तारे, बिजलियां, बादल ... मेरे चारों ओर शानदार कपड़े पहने परियां उड़ रही थीं, वे मुझ पर बहुमूल्य उपहार लुटा रहीं थीं, पर मैं उन्हें पकड़ने के लिए हाथ बढ़ाता, तो कोई भी हाथ नहीं आती थी और न ही मैं तुलपार को रोक पा रहा था ... तभी मेरा सपना टूट गया, इसके बाद क्या हुआ, मुझे कुछ मालूम नहीं।

तब बेदाढ़ी बोला :

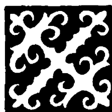
"तुम्हारे सपने अच्छे हैं, दोस्तो, बहुत अच्छे! मैं तुम्हारा क्या मुक़ाबला कर सकता हूँ! मुझे सपने में दिखा जैसे हम तीनों इस झोंपड़ी में बैठे हैं और अचानक तुम में से एक तुलपार बन गया और दूसरा अपरिचित अतिसुन्दर शूरवीर। तुलपार ने अयाल झटकारी, पंख फड़फड़ाये, खुर ज़मीन पर मारे और तीन छलांग में एक छोर से दूसरे छोर तक सारी स्तेपी पार कर गया। तभी न जाने कहाँ से उसके सामने एक अपरिचित शूरवीर आ पहुँचा, उछलकर उसकी पीठ पर सवार हो गया और आकाश में उड़ चला। मैं फूट-फूटकर रोने लगा। 'आह,' मैंने मन में कहा, 'अब मेरे दोस्त शायद ज़मीन पर लौटकर नहीं आयेंगे। और हंस की उन्हें अब कोई ज़रूरत नहीं रह गयी है। कम-से-कम मैं कुछ खाकर उन्हें याद तो कर लूँ!' मैंने दुःख के मारे पूरा हंस खा डाला।"

"तुम क्या कह रहे हो!" दोनों दाढ़ीवाले एक साथ चिल्ला उठे। "यह नहीं हो सकता!"

उन्होंने देगची में झांककर देखा, उसमें केवल हंस की हड्डियां पड़ी थीं।

---

* तुलपार – परी-कथाओं का उड़नेवाला घोड़ा।



नेकी और बदी

बहुत दिन हुए दो आदमी थे – जक्सीलिक़* और जमनदिक़**।

एक बार जमनदिक़ लम्बे सफ़र पर रवाना हुआ। वह चलता रहा, चलता रहा और बहुत थक गया। एक बांका नौजवान घोड़े पर उसके पास पहुँचा। वह बाँका नौजवान और कोई नहीं, जक्सीलिक़ था। मालूम पड़ा, उन दोनों का रास्ता एक ही है।

"मुझे अपने साथ ले चलो," जमनदिक़ ने विनती की, "तुम्हारा घोड़ा अच्छा है, वह हमें पहुँचा देगा। साथ रहने से सफ़र भी हंसी-ख़ुशी कट जायेगा।"

"ठीक है, मुझे मंजूर है," जक्सीलिक़ बोला, "पर एक शर्त है: हम बारी-बारी से सवारी करेंगे। तुम्हें वहां पेड़ दिखाई दे रहे हैं? तुम वहां घोड़ा छोड़कर आगे पैदल जाओगे और मैं घोड़े पर सवार होकर। फिर तुम्हारी सवारी करने की बारी आ जायेगी। तुम ख़ुद ही सोचो, हम दोनों को घोड़ा एक साथ नहीं ढो सकेगा।"

जमनदिक़ मान गया। वह घोड़े पर सवार हो उसे सरपट दौड़ा ले चला।

जक्सीलिक़ काफ़ी देर तक पैदल चलता रहा। दिन ढलने लगा और रास्ते के दोनों ओर अंधेरा घना जंगल दिखाई देने लगा, पर न घोड़ा कहीं नज़र आया, न ही जमनदिक़।

यानी वह आदमी जक्सीलिक़ को धोखा दे गया।

यही हुआ था। जमनदिक़ आंखों से ओझल होकर मज़े से वहां पहुँच गया, जहां उसे जाना था। "पेट भरे के खोटे चाले," क्षमाशील जक्सीलिक़ ने सोचा।

उसे जंगल में एक उजड़ी पड़ी झोंपड़ी दिखाई दी और वह सुस्ताने के लिए उसमें घुस गया।

झोंपड़ी में सन्नाटा था, किसी का नाम-निशान न था। केवल बीचोंबीच सुलगते अलाव पर बड़ा-सा देग रखा था और देग में मांस पक रहा था। जक्सीलिक़ हैरान हो

---

* जक्सीलिक़ – नेकी।

** जमनदिक़ – बदी।

गया: "सारी झोंपड़ी में इतनी सौंधी-सौंधी गंध फैली हुई है, पर मालिक का नाम नहीं। आखिर यहाँ कौन रहता है?"

"ज़रा चखकर देखूं!" जक्सीलिक़ ने कहा।

उसने देग में उंगली डुबोकर चाटी और मन ही मन सोचा: "बहुत स्वादिष्ट है!" पर उसने खाना नहीं खाया – वह मालिक को नाराज़ नहीं करना चाहता था।

जक्सीलिक़ झोंपड़ी की छत पर आराम की जगह ढूंढ़कर लेट गया।

कुछ समय बाद झोंपड़ी में तीन प्राणी आये: भेड़िया, लोमड़ी और शेर। भूखे भेड़िये की आंखें मशाल की तरह जल रही थीं, शेर अपनी झबरी अयाल झटकार रहा था, गुस्से में दहाड़ रहा था, जब कि लोमड़ी चलती नहीं, तैरती-सी आ रही थी, बस हर क़दम पर मुंह उठाकर सूंघती चल रही थी।

"हाय, हाय! किसी ने हमारा खाना चखा है!" लोमड़ी देग के पास पहुँचने से पहले ही परेशान हो उठी।

"तुम क्या कह रही हो, लोमड़ी, यहाँ कौन आ सकता है, हमारा खाना कौन खायेगा! तुम्हें बस ऐसा लगा है।"

लोमड़ी शान्त हो गयी। वे तीनों देग के इर्द-गिर्द बैठ गये और खाने लगे।

खाना खाकर भेड़िया, लोमड़ी और शेर अपने दिन भर के जोखिमभरे कारनामे एक दूसरे को सुनाने लगे।

"तुम आज कहां-कहां गयी, तुमने क्या-क्या देखा और कौन-कौन-सी मज़ेदार बातें सुनी?" भेड़िये और शेर ने लोमड़ी से पूछा।

लोमड़ी बोलने में कंजूस नहीं थी।

"पिछले कई दिनों से मैं जाड़े के पुराने पड़ाव के खण्डहरों में जा रही हूँ। वहां चांदी के सिक्कों से भरा एक छोटा-सा घड़ा गड़ा हुआ है। मैं किसी भले आदमी के लिए उसकी रखवाली कर रही हूँ।"

भेड़िया भी अपनी भलमानसी के बारे में बताने लगा:

"ऐसा कोई दिन नहीं रहा, न ही रात, जब मैं बाय के भेड़ों के रेवड़ में न गया हूँ," उसने सुनाना आरम्भ किया। "उनमें एक चितकबरी भेड़ ख़ास तौर से अच्छी है। मैं उसी को नहीं छूता। उन भेड़ों के मालिक की एक सुन्दर बेटी है। वह कई बरसों से बीमार है और कोई उसका इलाज नहीं कर पा रहा है। बाप ने बेटी की शादी उस आदमी से करने का वादा किया है, जो उसका इलाज कर दे, पर कोई उसकी रोगहर दवाई नहीं खोज पाता। हालांकि ऐसी दवाई है। अगर चितकबरी भेड़ का दिल निकालकर पकाया जाये और उसे लड़की को खिलाया जाये, तो वह पलक झपकते स्वस्थ हो जायेगी। पर मैं मालिक पर नाराज हूँ, वह कई बार मेरे पीछे कमन्द लेकर भाग चुका है, और चितकबरी भेड़ के बारे में मैं किसी को नहीं बताऊँगा।"

शेर ने अपनी आप-बीती सुनाई :

"मैं रोज़ रात को दबे पांव बाय के घोड़ों के झुण्ड में जाता हूँ, एक घोड़े को मारकर उठा ले जाता हूँ और खाकर घर लौट आता हूँ। घोड़ों के मालिक को मालूम नहीं है कि घोड़े कौन ले जाता है। हाल ही में उसने गांव के सारे लोगों को इकट्ठा करके उनके साथ देर तक बातचीत की और घोड़ों का सारा झुण्ड उस आदमी को देने का वादा किया, जो घोड़ों के चोर को पकड़ ले। पर मैं बिलकुल नहीं डरता। बाय का कोई भी घोड़ा मुझसे तेज़ नहीं भाग सकता। वैसे झुण्ड में एक छोटा-सा बछेड़ा है। उसके माथे पर सफ़ेद तारा है। सिर्फ़ वही मुझे दौड़ में पछाड़ सकता है। लेकिन मालिक को इस बारे में कुछ मालूम नहीं है।"

जी भरकर बात कर लेने के बाद वे ऊंघने लगे, पर शीघ्र ही जाग गये और सब अपने-अपने काम करने चले गये।

जक्सीलिक़ छत पर लेटा-लेटा उनकी बातें ध्यानपूर्वक सुनता रहा और भेड़िये, लोमड़ी व शेर के झोंपड़ी छोड़कर जाते ही वह भी चला गया।

जक्सीलिक़ बख़्सी की पोशाक पहनकर उस गांव में से गुज़रने लगा, जिसमें बाय व उसकी बेटी रहते थे। बख़्सी को देखते ही बाय उसकी मिन्नत करने लगा :

"ख़ुद अल्लाह ने तुम्हें हमारे गांव में भेजा है! तुम पोशाक से भले ही ग़रीब हो, पर अक़्ल के धनी हो! ज़रा आकर मेरी बेटी को देख लो।"

जक्सीलिक़ ने निःशब्द सहमति प्रकट की और रूपवती को देखकर पूछा :

"तुमने इसका इलाज क्यों नहीं करवाया?"

"कराया था, प्यारे बख़्सी, कराया था। लेकिन ऐसी कोई दवा अभी तक नहीं मिली, जो मेरी बेटी को इस रोग से छुटकारा दिलवा सके। शायद तुम्हारी दया से मुझे ऐसी दवा मिल जाये।"

"मैं तुम्हारा दुःख दूर करने में तुम्हारी मदद कर सकता हूँ," जक्सीलिक़ ने कहा, "तुम्हारी बेटी का इलाज तो मैं कर दूँगा, पर तुम्हें इसकी शादी मुझसे करनी होगी।"

बाय ने स्वीकार कर लिया।

"लेकिन एक बात याद रखो," जक्सीलिक़ आगे बोला, "आज तुम्हारा मेहमान कोई ऐसा-वैसा आदमी नहीं, बड़ा आदमी है। तुम्हें उसके लिए चितकबरी भेड़ काटनी होगी।"

बाय ऐसे चौंक उठा, जैसे किसी ने उसके सूई चुभो दी हो, चूँकि वह कंजूस था और चितकबरी भेड़ उसके रेवड़ की सबसे मोटी भेड़ थी। पर अब कुछ किया नहीं जा सकता था, उसने चितकबरी भेड़ काटने, उसका मांस बचा रखने और आंत आदि मेहमान के लिए पकाने का आदेश दिया।

जक्सीलिक़ बाय की चालबाजी भांप गया, पर उसे भेड़ के भीतरी अंग ही तो चाहिए थे।

लड़की को दिल खिलाकर जक्सीलिक़ ने उसे ठीक कर दिया और उसे अपने साथ ले गया।

इसके बाद उसने जाड़े का वह पुराना पड़ाव खोज लिया, जिसका ज़िक्र लोमड़ी ने किया था, वहां ज़मीन खोदकर चांदी के सिक्कों से भरा घड़ा निकाल लिया और उस बाय के यहां चल दिया, जिसका रोज़ाना एक घोड़ा ग़ायब हो रहा था।

"अगर मैं उस चोर को पकड़ लूँ, जो रोज़ रात को तुम्हारे झुण्ड से एक-एक घोड़ा चुरा ले जाता है, तो मुझे क्या दोगे?" जक्सीलिक़ ने पूछा।

"अगर तुम चोर को पकड़ लोगे, तो मैं घोड़ों का सांड़ तुम्हें दे दूँगा।"

"ठीक है," जक्सीलिक़ ने कहा।

वह घोड़ों के झुण्ड में गया और उसमें से माथे पर सफ़ेद तारेवाला बछेड़ा लेकर इन्तज़ार करने लगा।

शेर ने जैसे ही घोड़े को दबोचा, वैसे ही जक्सीलिक़ बछेड़े पर उछलकर सवार हो उसका पीछा करने लगा। उसने शीघ्र ही शेर तक पहुँचकर उसे मार डाला।

अगले दिन सांड़-घोड़ा लेकर जक्सीलिक़ अपने घर चला गया।

जक्सीलिक़ को जंगल की झोंपड़ी में गये काफ़ी समय बीत गया। एक बार उसकी भेंट फिर जमनदिक़ से हो गयी।

जमनदिक़ भिखारी जैसा दिख रहा था। वह फटा-पुराना चोग़ा और वैसी ही फटी हुई टोपी पहने हुआ था, जिसमें से हर दिशा में गंदी रूई के चिथड़े निकले हुए थे।

"ओह जक्सीलिक़, मैंने तब तुम्हारे साथ बहुत बुरा किया!" जमनदिक़ ने कहा। "पर सब उल्टा ही हुआ, तुम खुद देख रहे हो। मुझे बताओ, जक्सीलिक़, तुम इतने मालदार कैसे हो गये? क्या मैं भी ऐसा हो सकता हूँ?"

जक्सीलिक़ ने उसे सब सिलसिलेवार सुना दिया: कैसे वह झोंपड़ी में पहुँचा, कैसे उसने लोमड़ी, भेड़िये और शेर की बातचीत सुनी और उसके बाद उसने क्या किया।

"ठीक है, अपनी क़िस्मत आज़माओ," अंत में जक्सीलिक़ ने कहा। "लेकिन तुम्हें चेतावनी दिये देता हूँ: झोंपड़ी में पहुँचकर बहुत होशियार रहना। अगर देग में मांस पक रहा हो, तो तुम उसे खाओ नहीं। केवल उंगली डूबोकर चख लेना। फिर छत पर चढ़कर वहाँ तब तक लेटे रहना, जब तक कि झोंपड़ी के वासी आ न जायें और जब वे आपस में बातचीत करने लगें, तुम ध्यानपूर्वक सुनकर याद कर लेना।"

जमनदिक़ ने बिना एक क्षण की देर किये जक्सीलिक़ से विदा ली और जंगल को चल दिया। उसने झोंपड़ी जल्दी ही ढूंढ़ ली, उसमें घुसा और उसने वहां सब वैसा ही पाया, जैसा कि जक्सीलिक़ ने बताया था।

झोंपड़ी के बीचोंबीच जलते अलाव पर बड़ा-सा देग रखा था और देग में गोश्त पक रहा था। थका हुआ और भूखा जमनदिक़ यह देखकर बहुत खुश हुआ कि झोंपड़ी में कोई नहीं है।

"झोंपड़ी के मालिक आस-पास कहीं है ही नहीं, इसलिए उन्हें कुछ पता नहीं चलेगा," जमनदिक़ ने सोचा और देग के पास जमकर बैठ गया। उसने चरबीदार मांस के कुछ कतले निकालकर जल्दी से खा लिये और सुस्ताने के लिए झोंपड़ी की छत पर जा चढ़ा।

जमनदिक़ भरपेट खाने के बाद ऊंघने भी न पाया था कि भेड़िया व लोमड़ी झोंपड़ी में आ पहुँचे। लोमड़ी ने देग पर नज़र डाली और लगी चिल्लाने:

"हाय, हाय, हमारा खाना कोई खा गया!"

भेड़िया लोमड़ी को शान्त करने लगा:

"हमारा खाना कौन खा सकता है! खुद ही सोचो: हमारी झोंपड़ी ही इतने घने जंगल में है कि हम खुद बड़ी मुश्किल से रास्ता ढूंढ़ पाते हैं। तुम बेकार ऐसा सोचती हो।"

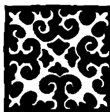
"नहीं, नहीं, इस बार मुझे कोई धोखा नहीं दे सकता! तुम इधर देखो, इधर! देग में टखने की हड्डी है? नहीं है! छाती का गोश्त भी ग़ायब है। मैं अभी सो जाती हूँ," चालाक लोमड़ी बोली, "और सपने में मुझे दिखाई दे जायेगा कि हमारी झोंपड़ी में कौन आया था।"

लोमड़ी पापलर की डाल पर लेटकर धीरे-धीरे खर्राटे लेने लगी, जैसे सचमुच सो रही हो, जब कि जमनदिक़ छत पर मृतप्राय लेटा रहा। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि क्या करे। वह अपने आपको खाने का लोभ संवरण न कर पाने के लिए कोस रहा था।

लोमड़ी जागकर बोली:

"सुनो, दोस्त, हमारी छत पर कोई है। कहीं हमारा खाना उसी ने तो नहीं खाया है?"

लोमड़ी और भेड़िया लपककर छत पर चढ़ गये और वहां उन्होंने जमनदिक़ को देखा। वे उसे नीचे घसीट लाये और आधा-आधा बांटकर खा गये।



धनी और निर्धन

नीलम चिड़िया

बहुत दिन पहले दो भाई थे। छोटे भाई के कोई सन्तान नहीं थी, वह बड़ा व्यापारी था और सुखी जीवन व्यतीत करता था। बड़ा भाई निर्धनता में जीवन-यापन करता था, उसकी एकमात्र खुशी थे उसके दो बेटे – हसन और हुसैन।

गर्मियों में जैसे ही जंगली बेरियां पकने लगतीं, हसन और हुसैन उन्हें चुनने चल पड़ते। मां बेरियां बाज़ार ले जाकर बेचती। सारा परिवार इसी से गुज़र-बसर करता था।

एक बार दोपहर में, जब चारों ओर शान्ति छायी हुई थी, जब परछाईं सबसे छोटी पड़ रही थी और चिलचिलाती धूप की चकाचौंध के कारण यह देख पाना मुश्किल था कि नदी में पानी बह रहा है या नहीं, हसन और हुसैन नदी के किनारे-किनारे झाड़ियों में से होकर चल रहे थे। अचानक उनके पैरों के पास से एक अप्रत्याशित सुन्दर नीलम चिड़िया निकलकर उड़ गयी। लड़के उसे भली-भांति देख भी न पाये थे कि वह उड़कर काफ़ी ऊंचाई पर जा पहुँची और शीघ्र ही आंखों से ओझल हो गयी। तब हसन और हुसैन उसका घोंसला खोजने लगे और उसे जल्दी ही ढूंढ़ लिया। घोंसले में नीली धारियों-वाले सफ़ेद अण्डे पड़े थे। लड़कों को बहुत तेज़ भूख लगी थी और वे अण्डे मिलने पर बहुत खुश हुए। किंतु अण्डे इतने छोटे थे कि हसन और हुसैन ने फ़ैसला किया: "अगर हम इन्हें खा भी लें, तो फ़ायदा कम ही होगा। इन्हें धनी चाचा के पास ले जाना बेहतर होगा।" वे बिना घर में झांके चाचा के यहां गये और उससे पूछा कि क्या वह नीलम चिड़िया के नीली धारियोंवाले सफ़ेद अण्डे खरीदेगा।

"तुम इन्हें कहां से लाये?" चाचा ने पूछा।

"मैदान से, जहां हम झड़-बेरी चुन रहे थे," भाइयों ने उत्तर दिया। चाचा ने अण्डे ले लिये और हसन व हुसैन को आश्चर्यचकित कर सौ रूबल दिये फिर बोला:

"अगर तुम चिड़िया को पकड़ लाओ, तो मैं तुम्हें दो सौ रूबल और दूँगा।"

चाचा को नीलम चिड़िया क्यों चाहिए थी हसन और हुसैन को मालूम न था, पर उन्होंने बिना कुछ सोचे जाल उठाया और उस स्थान के लिए रवाना हो गये, जहां उन्होंने चिड़िया देखी थी। उन्होंने घोंसला ढूंढ़कर उस पर जाल फैलाया और ख़ुद झाड़ियों में छिप गये।

कुछ समय बाद चिड़िया आयी, उसने अग़ल-बग़ल देखा और फुदककर घोंसले में बैठते ही जाल में फंस गयी। बच्चों को उस अद्‌भुत नीलम चिड़िया पर कितनी ही दया क्यों न आयी, पर फिर भी वे उसे चाचा के पास ले गये। साधारणतः कंजूस चाचा ने इस बार अपना वादा निभाया (शायद, चिड़िया उसके लिए बहुत मूल्यवान थी!) और हसन व हुसैन को दो सौ रूबल, शक्कर तथा कपड़े दे दिये। भाई सारी चीज़ें घर ले आये।

पर निर्धन परिवार अधिक दिन सुखी न रह सका।

नीलम चिड़िया का दिल

न तो पिता को ही पता चला, न ही पुत्रों को कि चाचा नीलम चिड़िया को घर ले आया और उसे काटकर उसने अपनी पत्नी को सौंप दिया था।

"मैं शाम को घर आऊंगा," उसने कहा, "और तुम मेरे आने तक इस चिड़िया को पका रखना। देखो, इस चिड़िया का एक भी टुकड़ा किसी को मत देना! समझीं?"

पत्नी ने सोचा: "इस चिड़िया से इनका क्या पेट भरेगा, जब यह एक बार में पूरी भेड़ खा लेते हैं?" किन्तु उसने पति को नहीं टोका। उसने चिड़िया को साफ़ करके टुकड़े-टुकड़े किये, देगची में डालकर पानी भर दिया और आग पर चढ़ाकर पड़ोसन के यहां चली गयी और गपशप करती देर तक बैठी रही।

इस बीच कुतूहल से पीड़ित हसन और हुसैन ने यह पता लगाने चाचा के यहां जाने की सोच ली कि उस चिड़िया का क्या हुआ। कमरे में घुसने पर उन्होंने देखा कि वहां कोई नहीं है और देगची में से घनी भाप निकल रही है।

"क्या सचमुच यह हमारी चिड़िया पकाई जा रही है?" हसन ने साश्चर्य पूछा।

"शायद वही है," उतने ही आश्चर्यचकित हुसैन ने कहा।

उन्होंने देगची के पास जाकर ढक्कन थोड़ा-सा उठाकर देखा: उनकी नीलम चिड़िया ही पक रही थी।

"चलो, चिड़िया का गोश्त चखकर देखते हैं!" हसन ने सुझाव दिया।

"क्यों नहीं, चखे लेते हैं!" हुसैन सहमत हो गया।

उन्होंने चम्मच से चिड़िया का दिल निकाला, उसके बराबर बराबर दो टुकड़े किये और खाकर चले गये।

गृहणी आयी और उसने चम्मच लेकर गोश्त निकाला तो उसका चेहरा फक रह गया: दिल नदारद था। "अब तो ज़रूर वह मुझे डांटेंगे! क्या पड़ी थी मुझे इतनी देर तक पड़ोसन के यहां बैठने की!" वह अपने आप को कोसने लगी।

पर अब पछताये क्या होना था। उसने अहाते में निकलकर एक मुर्ग़ा पकड़ा, उसे काटकर दिल निकाला और देगची में डालकर निश्चिन्त हो गयी।

शाम को पति आया। खाना उसे बहुत स्वादिष्ट लगा।

खाना खा लेने के बाद पति ने शरारती ढंग से पत्नी को आंख मारी और मुस्कराकर बोला:

"बेगम, अल्लाह ने हमारी क़िस्मत खोल दी! सुबह जब जागेंगे, तो तकिये के नीचे सोना मिलेगा।"

पत्नी ने जवाब में कुछ नहीं कहा।

सुबह उनकी नीन्द खुली, उन्होंने तकिया उठाकर देखा—पर वहां कोई सोना-वोना नहीं था। उन्होंने सारा बिस्तर झाड़ मारा, लेकिन उन्हें कहीं सोना नहीं मिला।

जंगल में

सुबह जब हसन और हुसैन की नीन्द खुली, तो अपने-अपने तकियों के नीचे अशरफ़ियों से भरी एक-एक बोरी देखकर उनके आश्चर्य का पारापार नहीं रहा। लड़कों के मां-बाप को भी उनसे कम आश्चर्य नहीं हुआ। हसन व हुसैन का पिता, जिसने कभी इतना सोना नहीं देखा था, बहुत भयभीत हो उठा और सलाह लेने अपने भाई के पास लपका।

"अरे, भाई, मुझे बताओ कि यह क्या बात है? सुबह हमारे बच्चों के तकियों के नीचे हमें एक-एक बोरी अशरफ़ियों की मिली। यह अच्छा है या बुरा?"

व्यापारी की आंखें ईर्ष्या से चमक उठीं। उसने भौंहें सिकोड़ और नज़रें ज़मीन में गड़ाये डराते हुए कहा:

"तुम्हारा बहुत बुरा होनेवाला है, बहुत बुरा! ये जिनों की करतूत है। एक बार एक मुल्ला से मेरी बातचीत हुई थी, तो उसने, अल्लाह की इनायत से, कहा था: 'जिन आदमी को बिगाड़ देता है! जिन से पीछा छुड़ाना चाहिए।' तुम अपने बेटों को कहीं ले जाकर उन्हें मार डालो, वरना सारी ज़िन्दगी वे तुम्हारा बुरा करते रहेंगे। और सोना मुझे दे दो।"

पिता उदास हुआ घर लौट आया। उसने हर पहलू पर विचार किया और अन्त में यह निणर्य किया: "नहीं, अपने बच्चों की जान मैं नहीं लूंगा। उन्हें दूर कहीं स्तेपी या जंगल में ले जाकर छोड़ आऊंगा, जिससे न वे मुझे नज़र आयें, न उनकी आवाज़ मेरे कानों में पड़े।"

उसने सुबह पड़ोसी से घोड़ागाड़ी मांगी, उसमें बच्चों को बिठाया और कहा:

"आज मैं तुम्हें ऐसी जगह छोड़ आता हूँ, जहां ढेर सारी बेरियां हैं। मैं शाम को आकर तुम्हें ले जाऊंगा, इस बीच तुम्हें एक बोरी झड़-बेरी इकट्ठी कर लेनी चाहिए।"

वे काफ़ी देर तक स्तेपी में चलते रहे और अन्त में एक घने जंगल के छोर पर पहुँच गये। पेड़ों के तनों के बीच झाड़ियां आपस में गुंथी हुई थी और लड़कों को वहां ढेरों बेरियां लगी दिखाई दीं।

"लो, बेटो, तुम यहां रुककर झड़-बेरियां इकट्ठी करो।"

पिता इसके आगे कुछ न कह सका और पलटकर रोता हुआ घोड़ागाड़ी के पास लौट गया। उसने लौटकर सोना अपने छोटे भाई को दे दिया और उसके कहे अनुसार इस प्रकार जिनों से पिण्ड छुड़ा लिया।

हसन और हुसैन काफ़ी देर तक झड़-बेरियां इकट्ठी करते रहे, उन्होंने पूरी बोरी भर ली। फिर वे बैठकर पिता की प्रतीक्षा करते हुए सुस्ताने लगे। पर पिता आया ही नहीं। भाइयों को रात जंगल में ही गुज़ारनी पड़ी।

सुबह उनकी नीन्द खुली, देखा – फिर उनके सिरों के नीचे एक-एक बोरी अशरफ़ियों से भरी रखी है। भाइयों ने उसे छुआ भी नहीं और जंगल में भटकने लगे। उन्हें रास्ते में घोड़े पर सवार एक बूढ़ा शिकारी मिला।

"सलाम, बाबा!" दोनों भाइयों ने एक साथ कहा।

"सलाम, बच्चो! तुम कहां से आ रहे हो और कहां जा रहे हो?"

"कहां से आ रहे हैं, नहीं जानते, जंगल बहुत बड़ा है, पर पहला आदमी मिलने तक जा रहे हैं। जिसके कोई बेटी न हो – उसके लिए हम बेटियों की तरह रहेंगे, जिसके बेटा न हो – उसके लिए बेटे की तरह।"

"मेरे बच्चे नहीं हैं, तुम मेरे बेटे हो जाओ। मेरे यहां चलोगे?"

"चलेंगे," लड़कों ने सहमति व्यक्त की।

बूढ़ा भाइयों को घोड़े पर बिठाकर बोला:

"तुम चलो, घोड़ा खुद तुम्हें मेरे घर पहुँचा देगा।"

भाइयों ने बूढ़े का धन्यवाद किया:

"बाबा," वे बोले, "जहां हम सो रहे थे, वहां अशरफ़ियों की दो बोरियां पड़ी हैं।"

...हसन और हुसैन काफ़ी समय तक बूढ़े शिकारी के पास रहे। वे जंगल के जीवन के अभ्यस्त हो गये, तीरंदाज़ी में दक्ष हो गये और अनुभवी व साहसी शिकारी बन गये। कभी का ग़रीब बूढ़ा उस समय तक आस-पास के इलाक़ों में सबसे धनी आदमी हो गया।

भाई जब कुछ बड़े हुए, उनके तकियों के नीचे सोना मिलना बंद हो गया। एक बार वे काफ़ी देर तक आपस में बातचीत करते रहे और उन्हें अपना सारा जीवन स्मरण हो आया।

"किसी ने ठीक ही कहा है, हुसैन, कि कुत्ता कहीं भी क्यों न भटक जाये हमेशा उसी जगह लौट आता है, जहां उसे मांसवाली हड्डी मिली है, और इनसान हमेशा उसी जगह लौटने को तड़पता है, जहां उसका जन्म हुआ था। चलो, हुसैन, अपने माँ-बाप को ढूंढ़ने चलें!"

"जैसा मेरा भाई सोचता है, वैसा ही मैं। तुम जिधर – मैं भी उधर," हुसैन ने जवाब दिया। "चलो!"

वे बूढ़े से विदा लेने उसके पास गये। बूढ़े शिकारी को बांके नौजवानों पर दया आयी, वह बोला:

"मैं तुम्हें पशुओं का झुण्ड दे सकता था, पर देखता हूँ, तुम्हें उसकी ज़रूरत नहीं है। तुम्हारी यात्रा शुभ हो और सफलता तुम्हारे क़दम चूमे!"

बूढ़े ने हसन और हुसैन को एक-एक बढ़िया घोड़ा दिया और वे रवाना हो गये।

सात सिरवाला सांप

भाई पूरे महीने यात्रा करते रहे और अन्त में उन्होंने देखा कि वे एक दोराहे पर पहुँच गये हैं।

"यहाँ हमारे रास्ते अलग-अलग हो जायेंगे," हसन ने कहा, "तुम दायीं ओर जाओ और मैं बायीं ओर जाता हूँ।"

"ठीक है" हुसैन ने कहा। "हम कहीं भी क्यों न जायें, वापस लौटकर यहीं मिलेंगे।"

उन्होंने दोराहे के नुक्कड़ पर लकड़ी की मूठवाला छुरा ज़मीन में गाड़ दिया।

"हम में से कोई मर जाये या ज़िन्दा रहे, यह छुरा बता देगा," हसन ने कहा। "अगर हममें से कोई मर जाये, तो मूठ का उसके रास्ते की तरफ़ का आधा हिस्सा जल जायेगा।"

एक दूसरे से विदा लेकर भाई भिन्न-भिन्न दिशा में चल पड़े।

अब हुसैन को अपने रास्ते पर आगे बढ़ने दीजिये और हसन का क़िस्सा सुनिये।

हसन जब कई गुल्म-वन पार करके खुली स्तेपी में पहुँचा, उसे अपने सामने एक बड़ा शहर फैला हुआ मिला।

हसन ज्यों-ज्यों शहर के निकट पहुंचता गया, त्यों-त्यों उसका आश्चर्य बढ़ता गया: उसे हर जगह काले झण्डे, घरों के चारों ओर लटकी बड़ी-बड़ी काली चादरें दिखाई दे रही थीं।

"आपके शहर में शोक क्यों मनाया जा रहा है?" हसन ने रास्ते में मिली एक बुढ़िया से पूछा।

"लगता है, तुम हमारे शहर के नहीं हो," बुढ़िया ने उत्तर दिया। "अगर जानना चाहते हो, तो बताती हूँ! हमारे यहाँ सात सिरवाला एक मरभुक्खा सांप आने लगा है। वह रोज़ एक लड़की और एक ख़रगोश खा जाता है। आज सांप को ख़ान की बेटी खिलाने की बारी है। ख़ान ने सारे में मुनादी करवा दी है: जो भी सांप को मार देगा और ख़ानशाइम को बचा लेगा, वह उसी से उसकी शादी कर देगा। लेकिन शहर में ऐसा कोई दिलेर अभी तक नहीं मिला है, इसलिए ख़ान ने सारे शहर में काले झण्डे लगाने का हुक्म दिया है।"

हसन सीधा ख़ान के पास गया। ख़ान महल में नहीं मिला, पर हसन ने ख़ान के शयनकक्ष से लगे कमरे में एक बंधा हुआ ख़रगोश और अभूतपूर्व सौन्दर्य की स्वामिनी युवती को देखा। उसकी काली-काली चोटियां उज़बेकी रेशम जैसी थीं और आंखें प्रखर रविरश्मियों की तरह चमक रही थीं। हसन को देखते ही ख़ानशाइम चौंक उठी।

"डरो मत," हसन ने उसको शान्त किया। "मैं तुम्हें सांप से बचा लूँगा। लेकिन तुम इसके बदले में मुझे क्या इनाम दोगी?"

"यदि तुम मुझे मुक्त करा दोगे, तो मैं तुमसे शादी करूँगी।"

हसन थोड़ी देर सोच-विचार कर बोला:

"मैं बहुत दूर से आया हूँ और थक गया हूँ। मैं लेटकर सुस्ता लेता हूँ, जब सांप आये, तुम मुझे फ़ौरन जगा देना।"

हसन गहरी नीन्द में सोया हुआ था कि अचानक कुछ खट-खट, घड़-घड़ हुई और दरवाज़ा झट से खुल गया। ख़ानशाइम देहलीज़ पर सांप का एक सिर, फिर दूसरा, तीसरा, पूरे सात सिर देखकर भय के मारे जड़वत् रह गयी।

पर हसन गहरी नीन्द में सो रहा था। उसकी नीन्द लड़की की चीखों से भी नहीं खुली। ख़ानशाइम हसन के ऊपर झुककर फूट-फूटकर रोने लगी। आंसुओं की गरम-गरम मोटी-मोटी बूंदें हसन के चेहरे पर टपकने से उसकी नीन्द खुल गयी।

हसन ने जागते ही अपने सामने सांप को देखा। कमर पर बंधी भारी तलवार खींच-कर उसने वार किया और सांप के सातों सिर एक ही वार में कटकर दूर जा गिरे।

ख़ानशाइम ने अपनी सोने की अंगूठी उतारकर हसन को दे दी और वह महल से चला गया।

उसी समय संयोगवश ख़ान के वज़ीर ने दरवाज़े में झांका। युवती को जीवित और सांप को मरा देखकर वज़ीर को आश्चर्य हुआ, किन्तु एक क्षण में वह समझ गया कि उसके ख़ान की नज़रों में चढ़ने का अवसर आ गया है। लड़की के सामने आये बिना ही वह वहाँ से निकलकर फ़ौरन ख़ान के सामने अप्रत्याशित शुभ समाचार देने हाज़िर हो गया।

"मैंने ख़ुद अपने हाथों से सांप को मारकर ख़ानशाइम को बचा लिया है!" वज़ीर बोला। "अपना वादा पूरा करके, ख़ान, ख़ानशाइम की शादी मुझसे कीजिये!"

"ऐसा ही हो!" ख़ान ने उत्तर दिया।

उसने सफ़ेद झण्डे फहराने और घरों को सफ़ेद चादरों से सजाने की आज्ञा दे दी, जिससे सारी प्रजा को मालूम हो जाये कि सात सिरवाला सांप मारा गया और ख़ान की पुत्री के प्राण बच गये। इसके बाद ख़ान ने अपनी बेटी की निकाह की रस्म अदा करने के लिए सारे मुल्लाओं को मसजिद में बुलवाया।

हसन ने भी वज़ीर को सांप पर अपनी विजय के बारे में डींग मारते हुए सुन लिया। उसने वज़ीर की ओर उंगली उठाकर कहा:

"यह झूठा और कायर है! यह अपनी बात की सच्चाई किस तरह साबित कर सकता है? सांप को मैंने मारा है, न कि इसने!"

सारे लोग मुड़कर हसन की ओर देखने लगे।

"तुम इसे कैसे साबित कर सकते हो?" वज़ीर ने घमंड भरी आवाज़ में पूछा।

"मेरे पास इसका सबूत है," हसन ने कहा और अपनी जेब से अंगूठी निकालकर एकत्र लोगों को दिखा दी।

"उसने ख़ानशाइम की यह अंगूठी चुरा ली है!" वज़ीर गुर्राया।

"अगर सांप को तुमने मारा है," हसन ने कहा, "तो इसका मतलब है, तुम उसकी लोथ उठाकर खिड़की से बाहर फेंक सकते हो।"

वज़ीर ने मरे सांप को उठाने की कितनी ही कोशिश क्यों न की, पर वह उसे टस से मस भी न कर सका। जबकि हसन ने उसे बड़ी आसानी से उठाकर खिड़की से बाहर नदी में फेंक दिया, तभी हसन को देखकर ख़ानशाइम ने, जिसे ख़ान ने बुलवा लिया था, कहा:

"मुझे इस बांके नौजवान ने बचाया है और अंगूठी ख़ुद मैंने इसे दी है।"

ख़ान ने वज़ीर को महल से निकाल दिया और हसन से अपनी पुत्री का विवाह करके उसे अपना मुसाहिब बना लिया।

हसन कुछ ही दिनों में ख़ान के महल और उसके भव्य कक्षों में रहते-रहते ऊब गया और शिकार पर अकसर अकेला जाने लगा। एक बार वह तपती दोपहर में नदी के किनारे-किनारे घोड़े पर जा रहा था। उसके साथ-साथ एक शिकारी कुत्ता भाग रहा था। हसन ने बेद के वृक्ष की एक टहनी तोड़, उससे घोड़े को हांकने लगा। अचानक तेज़ हवा चलने लगी। ठण्ड पड़ने लगी और तीव्र हिमपात होने लगा। हसन तेज़ हवा और बर्फ़ से बचने और बदन गरम करने के लिए स्थान खोजने लगा और उसे एक अकेला स्प्रूस का ऊँचा वृक्ष दिखाई दे गया। हल्की बर्फ़ से ढका वह विशाल तम्बू-घर-सा लग रहा था। हसन ने घोड़े व कुत्ते को उसके नीचे खड़ा कर दिया और ख़ुद टहनियां तोड़, अलाव जलाकर तापने लगा। तभी उसे पेड़ पर घनी शाखाओं के बीच एक बुढ़िया बैठी दिखाई दी – वह बैठी-बैठी फूट-फूटकर रो रही थी, लगा जैसे बर्फ़ का तूफ़ान चीख रहा हो।

"तुम क्यों रो रही हो?" हसन ने पूछा। "क्या ठिठुर गयी हो? नीचे उतर आओ और आग के पास बैठकर ताप लो।"

"मैं उतर तो जाती, बेटा," बुढ़िया बोली, "पर कुत्ते से डरती हूँ। तुम अपना चाबुक मुझे दे दो!"

हसन ने अपना चाबुक, जिसकी चमत्कारी शक्ति का उसे ज्ञान न था, उसकी ओर बढ़ा दिया। बुढ़िया ने छड़ी घोड़े, कुत्ते और हसन के ऊपर फेर दी – और वे तीनों तीन पत्थर बनकर उसी स्प्रूस के नीचे पड़े रह गये।

भाई की तलाश में

आइये अब हुसैन का क़िस्सा सुनें। भाई से बिछुड़ने के कुछ समय बाद वह ख़ान बन गया और एक बड़े शहर में रहने लगा। जिस दिन हसन जीवित न रहा, हुसैन का हृदय उदास हो उठा और उसने अपने भाई को तलाश करने का निर्णय किया। हुसैन घोड़े पर काठी कसके यात्रा पर रवाना हो गया और अन्ततः उस स्थान पर पहुँच गया, जहाँ उनके रास्ते अलग होते थे। छुरा अपने स्थान पर गड़ा हुआ था, उसका हुसैन के मार्ग की दिशा की ओर का आधा भाग सही-सलामत था, जब कि दूसरा भाग – जला हुआ था। हुसैन समझ गया कि हसन मर चुका है। वह रो पड़ा और उसने निश्चय किया: "जिन्दा हुसैन को न सही, तो मैं मरे को तलाश करने जाऊँगा!"

हुसैन उस शहर में पहुँच गया, जिसमें हसन रहता था। वहाँ उसका हार्दिक स्वागत किया गया और उसे महल में ले जाया गया। वहाँ हुसैन की मुलाक़ात एक युवा स्त्री से हुई और उसे पता चला कि वह उसके लापता भाई की पत्नी थी।

हसन की मृत्यु के पश्चात् ख़ान के महल में लौटे वज़ीर द्वारा आयोजित अत्यधिक हार्दिक स्वागत-समारोह से हुसैन को सन्देह हुआ। "ज़रूर दाल में कुछ काला है," उसने सोचा। "कहीं मेरा अभागा भाई इसी वज़ीर का तो शिकार नहीं बना?" हुसैन सारी रात इसी बारे में सोचता रहा। सुबह, ख़ानशाइम से यह मालूम होते ही कि उसका भाई शिकार में लापता हो गया था, वह उसे ढूंढ़ने निकल पड़ा।

हसन की तरह हुसैन भी हिमझंझावत में फंस गया। जो स्प्रूस भाई का शरण-स्थल तथा क़ब्र बना, उसी के तले हुसैन ने भी शरण ली। अलाव जलाते हुए उसे टहनियों के बीच एक बुढ़िया दिखाई दी और उसने भी उस पर भाई की तरह ही दया की।

"दादी, पेड़ से उतरकर ताप लो," उसने कहा।

"मैं उतर तो जाती," बुढ़िया बोली, "पर कुत्ते से डरती हूँ। ठहरो, मैं इसे छड़ी से डराती हूँ।"



हुसैन ने बुढ़िया को देखा और अचानक उसका माथा ठनका। हुसैन ने बुढ़िया को जादूई छड़ी उठाने नहीं दिया, वह पत्थर से, जिस पर बैठा था, उतरा और बन्दूक उठाकर बोला

"चलो, नीचे उतरो, वरना गोली मार दूँगा।"

बुढ़िया डर के मारे थर-थर कांपती नीचे उतर आयी।

"लगता है, तुम यह जानते हो कि मेरा भाई कहाँ है। बताओ, वरना मैं तुम्हें मार डालूँगा।"

"जिस पत्थर पर तुम बैठे थे, वही तुम्हारा भाई है," बुढ़िया ने उत्तर दिया। "वज़ीर ने मुझे उसे यहाँ लुभाकर लाने और मार डालने का हुक्म दिया था। मुझ पर दया करो, मैं तुम्हें तुम्हारा भाई लौटा दूंगी। तुम स्प्रूस की टहनियों में छिपायी छड़ी निकालकर उसे इन पर फेरो।"

हुसैन ने वैसा ही किया – और पलक झपकते उस पत्थर का स्थान, जिस पर वह बैठा था, उसके भाई ने ले लिया। यह वर्णन करना कठिन है कि लम्बे बिछोह के बाद मिलने पर भाई कितने खुश हुए।

माता-पिता से पुनर्मिलन

हुसैन हसन के यहाँ काफ़ी दिनों तक रहा और एक दिन वह बोला:

"अब, हसन, तुम्हें वह बात याद दिला दूँ, जो तुमने मुझसे बूढ़े शिकारी के घर में कही थी: 'कुत्ता वह जगह ढूंढ़ता है, जहाँ उसे भरपेट खाने को मिलता है, जब कि इनसान – जहां उसका जन्म हुआ था'। तुम्हारा क्या विचार है, हमें अपने मां-बाप को ढूंढ़ने निकलने का समय तो नहीं आ गया है?"

"हालांकि तुमने वह कहावत ठीक से नहीं दोहराई, फिर भी मैं तुमसे सहमत हूँ। अगर हम अपने माता-पिता को जीवित देखना चाहते हैं, तो हमें उनकी तलाश अब टालनी नहीं चाहिए।"

उन्होंने जैसी ठानी, वैसा ही किया। हसन व हुसैन पहले व्यापारी काफ़िले के साथ यात्रा पर निकल पड़े और त्योहार के दिन अपने शहर के हाट-बाज़ार में पहुँच गये। वहाँ उन्हें उनका चाचा – धनी व्यापारी मिला। वह माल लेकर आये बड़े कारवां से मिलने के लिए दुकानों के सामने से गुज़र रहा था। चाचा ने भतीजों को नहीं पहचाना, पर जब उन्होंने अपने नाम बताये, वह तुरन्त उनकी चापलूसी, खुशामद करने लगा और उन हाथ चूमने तक को तैयार हो गया।

"पर हमारे मां और बाप कहाँ हैं?" हसन और हुसैन ने एक साथ पूछा।

"यहीं, इसी शहर में हैं। लेकिन तुम्हें बुड्ढे-बुढ़िया की क्या जरूरत पड़ी है, जिन्हें दिखना काफी दिन हुए बंद हो चुका है? तुम लोग तो काफ़ी धनी हो," चाचा ने कहा।

हसन और हुसैन लोगों से अपने माता-पिता के बारे में पूछताछ करने लगे। उन्हें एक पुरानी, जीर्ण-शीर्ण झोंपड़ी की ओर इशारा किया गया। उसमें खिड़कियां नहीं थीं, अंधेरे के कारण यह देख पाना मुश्किल था कि उसमें कौन है। हसन और हुसैन ने आग जलायी और अपने सामने फटे-पुराने चिथड़े पहने अपने अंधे माता-पिता को पाया।

"मां! अब्बा! आपको क्या हो गया?" हसन और हुसैन चिल्ला उठे।

मां अपने बेटों की आवाजें सुनकर रो पड़ी। पिता घबराते और खुश होते हाथ हिलाकर बोले:

"क्या सचमुच दुनिया में कोई ऐसा बचा है, जो मुझे खोज रहा है? क्या सचमुच मेरे बेटे, जो कभी के मर चुके हैं, मुझसे मिलने आये हैं?"

हसन और हुसैन ने उन्हें सब ब्योरेवार बताया कि वे कहाँ-कहाँ रहे, उन्होंने क्या-क्या देखा और अन्त में माता-पिता के पास कैसे पहुँचे।

"आप तब हमें जंगल में क्यों छोड़ गये थे? क्या सचमुच आप ने सोने के लालच में ऐसा किया था?" हसन ने पिता से पूछा।

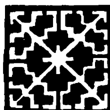
"आप तब हमें लेने क्यों नहीं आये थे? अगर आप आये होते हमारे पास और भी ज़्यादा सोना हो गया होता!" हुसैन ने भी पिता को उलाहना दिया।

"तुम मुझसे रूठो नहीं, मेरे बच्चो," वृद्ध रो पड़ा। "तुम्हारे चाचा ने मुझसे कहा था कि अल्लाह की मर्ज़ी है कि मैं सोना उसे दे दूँ, तुम्हें मार दूँ, क्योंकि तुम पर जिन चढ़ आया है। तुमसे बिछुड़कर हमने बहुत मुसीबतें झेलीं, और तुम देख ही रहे हो कि हम कैसे जी रहे हैं। तुम्हारे धनी चाचा ने हमारी बिलकुल मदद नहीं की। लेकिन हमारे लिए सबसे बुरी सज़ा तो यह है कि हम तुम्हें देख नहीं सकते!"

बूढ़ा मौन हो गया।

हसन और हुसैन फ़ौरन झोंपड़ी से निकल पड़े। उन्होंने हाट में पहुँचकर अपने चाचा को ढूंढ़ निकाला और उसे गहरे कुएं में फेंक दिया।

हसन और हुसैन हाट से घर लौटकर आये, तो उन्होंने देखा: उनके माता-पिता दरवाज़े के बाहर खड़े उनका स्वागत कर रहे हैं, उन्हें निहार-निहारकर किसी तरह अघा नहीं रहे हैं। भाइयों को बहुत आश्चर्य हुआ, पर बाद में वे समझ गये – यह चमत्कार जादूई छड़ी ने किया था।



आलस, निद्रा और जंभाई – ये तीनों हैं काल के भाई

(जाम्बूली लोक-कथा)

जिसका पेट भरा हो, जिसे पेट भरने के लिए हाथ-पैर न हिलाने पड़ें, वही आलसी हो जाता है।

मेरा खेत इतना-सा है कि सारा का सारा हथेली पर आ सकता है। अगर खेती का काम मेरे बेटों में बांटा जाये, तो उनमें से हरेक के ज़िम्मे बहुत ही मामूली-सा काम आयेगा। लेकिन मैं जब भी बेटों से कहता हूँ: "तुम्हें ये काम आज ही करने हैं," वे जवाब देते हैं: "अभी तो सारा दिन पड़ा है," या "यह तो कल कर लेंगे।" मेरे बेटों के ऐसे जवाब मुझे लोक-कथा के आलसी की याद दिला देते हैं।

एक इसी तरह का आदमी था। उसके पिता के पास बेहिसाब सम्पत्ति थी और वह स्वयं भी सारे गांव का स्वामी था और उसे किसी प्रकार का अभाव नहीं था। उसके लिए हर चीज़ तैयार रहती थी। अगर वह सवारी करना चाहता – घोड़ा तैयार रहता; खाना या पीना चाहता – बेसबरमाक़ और क़िमिज़ उसके सामने परोस दिये जाते। उसने सारे जीवन अपने हाथों से तिनका भी नहीं तोड़ा। अगर वह बायीं बांह पर लेटा होता, उसे करवट बदलते आलस आता। ऐसा था लोक-कथा का वह आलसी।

उसका गांव एक पहाड़ी की तलहटी में था। गांव के चारों ओर के सरकण्डे कभी काटे नहीं जाते थे।

एक बार गांव के वासी स्तेपी में आग की लपटें उठती देखकर चौंक उठे। आग बड़ी तेजी से तलहटी की तरफ़ बढ़ती आ रही थी।

गांववाले अपने घर छोड़कर सिर पर पैर रखकर ताक़ीर* में भागने लगे। किन्तु बाय का बेटा, गांव का स्वामी अपने सफ़ेद तम्बू-घर में लेटा रहा, अपनी जगह से हिला भी नहीं – उसे उठने में आलस आ रहा था।

---

* ताक़ीर – खारी ज़मीनवाली घाटी, जिस पर पेड़-पौधे नहीं उगते। सं०

"उठो, मिरज़ा, सारे लोग दूसरी जगह जा रहे हैं। तलहटी में आग फैलती जा रही है," लोगों ने उससे कहा।

"तो क्या हुआ, जाने दो," उसने उत्तर दिया।

"मिरज़ा, तुम पड़ाव में अकेले रह जाओगे!" उसे लोगों ने चेतावनी दी।

"तो क्या हुआ, अकेला ही सही!" उसने जवाब दिया और वैसे ही लेटा रहा।

किसी ने उसे फिर एक बार आग की याद दिलायी:

"जाड़े का पड़ाव जल रहा है, यहाँ से चले जाना चाहिए।"

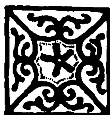
"तो क्या हुआ, जलने दो!"

ताक़ीर में पहुँचकर गांववाले अपने मालिक की हरकत पर हैरान रह गये और उन्होंने यही सोच लिया कि वह सारे आलसियों का बाप ही नहीं पड़बाबा है।

"शायद जब आग उसके बिस्तर तक पहुँचेगी, तो वह डर के मारे कुछ फुरती दिखायेगा। इसे छोड़ चलते हैं," बांके नौजवानों ने कहा।

जाड़े के पड़ाव, घोड़ागाड़ियां, पशुओं के बाड़े धधकते रहे, पर आलसी अपने तम्बू-घर में लेटा ही रहा।

जब आग बुझी, कुछ बांके नौजवान अपने भूतपूर्व पड़ाव पर गये। उन्हें सफ़ेद नमदे के अधजले टुकड़ों व राख के ढेर में अपना मालिक भी पड़ा मिला।



तेपेन कोक

बहुत दिन पहले एक गांव में एक कंजूस बाय रहता था। उसके तीन व्यस्क बेटे थे। किन्तु तीनों बेटों में से कोई भी शादीशुदा नहीं था।

"बेटों की शादियां करने से मैं बिलकुल दिवालिया हो जाऊँगा," बाय सोचा करता था। "हर दुलहन के लिए मुझे महर की मोटी रक़म देनी पड़ेगी, मैं ऐसा नहीं कर सकता। हर आदमी, जिसे अपना घरबार प्यारा है, यही करता," बाय अपने गांववालों के सामने यही सफ़ाई पेश किया करता था।

एक बार भाई मिलकर बैठे और अपनी ज़िन्दगी और दुर्भाग्य के बारे में बातचीत करने लगे। बड़े और मझले भाइयों ने छोटे भाई से कहा :

"हम सब की क़िस्मत एक-सी है। दूसरे बायों के बेटों की काफ़ी पहले शादियां हो चुकी हैं। उनके अपने परिवार, अपनी खेतीबारी है, जब कि हम अभी तक कुंवारे घूम रहे हैं। चुप्पी साधे रहने से अब्बा की कंजूसी नहीं छूटेगी। तुम्हें छोटे को वह ज़्यादा प्यार करते हैं, तुम्हारी बात ज़रूर सुनेंगे, तुम उनके पास जाकर उन्हें हमारी मंशा बताओ।"

छोटे भाई ने ऐसा ही किया। पिता ने थोड़ी देर सोचकर जवाब दिया :

"पतझड़ आने दो, घोड़ों के झुण्डों में नन्हे बछेड़े कुछ बड़े हो जायें, अपनी मांओं का दूध पीना छोड़ दें, तब मैं तुम्हारी इच्छा पूरी कर दूँगा।"

पतझड़ आ गयी। नन्हे बछेड़े बड़े हो गये और उन्होंने मांओं का दूध पीना छोड़ दिया। छोटा भाई फिर पिता से विनती करने गया, पर उसने उत्तर दिया :

"जब गरम मौसम आ जायेगा, मैं तुम्हारी शादियां कर दूँगा।"

किन्तु जाड़ा बहुत कड़ाके का पड़ा। ठण्डी हवाएं अनवरत बहती रहती थीं, बर्फ़ के तूफ़ानों की चीखें गूंजती रहती थीं। कड़ी ठण्ड और चारे के अभाव के कारण पशु तेज़ी से सूखने लगे। और सर्दी का स्थान गर्मी ले भी न पायी थी कि बाय के सारे जानवर मर गये।

भाई केवल एक बछेड़े को भूखों मरने से बचा सके। वे खुद अधपेट खाकर पिता से रोटी के टुकड़े छिपा-छिपाकर अपने चहेते को ले जाकर खिलाते रहे।

कंजूस बाय भी अपनी सारी सम्पत्ति गंवाकर भूख से मर गया। बेटे ग़रीब हो गये। पिता की सम्पत्ति उनके लिए एक साल भी न चल पायी। भाई काफ़ी दिनों तक गांव-गांव भटकते भीख मांगते रहे। उन्होंने बहुत कष्ट भोगे, बहुत ख़तरे उठाये।

इस बीच बछेड़ा बड़ा होता रहा। वह बिलकुल सफ़ेदझक था। उसकी खाल धूप में चांदी की तरह झिलमिलाती थी, अयाल मुलायम और झबरी थी।

एक बार छोटे भाई ने दोनों बड़े भाइयों से कहा:

"यह बछेड़ा मुझे दे दीजिये। मैं गांव-गांव में जाकर रोटी और पैसा इकट्ठा करूँगा और जमा हुई सारी चीज़ें आपके साथ बांट लिया करूँगा।"

वे मान गये। छोटे भाई ने सारे जाड़े और गरमियों में उन्हें खिलाया-पिलाया।

एक बार पड़ोस के एक गांव में बड़ी घुड़दौड़ की तैयारियां होने लगीं। घुड़दौड़ में भाग लेने के लिए स्तेपी के पचास श्रेष्ठ क़दमबाज़ घोड़े जमा हुए।

संयोगवश छोटा भाई अपने सफ़ेद बछेड़े पर सवार हुआ उस गांव के पास से गुज़र रहा था। उसने स्तेपी में लोगों की भीड़ देखी और समझ गया। घुड़दौड़ होने जा रही है। "क्यों न हम भी घुड़दौड़ में भाग लें?" उसने सोचा। उसने एक शिकारी कुत्ते के साथ-साथ अपने बछेड़े को दौड़ाकर उसकी गति का अनुमान लगाने का निश्चय किया।

उसने लगाम हिलायी, घोड़ा चाल बदलकर दुलकी चलने लगा। कुत्ता उसके पीछे-पीछे भागता रहा।

आरम्भ में बांके नौजवान को कुत्ता साथ-साथ भागता नज़र आया, पर बाद में वह पीछे छूट गया। बछेड़े की झबरी अयाल पर झुककर बांका घुड़सवार बीच-बीच में मुड़कर पीछे देखता रहा, ख़ुशी के मारे उसका दिल उछला पड़ रहा था: घोड़ा इतनी सहजता से सरपट भाग रहा था मानो स्तेपी पर तैर रहा हो। कुत्ता पीछे छूट गया था।

घर लौटकर छोटे भाई ने सारी बात भाइयों को बतायी:

"हमारा बछेड़ा कमान से छूटे तीर की तरह उड़ता-सा भागता है। स्तेपी में मैंने उसे एक कुत्ते के पीछे दौड़ाया। बछेड़ा बहुत जल्दी उससे आगे निकल गया। मेरे ख़याल से बछेड़ा दौड़ में किसी भी प्रकार के क़दमबाज़ों और दुलकी चालवाले घोड़ों से मुक़ाबला कर सकता है।"

यह कहकर उसने भाइयों को बछेड़े को घुड़दौड़ में ले जाने का सुझाव दिया। वे इसके लिए तैयार हो गये। बछेड़ा रात भर सुस्ता लिया और सुबह तीनों भाई एक साथ घुड़दौड़ के स्थान के लिए रवाना हो गये।

घुड़दौड़ में दो घोड़े सर्वोत्तम थे – ये ख़ान बरक़ के घोड़े थे। कोई भी घुड़दौड़ उनके बिना नहीं होती थी, किसी भी घोड़े ने अपने मालिक की शान इतनी नहीं बढ़ायी जितनी

कि उन्होंने। भाइयों को इसका ज्ञान था, फिर भी उन्होंने अपनी क़िस्मत आज़माने का फ़ैसला कर लिया।

भाइयों को घुड़दौड़-स्थल पर पहुँचने पर यह देखकर बहुत दुःख हुआ कि उनके घोड़े का एक पैर थोड़ा लंगड़ा रहा है।

वे बहुत दुःखी हुए, किन्तु अपना निर्णय बदलने की इच्छा उन्हें नहीं हुई।

घुड़दौड़ आरम्भ हो गयी।

उसमें भाग लेनेवाले प्रत्येक आदमी ने घोड़े पर अपने बेटे को बिठाया, किन्तु भाई विवाहित नहीं थे, उनके बेटे नहीं थे, इसलिए उन्होंने अपने बछेड़े पर एक ग़रीब लड़के को बिठा दिया, जिसे गांव में ताज़शा बाला * के नाम से चिढ़ाया जाता था।

बायों के बेटे श्रेष्ठ क़दमबाज़ों तथा दुलकी चालवाले घोड़ों पर सवार होकर कारा-कोय की तलहटी की ओर चल दिये। घुड़दौड़ वहीं से शुरू होती थी।

उनके साथ ताज़शा बाला भी गया।

बायों के बेटे सारे रास्ते ग़रीब लड़के का मज़ाक़ उड़ाते रहे, उसे घोड़े से नीचे धकेलते रहे, उसके हाथों पर नोचते रहे और सिर से टोपी गिराते रहे। लड़के की आंखों में आंसू आ गये, मगर वह एक निश्चित समय तक सहता रहा।

जब सब कारा-कोय की तलहटी में पहुँचे, सारे घुड़सवार एक क़तार में खड़े हो गये, जब कि ताज़शा बाला को सबके पीछे खड़ा कर दिया गया।

घुड़दौड़ आरम्भ हुई। शुरू में ताज़शा बाला पिछड़ने लगा, पर शीघ्र ही उसका बछेड़ा तूफ़ान से भी तेज़ भागने लगा।

ताज़शा बाला ने पहले घुड़सवार से आगे निकलकर उसकी टोपी सिर से उतारकर अपने चोगे में छिपा ली। उसने सबके साथ ऐसा ही किया, जब तक कि सबको पीछे न छोड़ दिया। ख़ान बरक़ के घोड़े भी पीछे छूट गये।

दौड़ का अन्त समीप आता जा रहा था। लोग सबसे आगे सफ़ेद बछेड़े पर ताज़शा बाला को सरपट आते देख आश्चर्यचकित रह गये।

गांव के निकट पहुँचते समय घुड़सवारों को अपने-अपने पिता का नाम चिल्लाकर लेना था। लेकिन ग़रीब लड़के की समझ में नहीं आ रहा था कि उसे क्या करना चाहिए। "दौड़ ख़तम होने ही वाली है," वह सोचने लगा। "मुझे घोड़े के मालिकों का नाम लेना चाहिए या अपने अब्बा का?"

ऐसा सोचकर उसने हंसते, खुश होते पुकारा:

"तेपेन कोक!** तेपेन कोक!"

---

* ताज़शा बाला – यहाँ नटखट लड़का।

** तेपेन कोक – तेज़ सफ़ेद घोड़ा।

ख़ान बरक़ बहुत चिन्तित होकर घुड़दौड़ पर नज़र रखे हुआ था, उसे अपने घोड़ो की सबसे आगे रहने की आशा थी। लेकिन सफ़ेद बछेड़े को सरपट सबसे आगे दौड़ते देख उसके आश्चर्य का कोई ठिकाना न रहा।

"मेरी आखों को धोका तो नहीं हो रहा है?" उसने लोगों से पूछा। "क्या सचमुच खरसैला सफ़ेद बछेड़ा सबसे आगे है?"

"सच है! सच है! यह सबसे तेज़ घोड़ा आगे चल रहा है!" लोगों ने उत्तर दिया।

तब गुस्से से पागल हो उठे ख़ान बरक़ ने कहा:

"यह कमीना छोकरा रास्ते में शामिल हुआ है, हमने घुड़दौड़ में बछेड़े को नहीं उतारा था! फ़ौरन निकालो इसे!"

ख़ान के नौकर उसका हुक्म बजाने और बछेड़े को पकड़ने भागे। पर वह कहाँ उनके हाथ आनेवाला था! अब देर हो चुकी थी।

ग़रीब लड़के का स्वागत करने का साहस किसी को नहीं हुआ। केवल एक आज्ञात लड़की ने तेज़ सफ़ेद घोड़े की लगाम पकड़कर लड़के को घोड़े से नीचे कूदने में मदद की।

क्रुद्ध ख़ान बरक़ चिल्लाने लगा:

"इस घोड़े को जीता नहीं माना जायेगा, यह रास्ते में शामिल हुआ है!"

तब लड़का सफ़ेद टीले पर चढ़ गया और लोगों को सम्बोधित करता हुआ बोला:

"मैंने शुरू से ही घुड़दौड़ में भाग लिया है।"

लड़के ने चोग़े के पल्ले खोल दिये और सारे घुड़सवारों की टोपियां निकालकर ज़मीन पर पटक दीं:

"ये रही घुड़सवारों की टोपियां! पहचानते हैं? अगर मैंने घुड़दौड़ में भाग नहीं लिया, तो ये मेरे पास कहां से आयीं? जहाँ से मेरा तेज़ घोड़ा गुज़रा, वहाँ से मैं कुछ न कुछ उठाकर लाया हूँ!"

लोगों ने हर्ष-नाद के साथ विजेता का अभिनन्दन किया।

लज्जित ख़ान बरक़ मुड़ा और अपने कभी के नामी घोड़ों के ग़ुस्से में घूंसे मारकर वहाँ से चला गया।

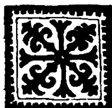
भाइयों को इनाम में चालीस क़दमबाज़ घोड़े मिले। उन्होंने दस क़दमबाज़ बछेड़े पर सवारी करके स्तेपी की बड़ी घुड़दौड़ में विजयी होनेवाले ग़रीब लड़के को दे दिये।

तीनों भाई इस घुड़दौड़ के बाद सुखी जीवन व्यतीत करने लगे और शीघ्र ही उनका विवाह भी हो गया।

बछेड़े को अपने इलाक़े के लोगों में बहुत ख्याति मिली और आज भी पीढ़ी दर पीढ़ी "तेपेन कोक" लोक-कथा सुनाकर उसका यशोगान किया जाता है।

बेदादी विनोदी अलदार-कोसे के कारनामे





अलदार-कोसे का स्वावलम्बी जीवन कैसे आरम्भ हुआ

कहते हैं, एक समय था जब दुनिया भूरे बछड़े के दायें सींग पर टिकी हुई थी, आकाश ऊंट की झूल से ज्यादा बड़ा न था, धरती घोड़े के सुम जितनी थी, भेड़िये घास खाते थे, भरद्वाज भेड़ों की पीठ पर घोंसला बनाते थे, जब घास की एक पत्ती तले घोड़ों के हज़ारों झुण्ड शरण ले सकते थे, पशु-पक्षियों की दुमें केवल निकलना शुरू ही हुई थीं, जब लोमड़ी न्यायप्रिय मानी जाती थी, सब विवादों की क़ाज़ी होती थी ...

न जाने उस ज़माने में या किसी और में स्तेपी में क़ोभिर नाम का एक सफ़ेद दाढ़ी-वाला बुज़ुर्ग अपने जीवन के अन्तिम दिन काट रहा था। उसके तीन बेटे थे। एक बार क़ोभिर ने अपने बेटों से कहा:

"मेरे बच्चो, मैं बिलकुल कमज़ोर हो गया हूँ, मेरा आख़िरी पड़ाव छोड़कर जाने की घड़ी आ गयी है। मेरा अंतःकरण चश्मे के जल जैसा निर्मल है, – मौत से मैं नहीं डरता। लेकिन मरने से पहले इतना जानना चाहता हूँ, मेरे बेटो, कि तुम मेरे न रहने पर कैसे जीने का इरादा रखते हो और अपने लिए कैसा रास्ता चुनोगे। सोचकर जवाब दो। बस इतना याद रखो कि भला आदमी हमेशा अपने पीछे अच्छा रास्ता छोड़कर जाता है।"

बड़ा बेटा बोला:

"मुझे बचपन से ही ज़मीन से प्यार रहा है। खेत जोतने और अनाज उगाने से, जिससे लोगों को हमेशा भरपेट खाने को मिलता रहे, बेहतर काम कोई नहीं है।"

पिता ने उसको आशीर्वाद दिया:

"तुम किसान बनो, बेटा!"

मंझला बेटा बोला:

"मुझे तो चरवाहे का जीवन पसन्द है। मुझे घोड़ों, ऊँटों, भेड़ों, गायों और बकरियों से प्यार है। मुझे सबसे अधिक आनन्द पशुओं की देखभाल से मिलता है, जिससे कि लोगों को हमेशा मांस, दूध, किमिज़, कपड़े और तम्बू-घरों के लिए नमदा मिलते रहते हैं।"

क़ोभ्फ़िर ने मंझले बेटे को भी आशीर्वाद दिया :

"तुम चरवाहे बनो, बेटा !"

छोटा बेटा बोला :

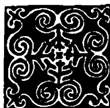
"मुझे तो गाने, हंसने और दूसरों को हंसाने का शौक़ है ! बिना गीतों, चुटकुलों और चुभते मज़ाक़ों के जीवन भी कोई जीवन होता है ! मैं सारी दुनिया की सैर करूँगा, वहां जाऊँगा, जहाँ कोई न गया होगा, गांवों और चरागाहों की धूल छानूंगा, रास्तों पर घूमूंगा और कारवां-सरायों में जाऊँगा, बाज़ारों और मेलों का चक्कर लगाऊँगा, टूटी-फूटी झोंपड़ियों में और शाही महलों में रहकर देखूँगा। मैं धोखेबाज़ों को धोखा दूँगा, और धोखा खानेवालों का साथ दूँगा, अत्याचारियों को दुःख पहुँचाऊँगा, अभागों का दिल बहलाऊँगा, कामचोरों को बेवक़ूफ़ बनाऊँगा और मेहनतकशों का उत्साह बढ़ाऊँगा, बेधड़क बातों से घमण्डियों का घमण्ड चूर करूँगा और कमज़ोरों को सहारा देकर उठाऊँगा। सैकड़ों लोग मुझसे घृणा करेंगे, पर हज़ारों मेरे दोस्त बन जायेंगे। और लोग मेरा नाम – अलदार-कोसे * – शायद कभी न भूल पायें।

वृद्ध ने बेटे की बात सुनी और मुस्करा पड़ी :

"तुमने बहुत अच्छी बात कही, बेटा। प्रकृति ने तुम्हें हालांकि दाढ़ी नहीं दी है, पर तुम्हें तीक्षण बुद्धि, विशाल हृदय, विनोदी स्वभाव और हाज़िरजवाबी दी है। वही करो, जो तुमने सोची है ! तुम्हारा नाम लेते ही दुष्ट भयभीत हो उठें, खीज उठें, सज्जन शान्त और हर्षित हो उठें, तुम्हारा नाम हर किसी की ज़बान पर रहे, पीढ़ी दर पीढ़ी, हर सदी में, हर कहानी में लिया जाता रहे। पिता के नाते मैं तुम्हें आशीर्वाद देता हूँ ! सदा सुखी रहो, अल्दार-कोसे !"

---

* अलदार-कोसे – शब्दशः बेदाढ़ी ठग, बेदाढ़ी मसख़रा। कज़ाखों में स्नेह व सम्मान-पूर्वक उसे 'अलदाकेन' के नाम से जाना जाता है।



अलदार-कोसे ने जिन भगाया

अलदार-कोसे ने जूतों पर चर्बी मली, कमरबंद कसा, चोग़े के पल्ले उड़से और लम्बे सफ़र पर निकल पड़ा। वह कई दिन, कई रात, कई महीने, पूरे साल चलता रहा। अचानक एक गगनचुम्बी पहाड़ ने उसका रास्ता रोक लिया, लगा जैसे कोई दैत्याकार ऊंट सुनसान स्तेपी में बैठ गया हो।

अलदार-कोसे रुककर सोचने लगा, पर तुरन्त मन ही मन कह उठा:

"मनुष्य के लिए कुछ भी असम्भव नहीं है। सख़्त से सख़्त लोहा लोहार के घन से मोड़ा जा सकता है। दृढ़संकल्पी सूई से भी कुआँ खोद सकता है। नहीं, मैं रास्ता नहीं बदलूंगा, खड़ी चढ़ाई से पीछे नहीं हटूंगा..."

उसने रात वहीं गुज़ारी, सारा जाड़ा वहीं बिताया और वसन्त में काम में जुट गया: चट्टानें तोड़ीं, सीढ़ियां बनायीं, एक-एक क़दम करके ऊपर ही ऊपर चढ़ता गया।

वह चिरप्रतीक्षित घड़ी भी आ गयी – अलदार-कोसे ने पर्वत की चोटी पर क़दम रखा। उसे उज्ज्वल सूरज दिखाई दिया, वह ख़ुशी से चीख़ उठा और पत्थरों पर गिरकर घोड़े बेचकर सो गया। उसकी नीन्द खुली, तो देखा: बायग़ीज़ चिड़िया उसके सीने पर बैठी सिर घुमा रही है, पर साफ़ कर रही है। अलदार-कोसे ने चिड़िया को परों से पकड़ लिया।

"यह हुआ मेरा पहला शिकार!" वह हंसने लगा। "तू डर नहीं, बायगीज़, मैं तुझे कुछ नुक़सान नहीं पहुँचाऊंगा। पर तुझे मेरे साथ सैर पर चलना पड़ेगा..." उसके मस्तिष्क में सैकड़ों विचार, सैकड़ों योजनाएँ उपज रही थीं।

अलदार-कोसे नीचे घाटी में उतरने लगा और सम्मोहित-सा देखता रह गया: हरे-भरे ढलान, पुष्पित चरागाह, वादी में कलकल करता बहता निर्मल चश्मा! चश्मे के किनारे एक नया, सफ़ेद-झक तम्बू-घर लगा था, और उसके ऊपर धुएँ के पारदर्शी छल्ले उठ रहे थे।

"यह दोस्त का घर है या दुश्मन का? यहाँ लोग रहते हैं या भयानक देव? तम्बू-घर में जाऊँ या उसे घूमकर चलता बनूँ?" अलदार सोचने लगा।

उसने दबे पांव दरवाज़े के पास जाकर दरार में झांका, देखा: बेलबूटेदार नमदे पर दो जनें – एक मर्द और एक औरत बैठे क़िमिज़ पी रहे हैं, चर्बीदार भेड़ का गोश्त खा रहे हैं, फुसफुसाकर बातें कर रहे हैं और एक दूसरे को आंख मार रहे हैं।

"अरे, लगता है, यहाँ दावत उड़ाई जा रही है! और जहाँ दावत हो, वहीं मेहमान भी होते ही हैं। अन्दर जाता हूँ!"

"आ ऽऽ कछीं!" अलदार ने छींक दिया।

"अरे बाप रे!" स्त्री ने हाथ पर हाथ मला। "यह तो मेरा घिनौना पति आ पहुँचा है। जल्दी से छिप जाओ!"

बांका नौजवान, जो उसके साथ इश्क़ लड़ा रहा था, सारे तम्बू-घर में इधर-उधर भागा और चादर के नीचे सन्दूक देखकर पलक झपकते उसमें घुस गया और उसका ढक्कन बंद कर लिया।

"समझ गया," सोचकर अलदार ने सिर हिलाया और देहलीज़ लांघी।

"सलाम, खातून! मेहरबानी करके थके राही को अपने चूल्हे के आगे सुस्ता लेने दो।"

स्त्री ने वितृष्णा से उसकी ओर देखा।

"तुम्हें शैतान यहाँ लाया है, बिनबुलाये मेहमान! तुमने मुझे कितना डरा दिया!"

पर अलदार-कोसे तब तक सम्मानित स्थान पर आलथी-पालथी मारकर बैठ चुका था और उसके पूरा चेहरा खिल रहा था।

"मुस्करा क्यों रहे हो?" गृहणी ने खीजकर पूछा, पर मन-ही-मन कहा: "इस बदमाश के दिमाग़ में कोई चाल है..."

"मैं तो क़िमिज़ के इस बरतन और गोश्त की उस रक़ाबी को देखकर मुस्करा रहा हूँ।" अलदार-कोसे ने मधुर स्वर में कहा।

"तो खा-पी लो और जल्दी से दफ़ा हो जाओ!"

"खा-पी लो" दबी ज़बान से कहिये, तो भी अलदार सुन लेता था, लेकिन "दफ़ा हो जाओ" चाहे चीख-चीखकर कहिये, पर वह बहरा बना रहता था। अलदार सरककर दस्तरखान के पास आ गया और उस पर रखा सारा खाना साफ़ करने लगा। खूब छककर खा-पीकर वह वहीं बेलबूटेदार नमदे पर पसरकर लेट गया।

औरत ने जब देखा कि राही खिसकने का नाम भी नहीं ले रहा, तो उसने एक सिक्का निकाला और बोली:

"यह लो एक तंगा, आवारा! उठाओ और यहाँ से दफ़ा हो जाओ!"

अलदार-कोसे बख़्शिश के लिए पूरे एक घंटे या शायद उससे भी ज़्यादा देर तक धन्य-वाद देता रहा और फिर बोला:

"जाता हूँ, खातून, जाता हूँ... बस ज़रा अपनी पेशीनगो चिड़िया को रास्ते के लिए चुग्गा खिला दूँ," और उसने बायग़ीज़ को चूरा चुगने के लिए दस्तरख़ान पर छोड़ दिया।

बायग़ीज़ चुगती रही, समय बीतता रहा, गृहणी खीजती रही और अलदाकेन खीसें निपोड़ता रहा।

अचानक तम्बू-घर के बाहर एक घोड़ा हिनहिनाया। दरवाज़ा खुला। तम्बू-घर का मालिक – बाय अन्दर आया और दंग रहकर खड़ा रह गया।

"यह अजनबी कौन है, बीवी? यह कौन-सी चिड़िया है इसके पास?"

स्त्री मुँह खोलने भी न पायी कि अलदार-कोसे उससे पहले बोल उठा :

"मोहतरम बाय, मैं एक घुमक्कड़ बक्सी हूँ – जादूगर और पेशीनगो। और मेरी चिड़िया – पेशीनगो चिड़िया है। इसे सारे राज़ मालूम है, यह भूत भी बता सकती है और भविष्य भी। चाहो तो बताऊं कि तुम पर कौन-सी मुसीबत आनेवाली है?"

बाय ने घमण्ड से अपरिचित पर नज़र डाली और चूल्हे के आगे, जहाँ थोड़ी देर पहले अलदार-कोसे आराम से लेटा था, बैठ गया और बोला :

"अगर तुम सचमुच पेशीनगो होते, तो तुम्हें मालूम होता कि इस इलाक़े में मुझसे धनी कोई नहीं है। मेरे पास चार तरह के मवेशी हैं : * घोड़े, गायें, ऊँट और भेड़ें – अनगिनत हैं। जिसकी देग, उसकी तेग। मुझ पर कौन-सी मुसीबत आयेगी!"

"ओह, मेरे बाय," अलदार-कोसे उपदेशात्मक स्वर में बोला, "मुसीबत कभी कहकर थोड़े ही आती है..."

"तुम इशारा किस तरफ़ कर रहे हो?" बाय तकिये का सहारा लेकर बोला। "तुम्हें कुछ मालूम है?"

"मालूम है, पर सारा नहीं। पेशीनगो चिड़िया सब जानती है।"

"अगर चिड़िया जानती है, तो बताये। चलो बताओ!"

और भविष्य-वाणी का अनुष्ठान आरम्भ हो गया। अलदार-कोसे सिर पर चिड़िया बिठाये बगूले की तरह तम्बू-घर में चक्कर लगाने लगा, अजीब-से बोल बोलने लगा, चीज़ें उठा-उठाकर चारों ओर फेंकने लगा... चिड़िया चहचहाने लगी, अलदार चिल्लाने लगा :

"पेशीनगोई कर, जादूई चिड़िया, पेशीनगोई कर!"

बाय आंखें निकाले देखता आश्चर्यचकित रह गया : "ऐसा बक्सी मैंने कभी नहीं देखा। शायद इसकी पेशीनगोई से कुछ फ़ायदा ही हो जाये।"

---

* किसी व्यक्ति के पास चार तरह के मवेशी होना, उसकी समृद्धि का प्रतीक माना जाता था।

अलदार-कोसे उत्तरोत्तर तेज़ी से चक्कर काटने लगा, फिर आगे को गरदन निकाले रुक गया और डरावनी आवाज़ में फुसफुसाया :

"ओ बाय, हालत बहुत ख़राब है!"

बाय का चेहरा उतर गया।

"क्या हुआ?"

अलदार बोला :

"चिड़िया कहती है : 'पीले सन्दूक़ में मुसीबत रेशमी गद्दे पर लेटी है। इसका मतलब है कि जिन, बाय, तुम्हारे घर के अन्दर छिपा बैठा है। उसे भगाना चाहिए!"

बाय कांपने लगा, पर फिर भी सन्देहपूर्वक अलदार को बार-बार देखता रहा : "यह बक्सी कहीं ठग तो नहीं है? जिन की बात बताकर यह मुझे बेवक़ूफ़ तो नहीं बना रहा है? फिर भी देखता हूँ आगे क्या होता है।"

किन्तु प्रकट में बोला :

"निकाल भगाओ उसे, प्यारे, निकाल भगाओ!"

अलदार-कोसे जानता था कि उसे क्या करना होगा। उसने डोलची उठाकर चूल्हे पर चढ़े गरम पानी के देग में डुबोयी, दबे पांव सन्दूक के पास पहुँचा और ढक्कन थोड़ा-सा उठाकर दो बार उस में गरम पानी के छींटे मार दिये। तत्क्षण सन्दूक का ढक्कन क़ब्जों समेत उखड़कर दूर जा गिरा, और खौलते पानी से जला बांका नौजवान निकलकर एक छलांग में तम्बू-घर से बाहर भाग गया।

भौचक रह गये बाय की ऊपर की साँस ऊपर और नीचे की नीचे रह गयी। युवा पत्नी क़ालीन के नीचे दुबक गयी। और अलदाकेन का हंसी के मारे दम उखड़ा जा रहा था।

बाय को होश आया और वह लपककर अलदार को गले लगाने लगा :

"हज़ार बार शुक्रिया तुम्हारा, मेरे प्यारे! तुमने बला को घर से बाहर भगा दिया! तुम न होते, तो बुरा जिन मुझे मार डालता। तुम्हें मैं तुम्हारी मेहनत का इनाम दूँगा। मेरे झुण्ड में एक घोड़ा है, घोड़ा नहीं, उसे भालू कहना चाहिए। उसे ले लो!"

अलदार ख़ुशी से उछल पड़ा, पर बाय थोड़ी देर चुप रहकर आगे बोला :

"जिन मेरे घर में दुबारा न आ बसे, – सब हो सकता है, प्यारे दोस्त! – इसलिए तुम पेशीनगो चिड़िया मुझे बेच दो। बहुत अच्छी क़ीमत दूँगा।"

अलदार ने हाथ हिला दिये :

"तुम क्या कहते हो, बाय, इसके बारे में तो सोचो भी मत! बिना पेशीनगो चिड़िया के तो मेरी सारी ज़िन्दगी में घुप अंधेरी रात से भी ज़्यादा अंधेरा छा जायेगा!"

बाय पीछा नहीं छोड़ रहा था, और अलदार मान ही नहीं रहा था। बहस रात तक चलती रही, अन्त में अलदार तैयार हो गया :

"जैसी तुम्हारी मर्ज़ी – मैं चिड़िया तुम्हारे पास छोड़ रहा हूँ, बाय! मैं झूठ नहीं

बोलता: मैंने इसे चालीस घोड़े देकर ख़रीदा है। चिड़िया का मालिक अभी तक रोता है कि उसने इसे सस्ते में बेच दिया। लेकिन मुझे नफ़ा कमाने का लालच नहीं है। जितने में ख़रीदा, उतने में ही बेच रहा हूँ। चालीस घोड़े दो, – और पेशीनगो चिड़िया तुम्हारी हो जायेगी!"

बाय आंखें झपकाने लगा, मानो किसी ने उसकी आँख में उंगली घुसेड़ दी हो।

"आह! तुम क़ीमत बहुत ज़्यादा मांग रहे हो। घोड़ा आख़िर हिरन-मूसा तो होता नहीं।"

"तुम्हारी मर्ज़ी, मैं तुम्हें माल ख़रीदने को तो कह नहीं रहा हूँ। पेशीनगो चिड़िया कोई गौरैया तो होती नहीं!"

बाय ने देखा: इधर गिरूँ तो कुआं, उधर गिरूँ तो खाई।

"तीस घोड़े दूँगा," वह बोला।

"तीस कम हैं। चालीस!"

"तीस!"

"चालीस!"

दो चलते पुर्ज़े अगर बहस करने लगें, तो क्या सौदा जल्दी पट सकता है? बाय के तम्बू-घर में पूरे महीने नहीं, पूरे साल शोर मचता रहा। वे आते, चले जाते, सौदे-बाज़ी करते, मोल-तोल करते, हाथ पर हाथ मारते। आख़िर बाय से न रहा गया। उसने माथे से पसीना पोंछा और बोला:

"चलो, चालीस ले लो! पेशीनगो चिड़िया मेरी हुई!"

अलदाकेन ने न जाने ख़ुशी के मारे या दुःख से, सचमुच या दिखावे के लिए रो-रोकर सारा तम्बू-घर गुंजा दिया और चिड़िया को सीने से लगाकर उससे विदा लेने लगा:

"अलविदा, दोस्त, अलविदा, पेशीनगो चिड़िया! तेरे बिना मैं दुनिया में कैसे जिऊँगा? मुझ अकेले को अब चैन कहाँ मिलेगा?"

अलदार-कोसे पूरे हफ़्ते भर चिड़िया से विदा लेता रहा। वह आनन्द से रहता रहा, क़िमिज़ पीता रहा, क़ज़ी* खाता रहा, गुदगुदे बिस्तर पर सोता रहा, जब तक कि उसके दिल ने न कह दिया: "रुका पानी सड़ने लगता है। काफ़ी दिन बंधा खड़ा रहनेवाला तेज़ घोड़ा बछेड़े तक को दौड़ में नहीं पछाड़ सकता। दुनिया के रास्ते अनन्त हैं, जब कि आदमी की ज़िन्दगी चार दिन की है।"

तब उसने भालू जैसे घोड़े पर सवार होकर गाना छेड़ दिया और डण्डे से बाय के घोड़ों के सांड को हांक दिया।

शाम के समय उसकी नज़र एक नौजवान पर पड़ी।

---

* क़ज़ी – घोड़े के मांस से बना सॉसेज जो काफ़ी अर्से तक धुएं में संभलकर रखा जाता है।

"ऐ दोस्त," अलदार-कोसे ने उसे आवाज़ दी, "तुम पैदल क्यों जा रहे हो? तुम्हारा घोड़ा कहाँ गया?"

"घोड़ा था, पर नहीं रहा," नौजवान ने दुःखी स्वर में उत्तर दिया। "क़ाराक़ूर्त* ने उसे काट लिया। घोड़ा मर गया..."

"यह बात है!" अलदार बोला। "तो फिर मेरे झुण्ड में से कोई घोड़ा अपने लिए चुन लो। कोई भी ले सकते हो! तुम्हें एक तेज़ घोड़ा भेंट करता हूँ।"

अगले दिन अलदार-कोसे को फिर एक पथिक मिला, वह एक अधेड़ आदमी था।

"ऐ चचा, पैदल क्यों जा रहे हो? क्या घोड़ा नहीं है?"

"कल तक मेरे पास एक बढ़िया घोड़ा था, लेकिन आज... बायों के बेटों ने घोड़ा रास्ते में मुझसे छीन लिया। मैं बाल-बाल बच पाया हूँ..." आदमी ने उत्तर दिया।

"ग़रीबों को लूटनेवाले उन डाकुओं को कभी अपना बाप और रिश्तेदार देखना नसीब न हो!" अलदार ने गुस्से में सोचा और प्रकट में कहा। "पर तुम दिल छोटा मत करो! मेरे झुण्ड में से एक घोड़ा ले लो, और जहाँ तुम्हें जाना है, चले जाओ।"

तीसरे दिन अलदार-कोसे को एक बहुत बूढ़ा आदमी मिला। वृद्ध लाठी टेकता बड़ी मुश्किल से पैर घिसटता चल रहा था।

"बाबा," अलदार-कोसे ने कहा, "बुढ़ापे में स्तेपी पैदल पार करना आसान नहीं होता। क्या आपके पास घोड़ा नहीं है?"

"मैं सारी ज़िन्दगी, जब तक मेरी ताक़त जवाब न दे गयी, बाय के घोड़े चराता रहा। पर अपना घोड़ा कभी न ख़रीद सका। यही बात है, बेटा..."

"ठहरिये, बाबा," अलदार ने उसे रोका, "जल्दी मत करिये! मेरे झुण्ड में से एक घोड़ा ले लीजिये। जो भी पसन्द आये, वही आपका। मना मत करिये! इजाज़त दें, तो मैं आपको बिठा दूँ..."

ज्यों-ज्यों अलदार-कोसे आगे बढ़ता गया, त्यों-त्यों उसके ढोर के घोड़े कम होते गये। इकतालीसवें दिन उसके पास आख़िरी घोड़ा बचा, वही, जिस पर वह सवार था।

तभी अलदार ने देखा: स्तेपी में चिड़ियों को भयभीत करती एक युवती भागी जा रही है।

"क्या हुआ? तुम किस से बचकर भाग रही हो, सुन्दरी?"

"मौत से!" लड़की ने झर-झर आंसू बहाते हुए कहा। "मेरे अब्बा ने मुझे एक बूढ़े अमीर को बेच दिया... जब कि मैं एक दिलेर नौजवान चरवाहे को प्यार करती हूँ। और वह भी मुझे प्यार करता है... उसी के पास भागकर जा रही हूँ। पीछा करनेवालों से बच गयी – तो ग़रीबी में भी सुखी रहेंगे। पकड़ी गयी, तो दोनों जान से मारे जायेंगे!"

---

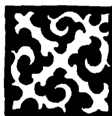
* क़ाराक़ूर्त – ज़हरीली मकड़ी।



अलदाकेन फ़ौरन घोड़े से कूदकर उतर गया।

"प्यारी बहन," वह स्नेहपूर्वक मुस्कराया, "जीवन के आरम्भ में उसके अन्त के बारे में सोचना पाप होता है। घोड़े पर सवार हो जाओ और सरपट अपने प्रियतम के पास पहुँच जाओ! इस घोड़े पर सवार रहते दुःख और मृत्यु तुम तक पहुँच भी नहीं पायेंगे। ख़ुशी से पूरे सौ साल जियो!"

और अलदार-कोसे आगे पैदल चल दिया। वह मज़े से डग भरता, स्तेपी पर नज़र दौड़ाता, सूरज को देखता और भरद्वाज की तरह गीत गाता चलता रहा, उसे न इसकी चिन्ता थी कि आगे उसका क्या होगा और न इस बात का दुःख कि उसने अभी-अभी क्या किया था।



अलदार-कोसे और शैतान

न जाने सच था या झूठ, पर शैतान स्तेपी में मंडरा रहा था। वह लोगों के साथ बहुत बुरा करता था। जहाँ वह पहुँचता, वहीं मुसीबत आ जाती। फिर भी लोग सहन करते आ रहे थे। वे सब उस दुष्ट से डरते थे और सोचते थे: दुनिया में शैतान से बढ़कर ताक़तवर और चालाक कोई नहीं है। जब ख़ुद अल्लाह ही उसे क़ाबू में नहीं रख सकता, तो फिर बन्दे की तो बिसात ही क्या?

और शैतान इसी का पूरा लाभ उठाता था: "दबते को सब दबाते हैं।" शैतान क्या बूढ़े, क्या बच्चे, क्या घुड़सवार, क्या पैदल, सभी का जैसे चाहता, मज़ाक़ उड़ाता रहता। पर उसके भी काले दिन आये।

लेकिन शैतान को मुंह की किसने खिलाई? सुनिये, तो जान जायेंगे।

शैतान स्तेपी में मंडरा रहा था। उसने देखा: नदी किनारे, ऐन कगार पर कोई बेदाढ़ी लेटा हुआ है। वह कमीज़ और पाजामा पहने है, उसके पैर नंगे हैं और उसने सिरहाना हाथों का लगा रखा है। कोई सोच सकता था कि मुरदा है, पर कैसे सोच सकता था, जब बेदाढ़ी के खर्राटों से किनारे की झाड़ियाँ ऐसे झुकी जा रही हों, जैसे तेज़ हवा चल रही हो।

"ठीक है, ज़िन्दा है, तो क्या हुआ," शैतान ने खीसें निपोड़कर हाथ से हाथ मला, "अभी मुरदा हो जायेगा।"

वह दबे पांव निद्रामग्न व्यक्ति के पास पहुँचा और उसने उसे कगार से नीचे धकेल दिया। पर तभी अचानक दो फ़ुर्तीले हाथ शैतान की गरदन के इर्द-गिर्द फंदे से भी ज्यादा मज़बूती से लिपटकर जकड़ने लगे, और वह भी उस आदमी के साथ नीचे पानी में गिर गया।

"छोड़ दो," शैतान ने चिरौरी की, "वरना दोनों मारे जायेंगे।"

"छोड़ूँगा तब, जब मुझे पानी से निकालोगे," आदमी ने कहा।

वे दोनों पानी में काफ़ी देर तक ग़ोते खाते रहे। शैतान की समझ में बात आ गयी: वह मज़बूत हाथों की पकड़ से नहीं छूट सकेगा। उसे आदमी के आगे झुकना पड़ा: वह बेदाढ़ी को निकालकर किनारे पर ले आया।

दोनों ने थोड़ी देर बैठकर दम लिया, थोड़ा बदन सुखाया। फिर शैतान बोला:

"इस बार तो तुमने मुझे बेवक़ूफ़ बना दिया, पर फिर कभी नहीं बना सकोगे। मेरे साथ दुनिया घूमने चलोगे, देखते हैं कौन ज़्यादा अक़्लमंद है?"

"बड़ी ख़ुशी से," बेदाढ़ी ने उत्तर दिया।

शैतान को ऐसे उत्तर की आशा न थी।

"क्या सचमुच तुम यही सोचते हो कि तुम चालाकी में मुझे मात दे सकते हो? तुमने मुझे पहचाना या नहीं? अरे, मैं शैतान हूँ। और तुम कौन हो?"

बेदाढ़ी ने शैतान पर नज़र डालकर खीसें निपोड़ीं और गाने लगा:

लोमड़ी से भी ज़्यादा हो चतुर शैतान तुम,
और मैं सब लोगों का जैसा हूँ, आज इनसान हूँ।
मुझ को सब कहते हैं अलदार-कोसे, तुम भी जान लो,
मैं नहीं शैतान, बाय, ख़ान या सुलतान हूँ!

अलदार-कोसे और शैतान स्तेपी में जा रहे थे। उन्होंने छः घाटियां और छः दर्रे पार किये, छः कुओं का पानी पीया। उन्हें कारवां के रास्ते में सातवें कुएँ की जगत पर एक बटुआ मिला।

शैतान कहने लगा:

"मुझे मिला है!"

अलदार ने कहा:

"नहीं, मुझे मिला है!"

दोनों में बहस छिड़ गयी। शैतान बोला:

"बटुआ उसी को मिलेगा, जो हम दोनों में उम्र में बड़ा होगा।"

"ठीक है," अलदार-कोसे मान गया।

शैतान ख़ुश होने लगा: "अलविदा कहो इन पैसों को, अलदाकेन।" पर प्रकट में बोला:

"मैं जब पैदा हुआ था, दुनिया बने केवल सात साल हुए थे।"

अलदार-कोसे ने हाथ पर हाथ मारा और फूट-फूटकर रोने लगा:

"हाय रे! हाय रे!"

शैतान सन्न रह गया:

"क्या दुःख है तुम्हें? तुम रो क्यों रहे हो?"

"ओह, शैतान, तुमने अपनी बात से मेरा दिल दुखा दिया। मुझे अपने बड़े बेटे की याद आ गयी। मेरा बेटा मर गया। और वह तुम्हारी उम्र का था। लगता है, तुम दोनों एक ही समय पैदा हुए थे।"

और अलदार-कोसे सुबकियाँ भरते-भरते बटुआ अपनी कांख में ठूँसने लगा।

शैतान केवल आंखें मिचमिचाता रह गया। कोई कैसे भी हिसाब क्यों न लगाये, हर तरह अलदार-कोसे का कहना ठीक था: अभी तक कभी ऐसी तो हुआ नहीं कि बेटा अपने बाप से उम्र में बड़ा हुआ हो।

अलदार-कोसे और शैतान चलते गये, चलते गये। कड़ाके की गर्मी पड़ रही थी, सफ़र था लम्बा। अलदार पैदल चलता-चलता ऊब गया। "शैतान पर," उसे सूझी, "सवारी कैसे की जाये? इस झबरे को बुद्धू बनाने की कोशिश करता हूँ।" वह बोला:

"ऐ शैतान, हमें यह उबाऊ रास्ता छोटा करना चाहिए या नहीं?"

शैतान समझ न पाया।

"बेवक़ूफ़ी मत करो, इसे छोटा कैसे किया जा सकता है?"

"बहुत आसान है। तुम्हें गाने याद हैं?"

"याद हैं।"

"तो आओ, चलते-चलते अयतीस* खेलते हैं। पहले मैं गाऊँगा, फिर तुम। जिसका गीत लम्बा होगा, वही जीतेगा।"

शैतान की आँखें चमक उठीं।

"ठीक है, अलदार-कोसे। गाने से हर तरह का रास्ता छोटा हो जाता है। शुरू करो अयतीस। पर अपनी हार की तैयारी पहले ही कर लो। इनसान शैतान को गाने में कभी मात नहीं दे सकता।"

"मुझे हारने का डर नहीं है," अलदार-कोसे ने कहा, "पर मुश्किल यह है कि मैं पैदल चलता नहीं गा सकता। चलो, यह तय रहा: जब तक मैं गाऊँगा, तुम मुझे पीठ पर बिठाकर ले चलोगे, और जैसे ही मेरा गीत खतम होगा, मैं तुम्हें बिठाकर ले चलूँगा। ठीक है?"

"ठीक है!"

---

* आयतीस – आशु – कवियों की प्रतियोगिता

अलदाकेन झट से उछलकर शैतान की पीठ पर सवार हो आराम से जम गया और अपने गाने से सारी स्तेपी गुंजाने लगा :

"होय-होय-होय-होय-होय-होय ! .."

समय बीतता रहा, सूरज दोपहर बाद ढलने लगा, शैतान दुलकी चाल से आगे ही आगे भागता रहा, पर अलदार-कोसे का गाना खतम होने को न था।

"होय-होय-होय-होय ..."

शैतान पस्त हो गया।

"तुम्हारी 'होय-होय'," शैतान हांफ़ता हुआ बोला, "कब खतम होगी, अलदारकोसे?"

अलदार बोला :

"ढोओ मुझे, शैतान, ढोओ। मेरा गीत बहुत लम्बा है। 'होय-होय' तो सिर्फ़ शुरुआत है। फिर 'होय-होय' के बाद 'दोय-दोय' शुरू होगी ..."

फिर वह और भी ज़ोर से गला फाड़कर गाने लगा :

"दोय-दोय-दोय-दोय-दोय ! .."

इस तरह अलदाकेन ने शैतान से उतरे बिना सारी विशाल स्तेपी एक छोर से दूसरे छोर तक पार कर डाली।

स्तेपी के छोर पर एक खेत था, खेत के बीच एक पुराना हल पड़ा था। अलदार-कोसे ने शैतान से कहा :

"चलो, देखते हैं, कौन ज़्यादा ताक़तवर है – तुम या मैं?"

"देखते हैं। लेकिन कैसे?"

"वह हल देख रहे हो? तुम उसे आगे खींचोगे, और मैं – पीछे। जो पहले थकेगा, वही हारा माना जायेगा।"

अलदार ने शैतान को जोत दिया। शैतान हल खींचने लगा, जीतोड़ ज़ोर लगाने लगा. उसकी ज़बान बाहर निकली पड़ने लगी, वह अपने झबरे हाथों से पसीना पोंछता जा रहा था, जब कि अलदार-कोसे हल के पीछे-पीछे चलता उसके दस्ते को दबा-दबाकर हलरेखा बनाता जा रहा था। चाहे जोताई अच्छी हुई हो या खराब, लेकिन अलदाकेन ने खेत शैतान से जोत डाला।

अन्त में शैतान थककर चूर हो गया, मुँह के बल ज़मीन पर गिर पड़ा, साँस भी उसे मुश्किल से आ रही थी।

अलदार-कोसे उसकी जोत खोलकर उस पर हंसने लगा :

"अब मालूम पड़ गया कि तुम कैसे पहलवान हो। मैं तो नाम को भी नहीं थका हूँ। मैं अभी और दस शैतानों से मुक़ाबला कर सकता हूँ।"

उन्होंने खेत में गेहूँ बोया। जब गेहूँ पक गया, उन्होंने उसे काटकर गाह लिया। अलदार-कोसे ने अनाज का एक ढेर लगा दिया और पयाल की गंजी बांध दी।

"चलो," उसने कहा, "चुन लो शैतान: छोटा ढेर लोगे या बड़ा?"

"बड़ा लूँगा! बड़ा लूँगा!" शैतान गंजी की तरफ़ लपका।

"ठीक है, बड़ा ले लो।"

अलदार ने गेहूँ बेच दिया और बिक्री से मिले पैसों से कपड़े-जूते ख़रीदकर पहन लिये, जब कि शैतान अपनी पयाल लिए जैसा था, वैसा ही रह गया।

शैतान अलदार-कोसे से नाराज़ हो गया।

"तुमने मुझे धोखा दिया। मैं तुमसे लड़ना चाहता हूँ," उसने सहयात्री से कहा।

"लड़ना चाहते हो, तो लड़ो, मैं इसके खिलाफ़ नहीं हूँ," अलदार-कोसे बोला। "लेकिन खुली स्तेपी में लड़ना बेकार होगा: किसी ने देख लिया, तो आकर छुड़ा देगा, मेल कराने लगेगा, और हम दोनों आखिर तक लड़ ही नहीं पायेंगे।"

वे एक सुनसान मिट्टी की झोंपड़ी में पहुँचे। रात उन्होंने वहीं गुज़ारी। सुबह अलदार-कोसे पूछने लगा:

"लड़ेंगे किस से? यहाँ तो बस एक फंदेवाला डण्डा है और एक चाबुक है। जिस पर तुम्हारा हाथ ज्यादा जमा हो, वही ले लो।

शैतान ने फंदेवाला डण्डा उठा लिया और सोचने लगा:

"आखिर है बुद्धू ही यह अलदाकेन। मैं अभी इसकी पसलियां तोड़ डालता हूँ! जब तक डण्डा मेरे हाथ में रहेगा, क्या वह मुझे चाबुक से छू भी सकेगा?"

लड़ाई शुरू हुई। शैतान ने ज़ोरदार वार करना चाहा, पर लम्बा डण्डा दीवार में अड़ गया – न इधर खिसके, न उधर। जब कि अलदार-कोसे शैतान पर टूट पड़ा और उसकी झबरी पीठ पर पूरी ताक़त से चाबुक फटकारने लगा। शैतान डण्डा पटककर झोंपड़ी में पागल भेड़ की तरह इधर-उधर भागने लगा।

"नहीं," वह चिल्लाने लगा, "मैं यह नहीं मानूंगा! तुमने मुझे फिर धोखा दे दिया! चलो अब हथियार बदलते हैं और स्तेपी में लड़ते हैं!.."

दोनों खुले में पहुँचे। शैतान के हाथ में चाबुक था, अलदार के हाथ में – डण्डा। वे एक दूसरे से दूर हटने लगे। शैतान चाबुक उठाकर मार भी न पाया था कि अलदाकेन ने उसकी पसलियों पर ऐसा वार किया कि उसके पैर लड़खड़ा गये...

शैतान ने फिर कभी अलदार से न कभी बहस की, न ही झगड़ा। वह विनम्र और उपकारी हो गया, हर बात में सहयात्री के आगे झुकने लगा, उसकी हाँ में हाँ मिलाने लगा। पर दिन-रात उससे मन-ही-मन द्वेष रखने लगा। उसने अपनी अन्तिम चाल चलने की ठानी, मित्र का ढोंग रचकर शत्रु को मारने की सोची।

एक बार शैतान बोला:

" अलदाकेन, मैं तुम्हारी बहुत-से मज़ाक़ और कारस्तानियों का शिकार हो चुका हूँ, पर दिल में तुम्हारे खिलाफ़ ज़रा भी बुरा नहीं सोचता हूँ। मैं तुम्हें प्यारे दोस्त, तुम्हारी दिलेरी, फुर्ती और विनोदी स्वभाव के कारण प्यार करता हूँ। मैं तुम्हारे लिए सब कुछ करने को तैयार हूँ, शैतान के वचन पर विश्वास करो, अब हम सदा दोस्त रहेंगे! हाँ, दोस्त के नाते तुम मुझे बता दो कि क्या दुनिया में कोई ऐसी चीज़ नहीं है, जिससे तुम मर सको। या तुम अमर हो?"

अलदार ने उत्तर दिया:

"लोगों में से कोई भी अमर नहीं है, शैतान। मैं भी मरूँगा। लेकिन किससे मरूँगा, खुद जानते हुए भी तुम्हें बताते हुए डरता हूँ। यह एक महान रहस्य है।"

शैतान के कान खड़े हो गये।

"अलदाकेन, मेरे प्यारे दोस्त, ज़रा तो शर्म करो – तुम मुझ पर क्यों विश्वास नहीं करते हो? आखिर तुम तो मेरे लिए सगे भाई से भी बढ़कर हो! जब मुझे मालूम हो जायेगा कि तुम्हें किस चीज से खतरा है, तब मैं अपनी आंख की पुतली की तरह तुम्हें बचाकर रखूंगा, तुम्हारी रक्षा करूँगा। सच्चे मित्र से अपना रहस्य मत छिपाओ।"

अलदार-कोसे सोचता रहा, सोचता रहा और हाथ झटककर बोला:

"ठीक है, अब जो हो, सो हो, तुम्हें दोस्त के नाते सारी बात बताये देता हूँ।" और उसने शैतान के कान में फुसफुसाकर कहा: "मैं न तीर से डरता हूँ, न खंजर से, न भेड़ियों के दांतों से, न सांप के ज़हर से, न शैतानों की चालबाज़ियों से, न ही अल्लाह के खौफ़ से, पर मैं ताज़ा बाउरसक़ों से डरता हूँ। वे जितनी तर होंगी, उतनी ही खतरनाक होंगी! मैं उन्हीं से मर सकता हूँ..."

अलदार का रहस्य जानकर शैतान प्रकटतः खुशी से फूला न समा रहा था: नाचता हुआ-सा चल रहा था, बिलकुल पेट भरे बछड़े की तरह खुरों के बल कूद रहा था।

"अब मैं तुम्हारा काम तमाम कर दूँगा, 'दोस्त' अलदाकेन," शैतान ने हर्षित होकर सोचा, "अब तुम्हारी नकेल मेरे हाथ में है!"

रात को जब अलदार-कोसे डेरे पर सो गया, शैतान चुपचाप पहले एक गांव में, फिर दूसरे में जाकर कई तम्बू-घरों से एक पूरी बोरी बाउरसक़ भरकर भोर के क़रीब लौट आया। अलदार-कोसे निश्चिन्तता से सुलगते अलाव के पास लेटा खर्राटे भर रहा था। शैतान ने उसके लात मारी और ज़ोर से किकियाया:

"अब तुम जिन्दा नहीं बच सकते, बेदाढ़ी मसखरे! अब मैं एक बार में तुझसे हर बात का बदला ले लूँगा! यह बोरी देख रहे हो? इसी में तुम्हारी मौत है!"

अलदार थर-थर कांपने लगा और हाथों से मुँह ढककर भागकर झाड़ी के पीछे दुबक गया।

"ओह, शैतान, माफ़ कर दो, ओह, दया करो!"

पर शैतान कहने लगा:

"विनती मत करो, तुम पर दया नहीं की जायेगी!"

और वह अलदार पर बाउरसक़ पर बाउरसक़ फेंककर मारने लगा:

"यह ले! यह ले! यह ले!.."

पर अलदाकेन झाड़ी के पीछे छिपा हुआ बाउरसक़ लपक-लपककर मुँह में रखने लगा... वह वैसे ही कभी किसी काम में नहीं चूकता था, फिर खाने की तो बात ही छोड़िये।

शैतान की बोरी खाली हो गयी। दुष्ट ने चैन की सांस ली और झाड़ी के पीछे यह देखने लपका कि दुश्मन का क्या हुआ। उसने देखा – और उसके पैर लड़खड़ा गये: अलदार झाड़ी के पीछे घास पर आलथी-पालथी मारे बैठा मुँह में बची-खुची बाउरसक़ ठूंसे जा रहा था, और न जाने चर्बी के कारण या आनन्द के कारण वह बिलकुल सोने की सिल्ली के जैसे चमक रहा था।

"धन्यवाद, शैतान, तुमने मेरी बहुत अच्छी खातिरदारी की!" अलदार ने बूटों के मोज़ों पर हाथ पोंछते हुए कहा। "मैंने अरसे से इस तरह का नाश्ता नहीं किया था। किसी ने सच ही कहा है: 'दोस्त हो भला, मिलें तर माल, बुरा हो, तो हो जावे नाक लाल'..."

और वह खूब ज़ोर-ज़ोर से ठहाके लगाने लगा।

शैतान लाचारी और खीज के मारे रो पड़ा और सिर पर पैर रखकर अलदार-कोसे से दूर भाग गया। वह छलांगें लगाता हुआ जितनी दूर होता गया, अलदाकेन उतने ही ज़ोरदार ठहाके लगाता गया। वैसे उसकी जगह कोई और भी क्या हंसे बिना रह सकता था?

तब से स्तेपी में शैतानों का नाम-निशान तक नहीं रहा, सदा के लिए नहीं रहा। धूर्त्त प्राणी समझ गये कि इनसान सबसे अधिक चालाक, सबसे आधिक साहसी और सबसे अधिक बुद्धिमान है। अब शैतान का नाम केवल परीकथाओं में ही मिलता है।



अलदार-कोसे की दावत

एक बार अलदार-कोसे को बाय के खेत में मजदूरी करनी पड़ी।

"कैसी कट रही है?" उसने अन्य कमेरों से पूछा।

"बुरा हाल है," उन्होंने उत्तर दिया, "गोश्त की खुशबू तक बिलकुल भूल गये।"

"दिल छोटा मत करो, मैं तुम्हें बाय के खर्चे पर गोश्त खिलाऊँगा।"

कमेरों ने केवल सिर हिला दिया:

"कभी उस घर का दरवाज़ा मत खटखटाओ, जिसमें कभी मेहमान नहीं आते हों, अलदाकेन, लोगों का यही कहना है।"

"मैं उससे मांगने का इरादा नहीं रखता। वह खुद देगा।"

"मन में क्या ठान ली, बेधड़क?"

"आंधी के आगे अच्छे-अच्छे झुक जाते हैं," अलदार-कोसे ने टाल-मटूल का उत्तर दिया।

उसी दिन न जाने कैसे और क्यों—बाय के रेवड़ का सबसे अच्छा मेढ़ा गड्ढे में गिर गया और उसकी टांग टूट गयी। बाय ने माथा पकड़ लिया:

"ओह, अलदार-कोसे, मेरा मेढ़ा मर जायेगा! क्या करूँ?"

"इसे जल्दी से ज़िबह कर दो!" कमेरे ने सलाह दी।

"पर दिल दुखता है: एक मेढ़ा कम हो जायेगा..." बाय बिसूरने लगा।

"अगर काटते दिल दुखता है, तो मरने दो अपनी मौत," अलदार-कोसे ने शान्तिपूर्वक कहा।

बाय के पास दूसरा चारा न रहा, उसने मेढ़े को काट डाला और हुक्म दिया:

"इसे बाज़ार ले जाकर महंगे दामों पर बेच दो।"

अलदार-कोसे ने कटी भेड़ को पीठ पर लादा और बाज़ार चल पड़ा। वहाँ चक्कर काटता वह आवाज़ लगाने लगा:

"ऐ नेक लोगो! मरा नापाक मेढ़ा एक अशरफ़ी में! जल्दी ख़रीदिये!"

लोग हंसने लगे:

"नहीं, अलदार-कोसे, इस बार तुम किसी को भी बेवक़ूफ़ नहीं बना सकोगे। हमें तुम्हारे नापाक मेढ़े का गोश्त नहीं चाहिए। इसे वहीं ले जाओ, जहाँ से लाये हो।"

अलदार-कोसे यही तो सुनना चाहता था।

वह बाय के पास लौट आया और आस्तीन से पसीना पोंछता हुआ बोला:

"गोश्त हमें, बाय, ख़ुद को ही खाना पड़ेगा। मेढ़े को कोई नहीं ख़रीदना चाहता। मैंने बेकार मेहनत की। कहते हैं, किसी को इसकी ज़रूरत नहीं है..."

बाय ने अपने नौकर पर विश्वास नहीं किया:

"ज़रूरत क्यों नहीं होगी! इतना अच्छा मेढ़ा है! इतना मोटा-ताज़ा मेढ़ा है! तुम झूठ बोलते हो, अलदार-कोसे! कल साथ बेचने जायेंगे।"

वे दोनों पौ फटते ही साथ बाज़ार रवाना हुए।

बाय आवाज़ लगाने लगा:

"ऐ भले लोगो! मेढ़ा ख़रीदिये! मेढ़ा किसे चाहिए?"

और अलदार-कोसे पीछे से आवाज़ लगाता:

"कलवाला मेढ़ा ख़रीदिये! वह वही मेढ़ा है! कलवाला मेढ़ा एक अशरफ़ी में लीजिये!"

लोगों से अब और सहन न हो सका:

"भागो यहाँ मे, निखट्टुओ! तुम्हें फूटी कौड़ी भी नहीं देंगे! अपने मेढ़े का गोश्त ख़ुद ही खाओ!"

फेरीवालों को बाज़ार छोड़कर जाना पड़ गया।

"अब क्या करें?" अलदार ने पूछा। "गोश्त खा लें या भेड़ियों के लिए ख़ंदक़ में फेंक दें।"

"सोचने दो, भाई, थोड़ा सोचने दो," बाय ने दुखी मन से जवाब दिया।

बाद में बाय ने सारे मज़दूरों को अपने तम्बू-घर में जमा किया और भाषण देने लगा:

"चरवाहो, मेरे बारे में अफ़वाहें उड़ाई जाती हैं कि मैं बुरा आदमी हूँ, लालची हूँ। मुझ पर तोहमत लगानेवाले उन बातूनियों को अल्लाह सज़ा देगा। आज तुम लोगों को मालूम पड़ जायेगा कि तुम्हारा मालिक कैसा है। मैं तुम्हारी बहुत अच्छी ख़ातिरदारी करना चाहता हूँ। मुझे तुम्हारी ख़ातिर अपने सबसे अच्छे, सबसे मोटे-ताज़े मेढ़े का ज़रा भी ग़म नहीं है। पकाओ, अलदार-कोसे, मेढ़े को। बस एक शर्त है: देग में सारा ठोस-ठोस – मेरा, बाकी – तुम्हारा।"

कमेरों ने एक दूसरे से नज़रें मिलाईं, हाथ हिलाये, पर जवाब में कुछ नहीं कहा। यही सही: अगर गोश्त मिलने की आशा नहीं रही तो क्या, यख़नी भी तो बुरा नहीं होता।

अलदार-कोसे एक तरफ़ दौड़-धूप करने लगा: अलाव सुलग गया, देग में पानी उफनने लगा, मेढ़ा पकाया जाने लगा। अलदार ने गोश्त इतनी देर तक उबाला कि बाय परेशान हो उठा:

"खाना तैयार होने में और कितनी देर है, अलदार-कोसे?"

"अभी तैयार हुआ जाता है, अभी, थोड़ा सब्र करो, बाय!"

जब गोश्त इतना पक गया कि हड्डियों से भी उतर गया, अलदार ने मालिक से कहा:

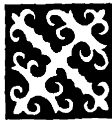
"ज़रा दुबारा कहना, बाय, तुम्हारे देग में कौन-सा हिस्सा होना चाहिए?"

"ठोस-ठोस! ठोस-ठोस!" बाय ने हड़बड़ी मचाई।

"यह रहा मारा ठोस-ठोस!" अलदार-कोसे ने बाय के आगे निरी हड्डियां परोस दीं। "और बाक़ी हमारा।"

कमेरे देग के चारों ओर बैठ गये और खाना खाने लगे। बाय ग़ुस्से से लाल हुआ जा रहा था, और मज़दूर हंसे जा रहे थे। उन्होंने छककर भेड़ का गोश्त खाकर मूँछों पर ताव दिया और सब समवेत् स्वर में कह उठे:

"दावत के लिए बहुत-बहुत शुक्रिया, अलदाकेन!"



अलदार-कोसे और घमण्डी बाय

एक घमण्डी बाय अपने गांववालों के सामने डींग हांकने लगा।

"सारी स्तेपी रट लगाये हुए है: अलदार-कोसे!.. अलदार-कोसे!.. मैं उसकी अक़्लमंदी और चालाकी के क़िस्सों पर विश्वास नहीं करता। एक बार मुझे ज़रा नज़र आ जाये वह छिछोरा! मैं उसको ही पलक झपकते बेवक़ूफ़ बना दूँगा!"

जवान हंस पड़े, बूढ़े सिर हिलाने लगे।

"डींग मत हांको, बाय, कहीं मुँह की न खानी पड़े। अभी तक दुनिया भर में कोई भी अलदाकेन को बेवक़ूफ़ नहीं बना पाया है।"

"पर मैं उसे बेवक़ूफ़ बना दूँगा!" बाय जोश में आ गया। "मैं एक घोड़ी काटकर सारे गांव को दावत खिलाने का वादा करता हूँ, अगर मैं मौक़ा मिलते ही उस चालाक को बेवक़ूफ़ न बना पाऊँ तो। मुझे वह बस मिल जाये!.."

एक बार – न जाने किसी काम से या यूँ ही – वह बाय अपने ऊंट पर स्तेपी में गया। उसने देखा: रास्ते से थोड़ी दूरी पर कोई आदमी बराबर चक्कर काटता सचमुच कुछ खोज रहा है।

"ऐ दोस्त," बाय ने आवाज़ दी, "क्या कुछ खो गया है?"

अपरिचित रुक गया और चिन्तापूर्ण स्वर में बोला:

"कुछ खोया नहीं है, पर फिर भी ढूँढ़ रहा हूँ।"

"आखिर क्या ढूँढ़ रहे हो?"

"धरती का नुक्कड़ ढूँढ़ रहा हूँ। मुझे अच्छी तरह मालूम है कि वह यहीं कहीं है, पर किसी तरह मिल ही नहीं रहा है। अगर मैं स्तेपी को ऊंचाई से देख पाता, तो फ़ौरन मिल जाता। लेकिन मुसीबत यह है कि आस-पास न कोई टेकरी है, न ही कोई टीला। लेकिन मैं अपनी ठानी करके रहूँगा। जो धरती का नुक्कड़ ढूँढ़ निकालेगा, उसे बहुत यश और सम्मान मिलेगा।"

बाय ने साश्चर्य अपरिचित की बात सुनी और फिर पूछा :

"बताओ, दोस्त, क्या ऊँट पर से धरती का नुक्कड़ तुम्हें नज़र आ सकता है?"

"वाह, भई, वाह! क्यों नहीं नजर आयेगा ऊँट पर से! ज़रूर नज़र आयेगा। लेकिन मेरे पास ऊंट तो क्या खरसैला गधा भी नहीं है।"

बाय काठी पर कुलबुलाने लगा।

"तुम मेरे ऊंट पर चढ़ जाओ," उसने सुझाव दिया। "मगर एक शर्त है: तुम्हें सारे में यही कहना होगा कि हमने धरती का नुक्कड़ मिलकर ढूँढ़ा था। हम दोनों यश और सम्मान बांट लेंगे। मंजूर है?"

"यही सही, मंजूर है!"

बाय ऊंट से उतरकर, उस पर अजनबी को बिठा, मुँह ऊपर को उठाये बड़ी बेसब्री से उसका कुछ कहने का इन्तज़ार करने लगा।

"क्यों, नज़र आया धरती का नुक्कड़?"

"नहीं," अपरिचित ने आराम से बैठते और नकेल संभालते हुए एक ठण्डी सांस ली, "नजर नहीं आया। बस इतना मालूम पड़ गया, बाय, कि तुम महामूर्ख हो। पर दिल छोटा मत करो: लेकिन आज से तुम सबके सामने डींग मारकर कह सकते हो कि तुमने अलदार-कोसे के साथ मिलकर धरती का नुक्कड़ ढूंढ़ने की कोशिश की थी!"

"अलदार-कोसे! क्या तुम्हीं हो?" बाय ज़ोर से चिल्लाया और ऊंटसवार के पीछे भागा। "मेरा ऊंट लौटा दे, लुटेरे!"

"लौटा दूँगा, अगर मुझे पकड़ लोगे!" अलदार-कोसे ने चिल्लाकर कहा और ऊंट को सीधा दौड़ाने लगा, वह भी ऐसे कि घास की गड्डियां की गड्डियां उड़ने लगीं। और बाय मुँह बाये जहाँ का तहाँ खड़ा रह गया।

वह सूरज डूबते-डूबते किसी तरह घिसटता हुआ अपने गांव तक पहुँच पाया। सामने से उसकी पत्नी आ रही थी।

"दोहरे क्यों हुए जा रहे हो? ऊंट कहाँ गया?"

"ऊंट नहीं है। अलदार-कोसे ने छीन लिया," बाय गुर्राया।

बाय की बीवी रोने-चीखने लगी। लोग जमा हो गये। सबको क़िस्सा मालूम पड़ गया।

"कैसे छीना," लोगों ने पूछा, "ज़बरदस्ती या चालाकी से?"

"चालाकी से," बाय ने स्वीकार किया।

गांव में हल्ला मच गया। जवान ठहाके लगाने लगे, बूढ़े मज़ाक़ उड़ाने लगे।

"तुम्हें ऐसा ही सबक़ मिलना चाहिए था, शेख़ीबाज़! अब घोड़ी काटो, लोगों को बुलाओ और दावत दो। तुम बाज़ी हार गये।"

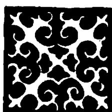
बाय बचकर कहाँ जा सकता था? जनसाधारण की इच्छा का विरोध नहीं किया

जा सकता। उसने एक घोड़ी काटी और आंसू सटकता हुआ सारे गांव की गोश्त से ख़ातिरदारी करने लगा।

दावत जब ज़ोरों पर थी, अलदार-कोसे ऊंट पर सवार हो वहां आ पहुंचा।

"संभाल लो, बाय, अपना ऊंट," वह हंसने लगा, "और आगे कभी अक़्लमंदी में ग़रीबों से होड़ मत करना और न ही दूसरों के बल पर नाम कमाने की कोशिश करना!"

बाय ऊंट पाकर ख़ुश था, और लोग – अलदाकेन को देखकर। ग़रीबों ने अपने चहैते को हाथों-हाथ लेकर सम्मानित स्थान पर बिठा दिया और उसे सबसे अच्छा टुकड़ा परोसा। दावत बड़ी हंसी-ख़ुशी के वातावरण में सुबह तक चलती रही।



अलदार-कोसे और लालची मुल्ला

एक लालची मुल्ला के सन्दूक खुदापरस्तों के चढ़ावों के मारे टूटे पड़ रहे थे, पर उसे फिर भी सब कम लगता था। ऐसा बिरला ही कोई मिलता, जिसने उसके मुंह से "दो" शब्द न सुना हो, पर ऐसा एक भी आदमी नहीं था, जिसने उसके मुंह से एक भी बार "लो" सुना हो। अगर कोई दुखियारा मुल्ला से मदद मांगता, तो उसका उत्तर हमेशा यही होता:

"मेरे बेटे, दिल से परवरदिगार की इबादत करो। वह सर्वशक्तिमान है और सब खुदापरस्तों पर रहम करता है। अगर तुमने कोई गुनाह नहीं किया है तो वह तुम पर नजर इनायत फ़रमायेगा।"

अलदार-कोसे को मुल्ला के लालच और पाखण्ड के बारे में मालूम पड़ा और उसने उसे सबक़ सिखाने की ठान ली।

एक बार मुल्ला गधे पर सवार होकर एक गांव से दूसरे गांव जा रहा था। अचानक उसे आगे सड़क के किनारे से किसी के फूट-फूटकर रोने की आवाज़ सुनाई दी। क्या हुआ? कोई अपने मरे को तो नहीं रो रहा है? मुल्ला ने गधे को ज़ोर से हांका। किसी ने ठीक ही कहा है: ढोर पर चरबी चढ़े भरपूर चारे से, मुल्ला पर – आये दिन मरनेवालों से।

मुल्ला रास्ते के किनारे के कुएं के पास पहुंचा और उसने देखा: कोई आदमी घुटनों पर सिर झुकाये ज़ोर-ज़ोर से रो रहा है।

"क्या हुआ?" मुल्ला ने पूछा।

"हाय, मैं मर गया, हाय, मैं मर गया!" आदमी रोता रहा।

"क्या ग़म है तुम्हें? क्या तुम्हारे रिश्तेदारों में से कोई मर गया है?"

"हाय, उससे भी बुरा हुआ!"

"उससे बुरा और क्या हो सकता है?"

"यही हुआ है, मुझे मरदूद अलदार-कोसे ने कहीं का नहीं छोड़ा।"

"अलदार-कोसे? वह अधर्मी तो हर तरह की हरकत कर सकता है। मैंने उसे कभी देखा नहीं, पर लोगों से उसके बारे में सुन रखा है। उसने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है?"

"मुझे वह अचानक कुएं पर मिल गया। हमने बैठकर बातचीत की। अलदार-कोसे ने मुझसे एक चुटकी नसवार मांगा। मैंने उसकी ओर अपनी तम्बाकू की पुरानी थैली बढ़ाई, और उस नीच ने उसे छीनकर कुएं में फेंक दिया..."

मुल्ला ने खीसें निपोड़ दीं।

"पुरानी तम्बाकू की थैली की खातिर, भले ही उसमें तम्बाकू रही हो, कोई रो-रोकर आसमान सिर पर उठाता है!"

"लेकिन मैंने तो थैली में तम्बाकू के नीचे तीन अशरफ़ियां – अपनी सारी दौलत रख रखी थीं" अपरिचित ने कहा और और भी गला फाड़कर रोने लगा।

मुल्ला झट से काठी से उतर आया।

"क्या कहा, थैली में तीन अशरफ़ियां हैं? तो फिर तुम उन्हें निकालने कुएं में क्यों नहीं उतर रहे हो, बेवक़ूफ़? कुआं ज़्यादा गहरा तो है नहीं।"

"कैसे उतरूं, जब मेरे पास रस्सी ही न हो तो।"

मुल्ला की आंखें नाच उठीं।

"सुनो," उसने कहा, "अगर तुम मुझे एक अशरफ़ी दो, तो मैं तुम्हें अपने गधे की लगाम उधार दे दूंगा।"

"खुदा सलामत रखे आपको, मोहतरम मुल्ला! मैं बड़ी खुशी से आपको एक अशरफ़ी दे देता, पर लगाम भी मेरे कुछ काम न आ सकेगी।"

"आखिर क्यों?"

"क्योंकि मुझे छुटपन से ही ठण्डे पानी से सबसे ज़्यादा डर लगता है, मेरे लिए तो कुएँ में डुबकी लगाने से तो मरना ज़्यादा आसान है..."

"कैसा बेवक़ूफ़ है!" मुल्ला ने सोचा, "दौलत की खातिर मैं तो कुएँ ही क्या दोज़ख में भी पहुँच जाऊँ..." पर प्रकट में बोला:

"यही बात है, तो चलो, मैं तुम्हारी मुश्किल आसान किये देता हूँ, कुएँ से तुम्हारी अशरफ़ियाँ निकाल लाता हूँ। पर जोखिम उठाने और मेहनत के लिए तुम्हें मुझे दो अशरफ़ियां देनी पड़ेंगी।"

"ज़रूर दूंगा! बड़ी खुशी से दूँगा! वैसे भी तो मेरी रक़म डूबी जा रही है। यही सही: दो अशरफ़ियां आपकी, एक – मेरी।"

मुल्ला ने पलक झपकते कपड़े उतार फेंके और तोंद संभालते हुए डरते-डरते कुएँ में झांककर देखा।

"लगाम कसकर पकड़ना," वह बोला, "और जब मैं थैली उठा लूँ, पूरी ताक़त लगाकर खींचना।"

मुल्ला लगाम पकड़कर हाँफता हुआ कुएँ में उतरा और पानी के ऊपर लटका रहा।

"मुझे धीरे-धीरे नीचे उतारो, देखो, बहुत होशियारी से!" भीतर से उसकी आवाज़ गूंजी। "अरे, इतनी देर क्यों कर रहे हो?"

"अरे, हमें जल्दी कहाँ की पड़ी है, मेरे बाप?" उसे ऊपर से आवाज़ सुनाई दी। "उतावला सो बावला, धीरा सो गम्भीरा। मैं देर इसलिए लगा रहा हूँ, क्योंकि सोच रहा हूं। और मैं सोच यह रहा हूं; क्या आपको फ़ौरन बता दूँ कि कुएँ में कोई अशरफ़ी-वशरफ़ी नहीं हैं?"

"क्या?!" मुल्ला चीखा। "कुएँ में अशरफ़ियां नहीं हैं? ठग! यानी तुमने झूठ बोला कि अलदार-कोसे ने तुम्हारे साथ बहुत बुरा मज़ाक़ किया था?"

"हाँ, झूठ बोला, झूठ बोला, क़बूल करता हूँ, मोहतरम मौलाना! अलदार-कोसे ने सचमुच मज़ाक उड़ाया, पर मेरा नहीं, आपका। क्योंकि अलदार-कोसे तो मैं खुद हूँ।"

"हाय मेरा सिर!" मुल्ला चीखा, उसके हाथ से लगाम छूट गयी और वह छप्प से पानी में गिर पड़ा।

कुआँ वास्तव में अधिक गहरा नहीं था। मुल्ला कमर तक पानी में खड़ा गालियाँ देता रहा, लानतें भेजता रहा, धमकियाँ देता रहा, पर शीघ्र ही उसकी समझ में आ गया कि वह इस तरह अलदार का कुछ न बिगाड़ सकेगा। तब मुल्ला दूसरी तरह बोलने लगा:

"अलदाकेन, मेरे प्यारे दोस्त, मैं तुम्हारी शरारत के लिए तुम से अब नाराज़ नहीं हूँ। तुम भी मुझ से नाराज़ मत होओ। तुमने मज़ाक किया -- बस। जल्दी से लगाम का छोर मेरे पास डाल दो, मेरी कुएं से निकलने में मदद करो, प्यारे दोस्त!"

किन्तु अलदार ने मुल्ला के ही स्वर में उत्तर दिया।

"दिल से परवरदिगार की इबादत करो, मोहतरम मौलाना। अल्लाह सर्वशक्तिमान है और खुदापरस्तों पर रहम करता है। अगर आपने कोई गुनाह नहीं किया है, तो वह आप पर ज़रूर इनायत फ़रमायेगा!"

इतना कहकर बेदाढ़ी गधे पर सवार हो, जहाँ उसे जाना था, चला गया, पर मुल्ला के कपड़े अच्छी तरह छुपाना नहीं भूला। और मुल्ला न जाने कितने घंटों तक कुएं में स्नान करता रहा, जब तक कि वहाँ से गुज़रते सौदागरों ने उसे निकाल न लिया।



अलदार-कोसे और ग़रीब विधवा

एक ग़रीव विधवा का बेटा बीमार पड़ गया। लड़के का बदन जल रहा था, वह छटपटा रहा था और बेसुधी में बड़बड़ा रहा था:

"मां, प्यारी मां, एक घूंट क़िमिज़ दे दो!"

मां रो रही थी: उसके जन्म से ही उसकी झोंपड़ी में क़िमिज़ कभी नहीं रही थी। वह किनारे झड़ा हुआ प्याला लेकर बाय के पास गयी।

"दया कीजिये, बाय, दम तोड़ते बच्चे के लिए कम-से-कम आधा प्याला क़िमिज़ दिलवा दीजिये। मेरे पति ने बर्फ़ के तूफ़ान में आपके रेवड़ की रक्षा करते हुए ठिठुरकर जान गँवा दी, उसने आपकी ख़ातिर अपने प्राण की बाज़ी लगा दी, भले काम के लिए आप भी थोड़ा-सा स्तेपी की जड़ी-बूटियों का रस* देने में कंजूसी मत करिये..."

बाय उस पर केवल हंस दिया:

"क़िमिज़ चाहती है? पर डण्डा नहीं चाहती? कैसा ज़माना आ गया! भिखमंगों को भले लोगों को परेशान करते शर्म नहीं आती! भाग यहाँ से, बेशर्म भिखमंगी!" और उसने स्त्री को दरवाज़े से बाहर धकेल दिया।

वह झर-झर आंसू बहाती धीरे-धीरे घर लौट चली। आधे रास्ते में उसे पीछे से घोड़े की टाप सुनाई दी। उसने डरकर पीछे देखा: अलदर-कोसे चितकबरे सफ़ेद घोड़े पर आ रहा था।

"अपको किसी ने बुरा कहा, ख़ातून? आप रो क्यों रही हैं?" अलदार ने पूछा।

विधवा ने उसे अपने कष्ट के बारे में बताया।

"दिल छोटा मत करिये," अलदार ने कहा। "मेरा ख़याल है: सिर सलामत रहे, पगड़ी मिल ही जायेगी।"

---

* कज़ाख़ लोग क़िमिज़ व दूध को "जड़ी-बूटियों का रस" कहते हैं।

फिर वह बिना और कुछ कहे घोड़े को दुलकी चाल से बाय के तम्बू-घरों की ओर दौड़ा ले चला।

उसी समय बाय ताज़ा हवा खाने और साथ ही अपने रेवड़ों को देखकर मन-ही-मन खुश होने बाहर निकला।

अलदार ने उसके पास जाकर बाअदब सलाम किया और अनुग्रहपूर्वक पूछा कि क्या बाय को किसी ऐसे व्यक्ति का पता है, जिसे घोड़ा चाहिए हो।

"तुम क्या घोड़ा बेच रहे हो?" बाय ने कुतूहल दिखाया।

"बेच नहीं रहा हूँ, चचा, बल्कि बदलना चाहता हूँ।"

बाय के पेट में खलबली मच गयी: उसे अदला-बदली करने और उसमें सीधे-सादे लोगों को बेवक़ूफ़ बनाने से अधिक आनन्द और किसी काम में आता ही नहीं था। वह मेमने की खाल नफ़े में कमाने की ख़ातिर अपने सगे बाप तक को बदल सकता था।

"अपने मरियल घोड़े के बदले में तुम क्या चाहते हो?" उसने बड़ी बेतकल्लुफ़ी से कहा और अलदार के घोड़े को छू-छूकर देखने लगा।

"बहुत कम चाहता हूँ। पांच मेढ़े दोगे?"

"कितने? कितने?" बाय को अपने कानों पर विश्वास नहीं हुआ।

"पांच मेढ़े। पांच ज्यादा हो, तो तीन में दे दूंगा।"

घोड़ा – और तीन मेढ़ों में! बैठे-ठाले कितना फ़ायदा हो रहा है!

"मंजूर है!" बाय ने जल्दी मचायी। उतरो फ़ौरन, और मेढ़े चुन लो!"

पर अलदाकेन को जल्दी क्यों होने लगी। उतावला कभी कोई काम पूरा कर पाता है। घोड़े से वह उतर तो गया, पर उसने लगाम हाथ से नहीं छोड़ी।

"तुम तैयार हो गये, बहुत अच्छी बात है," वह बोला। "हमारे सौदे से सबकी बरकत हो! क्यों न अदला-बदली आगे भी जारी रखें, बाय? मैं घोड़ा और तीन मेढ़े एक बछड़े से बदलता हूँ। तुम क्या कहते हो?"

बाय ने गरेबान खोल दिया और तपाक से हाथ झटककर बोला:

"मंजूर!"

"बहुत ही अच्छी बात है। तुम भी खुश, और मैं भी खुश। अदला-बदली और करें, क्यों? मैं घोड़ा, बछड़ा और तीन मेढ़े एक दुधारू घोड़ी से बदलता हूँ!"

बाय अब पूरी तरह नशे में चूर हो चुका था।

"मंजूर!" उसने हांफ़ते हुए झट से कहा। "चलो, थोड़ा नुक़सान मेरा ही सही... मंजूर है!"

"कैसा नुक़सान, बाय, थोड़ी तो शर्म करो! तुमने तो मुझे बिलकुल उल्लू बना दिया। ख़ैर, मेरी दरियादिली का फ़ायदा उठा लो। और अदला-बदली करते हैं! घोड़ा, घोड़ी, बछड़ा और तीन मेढ़े मरियल से मरियल ऊंट से बदलता हूँ।"

"मंज़ूर!" बाय ने दिल थाम लिया। "ऊंट तुम्हारा हुआ।"

"बहुत ही अच्छी बात है। पर मुझे मंज़ूर नहीं है।"

"क्यों मंज़ूर नहीं है?" बाय बौखला उठा। "यह उल्टा काम क्यों करना चाहते हो? मर्दों का एक क़ौल होता है।"

"मुझे मंज़ूर इसलिए नहीं," अलदार ने उत्तर दिया, "क्योंकि मैं ज़रूरत से ज़्यादा नहीं लेना चाहता! मेरे लिए घोड़ी ही काफ़ी है। तुम्हारा ऊंट तुम्हारे पास रहे, और घोड़ा – मेरे पास। मंज़ूर है?"

"मेरी क़िस्मत फिर अच्छी रही," परेशान बाय मन-ही-मन ख़ुश होने लगा, "ऊंट कैसा भी क्यों न हो, उसकी क़ीमत घोड़े से तो ज़्यादा ही होती है..."

"मंज़ूर है! मंज़ूर है! ले जाओ अपना घोड़ा!" और ख़ुशी के मारे बाय अलदाकेन को काठी पर बिठाने लगा। जब कि अलदाकेन ने बाय की घोड़ी के गले में रस्सी बांधी और वहाँ से चंपत हो गया।

"ऐ, नौजवान!" बाय ने उसे पीछे से पुकारा, "अगर कुछ और अदला-बदला करनी हो, तो फिर आ जाना।"

"आऊंगा ज़रूर!" घोड़ी सरपट दौड़ाते हुए अलदार-कोसे ने उत्तर दिया। "इंतज़ार करते रहना, बाय!

अलदार-कोसे रास्ते में विधवा के यहाँ गया।

"बाय ने आपको एक चमचा क़िमिज़ देने में कंजूसी दिखाई, इसलिए मैं उसकी दुधारू घोड़ी आपके लिए ले आया हूँ। अब आप अपनी क़िमिज़ तैयार कर सकेंगी।"

विधवा प्रसन्न हो गयी, उसने घोड़ी को दुहा और क़िमिज़ बनाकर बेटे को पिला दी। लड़का शीघ्र ही स्वस्थ हो गया। निर्धन स्त्री अलदार-कोसे को जीवन भर याद करती रही।

बाय भी उसे नहीं भूल पाया। सौदेबाजी के बाद उसका जोश ठण्डा पड़ा, तब उसे ध्यान आया कि उसने घोड़ी तो बिलकुल फोकट में दे दी, पर अब पछताये का होते हैं, जब चिड़ियां चुग गयीं खेत।



अलदार-कोसे और शिग़ायबाय

शिग़ायबाय नाम का एक बाय था। सारी दुनिया में उससे कंजूस कोई न होगा। अपनी सारी ज़िन्दगी में उसने न तो कभी किसी को मांस का एक टुकड़ा दिया और न ही किसी को अपने यहां दावत पर बुलाया।

अलदार-कोसे को शिग़ायबाय की असाधारण कंजूसी के बारे में मालूम पड़ा और उसने मौक़ा मिलते ही उसका मेहमान बनने की ठान ली। कुछ दिन बाद उसे उस स्थान के आस-पास के इलाक़े में जाना पड़ा, जहाँ मक्खीचूस रहता था, और वह उसके तम्बू-घर की ओर मुड़ गया।

बाय के तम्बू-घर में घुसने से पहले अलदार ने दरार से झांककर देख लिया कि अन्दर क्या हो रहा है। तम्बू-घर के बीचोंबीच अलाव जल रहा था, जिस पर रखे देग में गोश्त उबल रहा था। बाय अलाव के आगे बैठा क़ज़ी बना रहा था। उसके पास ही उसकी बेटी, पत्नी और नौकरानी बैठी थीं। बेटी सारस के पर नोच रही थी, बीवी आटा गूंध रही थी और नौकरानी मेढ़े का सिर साफ़ कर रही थी।

तभी अलदाकेन तम्बू-घर में दाखिल हुआ और उसने घरवालों को बाअदब सलाम किया। वे स्तब्ध रह गये और हड़बड़ाहट में अपने-अपने हाथों की चीजें छिपाने लगे। फिर बाय ने कोसे के सलाम का जवाब दिया और उसे खाना खिलाने से बचने की ख़ातिर विनम्र मुस्कान के साथ सम्बोधित किया:

"कोसे, मुझे तुमसे मिलकर बहुत खुशी हुई। बैठो और सुनाओ कि तुम्हारा सफ़र कैसा कटा। हमें बुरा मत समझना, दोस्त, तुम्हारी आवभगत के लिए हमारे पास कुछ नहीं है।"

"कोई बात नहीं," अलदार-कोसे ने उत्तर दिया, "क़िस्से सुनाने में तो मैं माहिर हूं। पर तुम्हें किस बारे में सुनाऊं, बाय? जो देखा, उसके बारे में, या उसके बारे में जो सुना?"

"जो देखा, उसके बारे में बताओ। अफ़वाहें झूठी होती हैं, मैं उनपर विश्वास नहीं करता," शिग़ायबाय बोला।

"ख़ैर, जैसा तुम चाहते हो, वैसा ही होगा," अलदार ने कहा। "अच्छा तो सुनो। मैं तुम्हारे यहाँ आ रहा था कि रास्ते में मैंने लम्बा, बहुत लम्बा सांप रेंगता हुआ देखा, जो उस क़ज़ी से छोटा नहीं था, जिस पर तुम बैठे हुए हो। उसका सिर उस मेढ़े के सिर जैसा काला और डरावना था जिसे नौकरानी ने अपने नीचे छिपा रखा है। उसे देखकर मैं दंग रह गया। पर मुझे फ़ौरन होश आ गया और मैंने पत्थर से उसका सिर कूट डाला। उसका बस भुरता बनकर रह गया, वैसा ही जिस पर तुम्हारी बीवी बैठी है। तो यह गुज़री मेरे साथ! और अगर तुम्हें मेरी बात पर विश्वास न आये, तो मेरा हाल वही हो, जैसा कि उस सारस का, जिसे अभी-अभी तुम्हारी बेटी साफ़ कर रही थी।"

इतना कहकर कोसे चुप हो गया, और बाय समझ गया कि उससे कुछ भी छिपा पाना असम्भव है। तब उसने अलदार को तम्बू-घर से चलता करने के लिए देग में चमचा डालकर हिलाते हुए कहा:

"उबलं, मेरे देग, पूरे तीन महीने तक उबल!"

अलदाकेन फ़ौरन समझ गया कि बाय की क्या मंशा है। उसने जूते उतारकर अपने पास रख लिये और ऐसे बोला मानो उन्हें ही सम्बोधित कर रहा हो:

"आराम करो, मेरे जूतो, अगले बरस तक!"

फिर वह कमर के बल लेट गया और हाथ का सिरहाना लगाकर ज़ोर-ज़ोर से खर्राटे भरने लगा। कोसे ने आधी रात को जागकर इधर-उधर नज़र दौड़ायी।

उसने चुपचाप उठकर देग में से गोश्त निकाला और भरपेट खाकर गोश्त की जगह देग में बाय का चमड़े का पाजामा डाल दिया। फिर वह लेट गया और गहरी नीन्द में सोये होने का ढोंग रचने लगा।

भोर से पहले शिग़ायबाय ने पत्नी, पुत्री और नौकरानी को झंझोड़कर जगा दिया और उनसे फ़ुसफ़ुसाकर बोला:

"जल्दी से उठो! चलो, जब तक कोसे सोया हुआ है, हम गोश्त खा डालते हैं।"

नौकरानी ने "गोश्त" लगन में डालकर उसे दस्तरख़ान पर रख दिया। सब लोग गोला बनाकर बैठ गये और "गोश्त" के टुकड़े काटने की कोशिश करने लगे, पर चाकू उसपर चल ही नहीं रहा था।

"यह क्या हुआ? कहीं गोश्त इतनी देर तक उबलने से सख़्त तो नहीं हो गया है?" शिग़ायबाय बोला।

अन्त में वह किसी तरह अपने लिए एक टुकड़ा काटने में सफल हो गया। उसने चमड़ा मुंह में डाला, चबाता रहा, चबाता रहा, उसके दांत टूटते-टूटते बचे, पर किसी तरह चबा ही नहीं पाया।

तब बाय बोला:

"नहीं, बीवी, यह गोश्त खाना टेढ़ी खीर है। इसे कल के लिए छिपा दो, और मुझे थोड़ी यखनी डाल दो।"

रात ऐसे ही बीत गयी, पर शिग़ायबाय को अलदार-कोसे की कारिस्तानी की हवा भी न लगी।

सुबह शिग़ायबाय खेत जाने को तैयार हुआ, उसने पत्नी को बुलाकर कहा:

"बीवी, मेरे लिए तूंबे में ऐरान* भर दो। पर देखो, कोसे को दिखाई नहीं पड़े।"

"ठीक है," पत्नी बोली," मैं ऐरान ऐसे भरूंगी कि कोसे को कुछ नज़र नहीं आयेगा।"

बाय तूंबे को बग़ल में दबाकर जाने ही लगा था कि अलदार ने उसकी फूली हुई बग़ल देख ली और लपककर उसके गले के इर्द-गिर्द हाथ डाल उसे ऐसे भींचने लगा, मानो उससे बिछुड़ने जा रहा हो।

"अरे, आज मैं तुम्हें छोड़कर जा रहा हूँ, बाय। अलविदा, दोस्त, अलविदा!"

इस दौरान वह बाय को पूरी ताक़त से झकझोरता रहा, उसे इधर-उधर हिलाता रहा।

ऐरान बाय के पैरों पर ढुलने लगी, पर वह सहता रहा, कुछ नहीं बोला। फिर उससे न रहा गया, उसने तूंबा ज़मीन पर पटक दिया और चिल्लाया:

"ले, शैतान, ले, पी ले मेरी ऐरान!"

बाय उस सुबह वैसे ही खाली पेट घर से चला गया।

अगले दिन शिग़ायबाय फिर खेत जाने को तैयार होकर पत्नी के कान में फ़ुसफ़ुसाया:

"बीवी, ओ बीवी, मुझे गरम-गरम रोटी सेंक दे, लेकिन इस तरह कि अलदार को कुछ नज़र न आये।"

"ठीक है," पत्नी ने उससे कहा, "पकाये देती हूँ।"

उसने कोसे से छिपकर रोटियां सेंक लीं और सोचने लगी: "इस बार शायद कोसे कुछ नहीं देख पाया होगा। अब ये मन भरके रोटी खा सकेंगे।"

पर कोसे सब देख रहा था, केवल सोने का ढोंग रच रहा था।

बाय ने गरम-गरम रोटियां कांख में दबायी ही थीं कि वह उचककर बिस्तर से उठा और बहुत प्रेम व सहृदयता से बोला:

"अच्छा, बाय, मैं तुम्हारे यहाँ कुछ दिन रह लिया – बहुत हो गया। मैंने आज ज़रूर जाने का फैसला कर लिया है। आओ, जाने से पहले तुम्हें कसकर गले लगा लूं।"

शिग़ायबाय मुंह भी न खोलने पाया कि अलदार-कोसे ने उसको बांहों में कसकर भींचना और दबाना शुरू कर दिया। बाय का पेट गरम रोटियों के मारे जलने लगा। आखिर बाय से नहीं सहा गया और वह अचानक चिल्ला उठा:

---

* ऐरान – मट्ठा।

"हाय रे, हाय रे, मेरा पेट जल गया!"

कोसे ने उसे छोड़ दिया, और शिग़ायबाय सारी रोटियां जमीन पर फेंकते हुए बोला:

"ले, बेशर्म कोसे, ले, खा मेरी रोटियां!"

कोसे ने रोटियां खा लीं और फिर बग़ल के बल लेट गया, बाय फिर भूखा चला गया।

इस तरह कई दिन बीत गये, पर शिग़ायबाय किसी तरह अलदार-कोसे से पिण्ड नहीं छुड़ा पाया। इसलिए बाय किसी न किसी तरह बिनबुलाये मेहमान को परेशान करने की सोचने लगा।

अलदार-कोसे के पास माथे पर सफ़ेद दाग़वाला मुश्की घोड़ा था। वह शिग़ायबाय के निजी घोड़ों के साथ उसके अस्तबल में बंधा हुआ था। बाय ने उस घोड़े को काट डालने की ठानी।

पर अलदाकेन शिग़ायबाय का इरादा भांप गया और सोचने लगा: "ठहरो, बाय, तुम्हें अपनी करतूत पर पछताना पड़ जायेगा!"

उसने अपने घोड़े की गंज पर लीद मल दी, और शिग़ायबाय के एक घोड़े के माथे पर खड़िया से सफ़ेद दाग़ बना दिया।

शिग़ायबाय आधी रात को बिस्तर से उठा, अस्तबल में गया और कोसे को धोखा देने के लिए वहां से भयभीत स्वर में चिल्लाने लगा:

"कोसे, कोसे! तुम्हारा घोड़ा लगाम में फंस गया, आखिरी सांसें गिन रहा है!"

कोसे जवाब में चिल्लाया:

"मरने दो उसे: बस उसे काट डालो, जिससे गोश्त बेकार न जाये।"

बाय ने तत्क्षण गंज के सफ़ेद धब्बेवाला घोड़ा काट डाला। सुबह जब वह अस्तबल में गया, तो देखा: उसने अपना ही घोड़ा काट डाला था। बाय दुःख के मारे रो पड़ा।

इस बीच अलदाकेन एक ही जगह रहते-रहते ऊब उठा और जाने की तैयारी करने लगा।

एक बार वह शिग़ायबाय से बोला:

"प्यारे बाय, मुझे बीज़* दे दो। मैं जाना चाहता हूं, मेरे जूते बिलकुल फट गये हैं।"

"मेरी बीवी से मांग लो, वह तुम्हें बीज़ दे देगी," बाय ने जवाब दिया और जानवरों को संभालने खेत चला गया।

अलदार-कोसे बाय की पत्नी के पास जाकर बोला:

"बायबिशे,** शिग़ायबाय ने फ़रमाया है कि अपनी बेटी बीज़-बेकेश को मेरी बीवी बनाकर मेरे साथ भेज दो।"

---

* बीज़ – बड़ी सूई, सुआ।

** बायबिशे – बाय की पत्नी।

"तुम्हारा क्या दिमाग़ ख़राब हो गया है?" बाय की पत्नी चिल्लायी। "वे क्या कभी बीज़-बेकेश की शादी तुम्हारे साथ कर सकते हैं?"

तब अलदाकेन उसे तम्बू-घर से बाहर लाया और उसके सामने उसने बाय को आवाज़ दी:

"बाय, ओ बाय, तुमने मुझे बीज़ देने का वादा किया था, पर तुम्हारी बीवी मुझे बीज़ को नहीं दे रही है!"

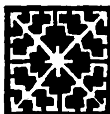
शिग़ायबाय खेत से जवाब में चिल्लाया:

"दे दो, बीवी, इसे बीज़ दे दो, बस किसी तरह इससे पिण्ड तो छूटे!"

बुढ़िया क्या करती, उसे अपनी सुन्दर बेटी चलते पुर्ज़े अलदार-कोसे को देनी पड़ गयी। वह बेटी को विदा करती हुई रो पड़ी और कहने लगी:

"तुमने हमारा जीना हराम कर दिया, मुए कोसे, तुम्हें कभी नहीं भूलेंगे! भाग जाओ यहां से, दूर हो जा मेरी नज़रों से, फिर कभी लौटकर हमारे पास मत आना।"

अलदार-कोसे ने घोड़े पर काठी कसी, अपने आगे बीज़-बेकेश को बिठाया, लगाम फटकारकर घोड़ा हांका और – फिर कभी वहां नज़र नहीं आया।



अलदार-कोसे, बाय और सधाया हुआ ख़रगोश

अलदार-कोसे को एक दिन उसका पुराना मित्र मिल गया।

"तुम इतने दुबले कैसे हो रहे हो?" अलदार ने उसे गले लगा लिया। "उदास क्यों हो? सुनाओ, क्या हाल हैं?"

"बस जी रहा हूँ," मित्र ने गहरी ठण्डी सांस ली, "न कुछ तन ढकने को है, न कुछ पकाने को। भूख घर से बाहर भागने को मजबूर करती है, तो नंगापन – घर में भागने को... मेरा घर उजड़ा जा रहा है, अलदाकेन।"

"लेकिन, तुम्हारे पास भेड़ें तो थीं!"

"थीं। दसियों थीं। लेकिन अब एक भी नहीं रही है।"

"सब मर गयीं क्या?"

"मरीं नहीं, बाय क़ारीनबाय ने छीन लीं। सारी की सारी। मैंने पूछा: 'क्यों मुझे तबाह कर रहे हो, बाय?' वह हंसने लगा: 'इस लिए, क्योंकि तुम्हारे दादा ने मेरे दादा को गीत में ख़ूनख़ोर कहा था!'"

अलदार की भौंहें फड़क उठीं।

"बात यह है, दोस्त... लड्डू कहे मुंह मीठा नहीं होता। तुम्हें बातों की ज़रूरत है। और क़सम खाकर कहता हूँ, भेड़ें तुम्हें मिलेंगी! ज़रा बस पूनम तक सबर करो..."

एक दूसरे से विदा लेकर वे अपनी-अपनी राह चले गये।

अलदार-कोसे स्तेपी में डग भरता, नाचता चला जा रहा था, मानो अपनी हाल की बातचीत के बारे में बिलकुल भूल गया हो। अचानक उसके पैरों के बीच से ख़रगोश के दो बच्चे निकलकर अग़ल-बग़ल भागे।

ख़रगोश फुरतीले तो थे, पर अलदाकेन से अधिक नहीं: वह बायीं ओर मुड़ा, फिर दायीं ओर दोनों के कान पकड़कर उठा लिया।

वह उन्हें घर ले आया। पत्नी बहुत प्रसन्न हुई:

"ख़रगोश के बच्चे थोड़ी देर को मुझे दीजिये! आपने इन्हें कहाँ पकड़ा?"

"बाद में सब बता दूँगा। तब तक सुनो मैं क्या कहता हूँ: चूल्हा जलाओ, खूब तर और स्वाद खाना बनाओ! आज हमारे यहाँ मरभुक्खा क़ारीनबाय आयेगा। उसका प्यार से स्वागत करना है और भरपेट खिलाना है। और जब वह पूछे कि तुम्हें खबर किसने दी, तो जवाब देना: 'खरगोश ने'। और उसे लंबकर्ण दिखा देना। मेरी बात याद रहेगी ना? मैं चलता हूँ!"

अलदार ने आश्चर्यचकित पत्नी के हाथों में एक खरगोश थमा दिया और दूसरे को उठाकर अपने साथ लेकर घर से बाहर लपका। पलक झपकते वह गांव क़ारीनबाय के यहाँ पहुँच चुका था।

थुलथुले बाय ने अलदार पर और उसके सीने से सटा रखे खरगोश पर तिरछी नज़र डाली और ज़हरीली हुंकार के साथ बोला:

"तुम्हारी चालबाज़ियों से क्या भरपेट खाने को नहीं मिल पाता, बेदाढ़ी? यानी, पेट नहीं भर पाता तो खरगोश के गोश्त का धंधा शुरू कर दिया!"

अलदर-कोसे ने शान से जवाब दिया:

"पानी से पहले पुल मत बांधो, बाय। मुंह चलाने से पहले ज़रा पूछ तो लेते कि मेरे पास खरगोश कैसा है। यह कोई ऐसा-वैसा खरगोश नहीं है—सधाया हुआ है। इसे कहीं भी क्यों न भेजो, कैसा भी काम क्यों न दो, सब जैसा कहो, वैसा ही करता है। इससे फुरतीला नौकर तो किसी बादशाह के पास भी नहीं होगा।"

बाय भौंचक रह गया।

"बेशर्म गपोड़िया! तुम किसकी आंखों में धूल झोंक रहे हो? क्या तुम्हें मेरे मिज़ाज का पता नहीं है? धोखेबाज़ के लिए मैं तुम्हें ऐसी मार लगाऊँगा कि छठी का दूध याद आ जायेगा!"

"अरे, अरे, गाली देना अच्छा नहीं होता, बाय," अलदार-कोसे ने उलाहना दिया। "लेकिन तुमसे और उम्मीद भी क्या की जा सकती है। जैसी तेरी तूमड़ी, वैसा तेरा गीत। मैं बुरा नहीं मानता—कुत्ता भौंके—क़ाफ़िला सिधारे। पर खरगोश के लिए दिल दुखता है। तुम इस पर भरोसा क्यों नहीं करते? कहो, तो दिखाऊं इसका कमाल?"

"दिखाओ!" बाय ने एक ठण्डी सांस लेकर कहा।

अलदार-कोसे ने खरगोश को अपने चेहरे तक उठाया और उसके कान में कहा:

"ऐ, तेज़रफ़्तार! पूरे ज़ोर से घर भागकर जा और घरवाली को बता दे कि मैं मोहतरम क़ारीनबाय को घर खाने पर ला रहा हूँ। हमारे आने से पहले घर की सफ़ाई कर ले और खाना तैयार कर ले!" और उसने खरगोश को घास पर छोड़ दिया।

खरगोश थोड़ी देर बैठा, फिर उसने कान हिलाये, एक-दो छलांग लगायीं और अपने को आज़ाद महसूस कर स्तेपी में ऐसे भागा, जैसे कोई शिकारी कुत्ता उसका पीछा कर रहा हो।

बाय ने पीछे से उसको हांक लगायी। अलदार ने बाय का कंधा छूकर कहा :

"उसे हांको मत: सधा हुआ खरगोश अपना काम जानता है। हम उसके पीछे-पीछे चलते हैं। जब तक हम पहुंचेंगे, बीवी ने तरह-तरह के खाने तैयार कर लिए होंगे। खाओगे, तो उंगलियां चाटते रह जाओगे!"

"ठीक है," बाय ने घूंसा दिखाया। "चलता हूँ तुम्हारे यहाँ, धोखेबाज़! तुम्हारी धोखेबाज़ी का परदाफ़ाश करने के लिए वक़्त और इज्ज़त गंवाने का मुझे कोई अफ़सोस नहीं होगा। याद करोगे इस दिन को!"

वे चल पड़े। बाय झल्लाता, हाँफ़ता हुआ चल रहा था, जब कि अलदाकेन खरगोश की तारीफ़ के पुल पर पुल बांधता रहा।

अलदार का तम्बू-घर दिखाई देने लगा। बाय ने ज़ोर से सांस खींची: पकते गोश्त की कितनी सौंधी गंध है! उसने लार सटकी और और ज्यादा झल्लाया।

वे तम्बू-घर में घुसे—वहाँ सब साफ़-सुथरा था, सलीक़े से था, बीचोंबीच सफ़ेदझक दस्तरखान लगा हुआ था और उस पर क्या-क्या नहीं था: उसे दस लोग भी न खा पायें!

बाय उसे भूखी नज़रों से देखने लगा, जब कि अलदाकेन ने अपने किसी प्रिय सम्बन्धी की तरह उसका हाथ पकड़कर उसे सम्मानित स्थान पर बिठा दिया और अपने ही हाथ से उसके मुंह में बेसबरमाक़ भर दिया।

पेटू बाय खाने पर ऐसा टूटा कि सांस तक लेना भूल गया, जब कि बनी-ठनी गृहणी, जो कि रिवाज के अनुसार अतिथि की बायीं ओर खड़ी थी, खाने पर खाना परोसती रही और बार-बार कहती रही :

"खाइये, खाइये, क़ारीनबाय!"

ठूंस-ठूँसकर खा चुकने के बाद बाय कुछ नरम पड़ गया। वह तकिये पर कोहनियां टिकाकर, खीसें निपोड़कर हाँफता हुआ बोला :

"तुम्हारी बीवी के हाथों में तो जादू है, अलदाकेन! तबीयत खुश हो गयी! मैंने ज़िन्दगी में कभी इतना नहीं खाया। इतनी ज़ोरदार खातिरदारी के कारण अपनी अनबन अब खतम हो गयी समझो, मैं तुम्हारी चालबाज़ियां माफ़ करता हूँ... फिर भी मुझे यह तो बताओ, दुलहन..." उसने गृहणी को सम्बोधित कर कहा, "तुम्हें मालूम कैसे हुआ कि तुम्हारा पति मेहमान को घर ला रहा है?"

अलदार की पत्नी मुस्कराकर एक क्षण के लिए परदे के पीछे ओझल हो गयी और एक खरगोश लिये वापस आयी।

"देखिये, कौन मोहतरम मेहमान के आने की खुशखबरी लेकर मेरे पास आया था!" और वह बड़े प्यार से खरगोश को सहलाने लगी।

बाय की मुख-मुद्रा बदल गयी।

"मुझे तुमसे बात करनी है, अलदाकेन! बाहर चलते हैं।"

जब वे दोनों अकेले यानी आमने-सामने रह गये, बाय ने सुलह के अंदाज़ में अलदार-कोसे का हाथ थाम लिया।

"लगता है, मैं तुम्हारे साथ बहस में ग़लती पर था, अलदार-कोसे। मुझे माफ़ कर दो। तुम्हारी बीवी ने खाना बहुत अच्छा पकाया है, पर तुम्हारा सधाया हुआ खरगोश तो उससे भी बेहतर है। लेकिन सच कहो, अलदाकेन, तुम जैसे ग़रीब के लिए सधा हुआ खरगोश रखना क्या ऐयाशी नहीं है?"

"शायद ऐसा ही है," अलदार-कोसे ने एक ठण्डी सांस ली। "धनी का तम्बू-घर तूफ़ान में भी खड़ा रह सकता है, पर ग़रीब के तम्बू-घर को तो बारिश की एक बूंद तक हानि पहुंचा सकती है। मैं तुम्हारा इशारा समझ गया, बाय। मैं तुम्हें खरगोश देने को तैयार हूं, तुम्हें वह जब पसन्द आ ही गयी है, तो उसे ले जाओ और अपने दोस्तों और दुश्मनों के सामने खूब डींग हांको। लेकिन मुझे बदले में क्या मिलेगा? एक सौ भेड़े दोगे?"

बाय का चेहरा एकदम उतर गया।

"तुम हद से ज़्यादा तो नहीं मांग रहे हो, अलदाकेन?"

"तुम्हें नहीं चाहिए, तो न सही..." और अलदार ने मुंह फेर लिया।

बाय कांखा और तैयार हो गया।

अगले दिन वह अलदार-कोसे के पास रेवड़ – सौ भेड़ें लेकर आया और अलदार ने बड़ी गम्भीरता से उसे खरगोश दे दिया।

"अपने नये मालिक की तू वैसे ही सेवा करना जैसे मेरी करता था!" उसने गद्गद कंठ से कहा और खरगोश को चूम लिया।

दो दिन बाद ही गुस्से से भूत हुआ क़ारीनबाय गालियाँ बकता अलदार-कोसे के तम्बू-घर में आ घुसा और उसने उसका गरेबान पकड़ लिया।

"ठग! वापस पटक सब, जो तूने अपने खरसैले खरगोश के बदले में लिया। नहीं दिया – नतीजा बुरा होगा!"

"शान्ति, शान्ति, मेहरबान बाय! तुम्हें क्या हुआ है?" अलदाकेन उसकी गिरफ़्त से निकल गया। "क्या मक्खी ने छींक दिया है? ज़रा ढंग से बताओ, क्या हुआ?"

"हुआ यह है कि तूने, बदमाश, मुझे बेवक़ूफ़ बना दिया और सारी स्तेपी में बदनाम कर दिया। मैं बारह बड़े बायों के साथ शिकार पर गया था। खरगोश को भी बोरी में बंद करके ले गया था। सारे बाय शेखी बघारने लगे – कोई अपने घोड़े की, कोई बन्दूक की, कोई उक़ाब की... तब मैंने बोरी में से खरगोश निकालकर कहा कि उनमें से किसी के पास न तो ऐसा अचम्भा है और न ही होगा। मैंने कहा: 'मेरा खरगोश मेरा हर हुक्म बजाता है।' बायों ने विश्वास नहीं किया। हमने मोटी रक़म की शर्त लगायी। तब मैंने खरगोश को हुक्म दिया: 'भागकर मेरे गांव जा और मेरी बीवी से कह कि वह दावत की पूरी तैयारी करके रखे, बाय बारह दोस्तों के साथ शाम तक घर पहुँच जायेगा।'

खरगोश भाग गया, और हम शिकार की तलाश में थोड़ी देर और भटकने के बाद गांव की ओर मुड़ गये, भूखे भेड़ियों की तरह। मैंने सबसे कहा: 'थोड़ी देर और सबर करो, बहुत बढ़िया खाना तुम्हारा इन्तज़ार कर रहा है।' घर पहुंचे, तो देखा: तम्बू-घर गंदा पड़ा है, सब बिखरा पड़ा है और चूल्हा ठण्डा है। मैंने बीवी से पूछा: 'सब मेहमानों के लिए खाना क्यों तैयार नहीं है, मैंने क्या कहलाया था? बीवी को काटो तो खून नहीं: 'आपने कब कहलवाया था? कहीं सपना तो नहीं देखा था?' 'क्या सधे हुए खरगोश ने तुमसे कुछ नहीं कहा?' 'कौन-सा खरगोश? होश में आओ!..' 'तो क्या सधा हुआ खरगोश तुम्हारे पास नहीं आया?' पत्नी कहने लगी: 'लोगो, पकड़िये इन्हें, बाय का दिमाग़ खराब हो गया है!' और मुझे छोड़कर भाग गयी। मेरे मेहमानों के हंसी के मारे पेटों में बल पड़े जा रहे थे, उन्हें भूख का ख़याल ही नहीं आया। 'वाह रे कारीनबाय,' वे उंगलियां उठा-उठाकर कहने लगे, 'तुमने आखिर हमें अपने सधे हुए खरगोश से अचम्भे में डाल ही दिया!.. देखा, तूने क्या कर डाला, निकम्मे? अब तुम्हारी वजह से मैं लोगों के सामने से नहीं निकल सकूंगा। मेरा माल वापस कर, ठग, और धोखेबाज़ी के लिए मैं तेरी और खबर लूंगा।"

"बाय, मेरे प्यारे बाय," अलदार ने सहृदयता से कहा, "मेरे सिर की क़सम, मुझे तुमसे सच्ची हमदर्दी है। लेकिन तुम्हारी असफलता में दोष शायद तुम्हारा ही है। बताओ, तुम खरगोश को रोज़ाना सुबह अस्पान-झपराक़* खिलाते थे?"

"अस्पान-झपराक़?" बाय का मुंह खुला रह गया। "क्या सचमुच उसे अस्पान-झपराक देनी चाहिए थी?"

"और नहीं तो क्या! क्योंकि बेवक़ूफ़ से बेवक़ूफ़ भी जानता है कि बिना इस जड़ी-बूटी के सधे हुए खरगोश एक दिन भी ज़िन्दा नहीं रह सकते। तुमने बेचारे जानवर को नाराज़ कर दिया, इसीलिए वह तुम्हें छोड़कर भाग गया।"

"लेकिन मुझे क्या पता था कि उसे अस्पान-झपराक देनी चाहिए थी!" बाय चिल्लाया।

"श ऽऽ!" अलदाकेन ने उसके मुंह पर हाथ रख दिया। "तुम इस बारे में किसी को मत बताना! इसका मतलब यह है कि तुम बेवक़ूफ़ से भी गये-गुज़रे हो। अगर तुम्हारे जान-पहचान के जाने-माने लोगों को इसका पता चल गया तो!"

बाय ने गुर्राकर कुछ कहा और थूककर तम्बू-घर से बाहर चला गया।

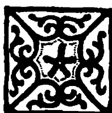
अलदार-कोसे और उसकी पत्नी शाम देर गये तक ठहाके लगाते रहे।

और शाम को जब स्तेपी के ऊपर नव-चन्द्र चमकने लगा, वे रेवड़ को उस ग़रीब के पास हांक ले गये, जिसे निर्दयी बाय ने कहीं का नहीं छोड़ा था।

---

* अस्पान-झपराक – दिव्य जड़ी-बूटी (शब्दश:)।





अलदार-कोसे की हिकमत

एक बार अलदार-कोसे किसी पहाड़ी चरागाह से गुज़र रहा था, अग़ल-बग़ल झांकता जा रहा था, खाने की जगह तलाश रहा था। अचानक उसने देखा: दो टेकरियों के बीच कोई एक हज़ार भेड़ों का रेवड़ चर रहा है, और उनका गड़रिया केवल एक है – गंदे चिथड़े पहने एक बुढ़ऊ।

अलदार ढलान से नीचे उतरा।

"किसकी भेड़ें चरा रहे हो, चचा?"

"किसी की भी हों, तुम्हें इससे क्या," गड़रिया रुखाई से गुर्राया!

"बेकार नाराज़ हो रहे हो, मोहतरम, मैंने तो तुमसे सच्चे दिल से पूछा है। मुझे तुम्हारे बुढ़ापे पर रहम आ गया था। आखिर इतने बड़े रेवड़ की रखवाली करना कोई मज़ाक़ तो है नहीं। तुम्हारा बाय बड़ा बेरहम है, खुदा करे उसका घर उजड़ जाये!"

बूढ़ा और ज़्यादा खीज उठा।

"लूका लगे तुम्हारे मुंह को! कौन है ऐसा बाय? नहीं चाहिए मुझे कोई बाय-वाय। मैं खुद बाय हूं।"

"तो यह बात है!" अलदार ने सीटी बजायी। "कोई बात नहीं, जिन्दगी में सब होता है। लालची कुत्ता भी भूखे कुत्ते से हड्डी छीन लेता है। पर फिर भी मेरी समझ में नहीं आता कि इतना माल-मता होते हुए भी तुम कुछ गड़रिये क्यों नहीं रखते हो।"

"गड़रियों को खाना खिलाना पड़ता है, क्या तुम्हें यह मालूम नहीं है?"

"तुम कहते हो तो ज़रूर सच होगा," अलदार ने स्वीकार किया, "पेट में पड़ा चारा, कूदने लगा बिचारा... फिर भी गड़रिये होने पर तुम ज़्यादा चैन से जी सकोगे। तुम्हारी उम्र में भेड़ों के पीछे दौड़-भाग करते बीमार पड़ते देर नहीं लगती।"

"बीमार पड़ते देर नहीं लगती, कहते हो..." बाय ने चिढ़कर कहा। "मैं तो न जाने कब से बीमार हूं।"

"क्या बीमारी है, तुम्हें चचा?" अलदार-कोसे ने काठी से नीचे झुककर पूछा।
बूढ़े ने टिमाक़ – लोमड़ी की खाल की टोपी उतार दी।
"देखा? सारी टांट पर फोड़े हो रहे हैं। खुजली के मारे नाक में दम रहता है। जितनी ज़ोर से खुजाता हूं, उतनी ही ज्यादा खुजली चलती है..."
अलदार ने सहानुभूतिपूर्वक सिर हिलाया।
"ओफ़, कितनी तकलीफ़ होती है, बाय!.. तुम्हें इलाज कराना चाहिए।"
कष्ट के मारे बूढ़े का चेहरा विकृत हो उठा।
"इलाज कराने के लिए पैसे खर्च करने पड़ते हैं। ठग हकीम मुफ़्त में तो तिनका भी नहीं देते। कुछ चालाक मेरे पास आते रहे हैं। एक इलाज के बदले में ऊंट मांगता है, दूसरा – तेज़ घोड़ा, तीसरा – घोड़ों का पूरा झुण्ड... मैंने सबको भगा दिया। इतना नुक़सान भुगतने से तो बेहतर है कि मेरा सिर सड़ता रहे।"
"प्यारे बाय!" अलदाकेन ने अचानक हाथ उठाये। "अल्लाह का शुक्रिया अदा करो, – तुम्हारी क़िस्मत खुल गयी!"
"चीखते क्यों हो, फिट्टे मुंह! भेड़ों को डरा दिया! कैसे खुल गयी मेरी क़िस्मत, बताओ?"
"इसलिए, बाय, क्योंकि मैं भी हकीम हूँ। लेकिन मैं वैसा हकीम नहीं हूँ, जैसे कि सब होते हैं। मैं लोगों की किसी लालच से नहीं, अपने संकल्प के कारण मदद करता हूँ। किसी भी रोग का इलाज कर सकता हूँ..."
बाय की आश्चर्य से आंखें फटी की फटी रह गयीं।
"फिर भी क्या यह नहीं बताओगे, नौजवान, कि इलाज करने का तुम क्या लोगे?" उसने अन्त में पूछ ही लिया। जब कि मन में वह सोच रहा था; "बेकार मुझे बनाने की कोशिश कर रहे हो, प्यारे। छोटे मुंह बड़ी बात!"
"क्यों नहीं बताऊंगा," अलदार-कोसे ने सहर्ष उत्तर दिया। "परवरदिगार से सिर्फ़ लम्बी उम्र और चैन की मौत माँगूंगा, मुझे और कुछ नहीं चाहिए।"
बाय को लगा जैसे उसके कानों को धोखा हुआ है।
"सच?"
"मैं तुम्हें धोखा क्यों दूंगा?" अलदार ने कंधे उचकाये। "लोग फ़ायदे की खातिर झूठ बोलते हैं, अपना नुक़सान कराने की खातिर झूठ बोलने से क्या फ़ायदा।"
"यह हकीम ज़रूर पागल है," बाय ने सोचा, "लेकिन बेवक़ूफ़ की बेवक़ूफ़ी से ही तो अक़्लमंद का ख़ज़ाना भरता है। अल्लाह मुझे सचमुच छप्पर फाड़कर दे रहा है। यही तो मौक़ा है अपना उल्लू सीधा करने का। जब अपनी गांठ से कुछ जा ही नहीं रहा है, तो क्यों न इलाज करा लूं?" हकीम के इलाज से फ़ायदा हो, तो भी अच्छा है, और न भी हो, तो क्या, अपना माल तो अपने पास ही रहेगा..."

और बुढ़ऊ तुरन्त बदल गया।

"ओ मेरे मेहरबान," वह चापलूसी करने लगा, "तुम्हारी सारी उम्मीदें और ख्वाहिशें पूरी हों! मुंह फेरकर मत जाओ, बूढ़े का इलाज कर दो, उसे तकलीफ़ों से छुटकारा दिला दो, अपनी दवा का जादूई असर दिखा दो!.."

"मिन्नत मत करो," अलदार-कोसे कूदकर घोड़े से उतरा, "मैं बिना कहे तुम्हारी मदद करूंगा। एक मेढ़ा काटो!"

बाय चौंक उठा और पीछे हटने लगा।

"मेढ़ा काटूं? अभी-अभी तो तुम कह रहे थे कि तुम मुफ़्त में इलाज करोगे!"

"मैं अपनी बात हज़ार बार दोहराने को तैयार हूं! लेकिन मेढ़ा मैं अपने नहीं, तुम्हारे फ़ायदे के लिए मांग रहा हूँ। खुजली का इलाज करने के लिए भेड़ के मेदे की ज़रूरत है। और इलाज शुरू करने से पहले मरीज़ को भरपेट भेड़ का गोश्त खाना भी ज़रूरी है। वरना कोई फ़ायदा नहीं होगा।"

बाय सोच में पड़ गया। किन्तु उसी समय उसकी टांट में इतनी तेज़ खुजली चली कि वह ऐसे सिर झटकने लगा, जैसे कुकुरमखियों का सताया बछेड़ा। अलदार ने यह देख लिया।

"हां तो, बाय, इलाज कराओगे? क्या तुम्हें अपनी बदबूदार टोपी अपनी जान से ज़्यादा प्यारी है?"

बाय नाक सुड़कता रेवड़ की ओर बढ़ा। उसने थोड़ा कम मोटा मेमना चुना, उसे काटकर साफ़ किया, टोपी अलदार-कोसे को थमा दी और लोथ को देग में डाल दिया। गोश्त पक गया।

"खाओ, बाय!" अलदार-कोसे ने हुकम दिया। "खाओ, खाओ, मेरी तरफ़ मत देखो: मैं गोश्त मुंह में नहीं डालूंगा।"

बाय ने सन्देहपूर्वक अलदार की ओर तिरछी नज़रों से देखते हुए गोश्त का टुकड़ा काटा और लालच के मारे उसे पूरा का पूरा निगल गया।

"खाओ, और खाओ!" अलदार ज़ोर देने लगा।

"बस!" बाय ने आस्तीन से मुंह पोंछा। "कल और परसों भी तो सूरज निकलेगा। अगर मैं गोश्त थोड़ा-थोड़ा करके खाऊं, तो यह कई दिनों के लिए काफ़ी होगा..."

अलदार खिलखिलाकर हंस पड़ा।

"ओफ़, कितने लालची हो तुम, बाय! एक भेड़ को साल भर खाने की आस में हो? नहीं, भई, डेढ़ पाव आटे की पुल पर रसोई नहीं बनायी जाती। ख़ैर, यह तुम्हारी मर्ज़ी है, मुझे तुम्हें समझाने की फ़ुरसत नहीं है। गड्ढे में उकड़ूं बैठ जाओ, टोपी उतार फेंको और हिलो नहीं!"

बाय ने वैसा ही किया। अलदार ने भेड़ का पेट चाकू से चीरा और उसे बाय के सिर पर टोपी की तरह ओढ़ाने लगा।

"तुम क्या कर रहे हो?" बाय पिनपिनाया। "ऐसे तो मेरा दम घुट जायेगा!.."

"सबर रखो, सबर, मोहतरम," अलदार चिल्लाया, "सबर रखो और बार-बार ज़ोर से मंतर दोहराओ: "हवा जो साथ लायी, साथ उड़ा ले गयी! सात हज़ार बार यह दोहराओगे और बिलकुल ठीक हो जाओगे। देखो, गिनती में चूकना नहीं!"

बाय सहसा गड्ढे में से निकलने लगा।

"पर मेरी भेड़ें? उन्हें कौन चरायेगा?"

"फ़िक्र मत करो, मैं थोड़ी देर चरा लूंगा।"

"तुम पर भरोसा कैसे करूं! तुम उन्हें भगा ले जाओगे! क्योंकि मुझे तो कुछ नज़र ही नहीं आ रहा है..."

"नज़र नहीं आ रहा है, तो क्या, सुनाई तो दे रहा है। जब तक भेड़ें आस-पास चरती रहेंगी, शोर सुनाई देता रहेगा। और शोर बंद हुआ, तो क्या तुम्हें मालूम नहीं पड़ेगा?"

बाय चुप हो गया: हकीम ठीक कहता है, हालांकि वह है कुछ अजीब आदमी। और वह तंग गड्ढे में सिर पर भेड़ का पेट ओढ़े दोहराने लगा:

"हवा जो साथ लायी, साथ उड़ा ले गयी! हवा जो साथ लायी, साथ उड़ा ले गयी!.."

तब अलदाकेन ने भेड़ों को पुकारते हुए देग में से गोश्त निकालकर छककर खाया, बचा-खुचा गोश्त और भेड़ की आंतें सारी चरागाह में बिखेर दीं। फिर उसने रेवड़ को एक जगह इकट्ठा किया और अपने घोड़े पर बैठ उसे हांकता हुआ पहाड़ और घाटियां पार करके न जाने कहाँ चम्पत हो गया। केवल इतना ही मालूम हुआ कि उस दिन के बाद से कई ग़रीबों के यहाँ, जिनके पास कभी अपने जानवर नहीं रहे थे, भेड़ें हो गयीं – किसी के पास पांच, किसी के पास दस, और कई बच्चोंवाले परिवारों के यहाँ तो उससे भी ज़्यादा।

रेवड़ जैसे ही चरागाह से सरका, चारा देखकर भेड़ के बचे-खुचे गोश्त पर चारों ओर से हज़ारों चिड़ियां आकर टूट पड़ीं, पंख फड़फड़ाती शिकार की ख़ातिर आपस में जूझने लगीं। बाय को लगा जैसे उसकी भेड़ें आस-पास चर रही हैं। वह ध्यान से सुनता, फिर अपना मंतर जपने लगता, फिर सुनता, फिर जपता।

"हवा जो साथ उड़ा ले गयी!.."

शाम होने पर गांव से औरतें भेड़ों को दुहने वहाँ आयीं। उन्होंने इधर देखा, उधर देखा – भेड़ों का कहीं नाम-निशान नहीं था, स्तेपी के ऊपर केवल चिड़ियों के झुण्ड मंडरा रहे थे, और कहीं ज़मीन के नीचे से बाय की आवाज़ आती सुनाई दे रही थी। उन्होंने गड्ढे में झांककर देखा और सब एक साथ ज़ोर से चिल्ला उठीं:

"तुम यहाँ क्यों बैठे हो? मरने जा रहे हो या किसी से छिपकर बैठे हो? तुम्हारे सिर पर यह क्या है? हवा के बारे में यह क्या रट लगा रखी है? भेड़ें कहां ग़ायब हो गयीं? कोई मुसीबत तो नहीं आ गयी है?"

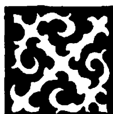
आवाज़ें सुनकर बाय बुरी तरह घबरा उठा, गड्ढे से निकलकर भागा और भेड़ का पेट सिर से उतार फेंका। तब सारा मामला फ़ौरन उसकी समझ में आ गया।

"मदद करो!" वह गड्ढे के चारों ओर भागने लगा। "लूट लिया मुझे! मदद करो!"

उसकी दुहाई सुनकर आस-पास के गांवों से बांके नौजवान लाठियां लिये भागे आये, पर सारा मामला मालूम पड़ने पर उन्होंने लाठियां झुका लीं। दुष्ट की कौन सहायता करना चाहता है? नौजवान केवल बाय की खिल्ली उड़ाने लगे।

"वह हकीम अलदार-कोसे के सिवा कोई नहीं होगा। और किस के दिमाग़ में ऐसी खुराफ़ात आ सकती है? उसने कंजूस से हम सब की तरफ़ से बदला ले लिया। 'हवा जो साथ लायी थी, साथ ले गयी...' तुम रोओ मत, बाय, तुम्हारा लूटपाट का माल अभी कई सालों के लिए और काफ़ी होगा!"

बाय ने मुंह फुला लिया और चुप हो गया। उसे खीज के मारे सिर खुजलाने के सिवा और कुछ करने को नहीं रह गया था। उसने टांट को छुआ – यह क्या? फ़ोड़ों का नाम भी न था! सब के सब ग़ायब हो गये थे। गंज पर एक भी फुंसी न थी, गंजा सिर तरबूज़ सरीखा चिकना हो गया था। आप चाहे विश्वास करें, चाहे न करें, पर गपोड़े अलदाकेन ने खरसैले बाय का इलाज आख़िर कर ही दिया।



अलदार-कोसे ने ग़रीब नौजवान की शादी करवायी

एक बाय था। था तो वह बिलकुल उल्लू का पट्ठा, पर अपने को महान कलावंत समझता था। जब वह गाल फुलाकर और आँखें निकालकर सबिज़ग़ी* बजाना शुरू करता, लोग स्तेपी में भागने लगते, कुत्ते इतने ज़ोर से भौंकने लगते, मानो उन्हें आस-पास भेड़िये की गंध आ गयी हो। पर बाय का ख़याल था कि उससे अच्छी सबिज़ग़ी दुनिया में और कोई नहीं बजा सकता।

उस बाय की एक रूपसी बेटी थी। मलिक नाम के एक दिलेर नौजवान को उससे प्रगाढ़ प्रेम हो गया। किन्तु मलिक के पास कुछ नहीं था – न ढोर, न धन, जबकि बाय बेटी के लिए महर की बहुत मोटी रक़म मांगता था। एक बार उस नौजवान को अपनी बेटी के आस-पास जमा भीड़ में देखकर बाय उस पर चिल्लाने लगा:

"दफ़ा हो जा, छिछोरे, गांव से और फिर कभी मुझे नज़र मत आना! भिखमंगे और बड़े आदमी की बेटी का क्या मेल! मैं उससे तेरी शादी उसी सूरत में करूंगा, जब मैं मर रहा होऊंगा, और तू मेरी जान बचा लेगा!.."

दुःख और विरह के मारे नौजवान स्तेपी में चला गया, और वहाँ उसकी मुलाक़ात अलदार-कोसे से हो गयी।

"मुंह क्यों लटका रखा है, दोस्त?" अलदार-कोसे ने पूछा। "सूरज ने धरती को गरमाना बंद कर दिया है या धरती ने जानवरों का पेट भरना बंद कर दिया है?"

मलिक ने ईमानदारी से सारा क़िस्सा उसे बता दिया।

"दिल छोटा मत करो," अलदार-कोसे बोला, "रूपवती तुम्हारी ही होगी। मुझपर भरोसा रखो। मुलायम दूब पर शाम तक लेटे रहो, तब तक मैं बाय की मिज़ाजपुरसी कर आता हूँ।"

बाय को ऐसे मेहमान के आने की ज़रा भी आशा नहीं थी।

---

* सबिज़ग़ी – कज़ाख़ों की बांसुरी।

"कैसे तशरीफ़ लाये, चुलबुले?"

अलदाकेन ने झुककर सलाम बजाया।

आपसे एक विनती करने आया हूँ, मोहतरम बाय!"

"विनती?" बाय की भौंहें सिकुड़ गयीं।" कैसी विनती?"

"आपसे, बाय, मुझे सबिज़ग़ी पर कुछ सुनाने की हिमाक़त कर रहा हूँ।"

बाय जीवन्त और प्रसन्न हो उठा।

"मैं देखता हूँ, अलदार-कोसे, तुम बेवक़ूफ़ नहीं हो, लायक़ आदमी हो। तम्बू-घर में तशरीफ़ लाओ। मैं बड़ी ख़ुशी से तुम्हें बजाकर सुनाऊंगा। तुम सारी स्तेपी में घूम चुके हो, तरह-तरह की चरागाहों में रह चुके हो, हर तरह के लोगों से मिल चुके हो। तुम मेरा वादन सुनकर मुझे बताओ कि क्या मेरी जोड़ का कोई दूसरा कलावंत है?"

बाय जब तक बोलता रहा, अलदार-कोसे ने सारे तम्बू-घर पर नज़र दौड़ा ली। कितना ठाठदार तम्बू-घर था! हर जगह क़ालीन बिछे हैं, मसनदें लगी हैं, मख़मली और रेशमी कपड़े हैं, दीवार पर घोड़े का क़ीमती साज़ टंगा था, और पलंग के सिरहाने पर नक्काशीदार संदूक़ची रखी थी, जिस पर मोटा ताला लगा हुआ था।

"बिना संदूक़ची लिये यहाँ से जाने का नाम भी नहीं लूँगा," अलदाकेन ने सोचा। "बाय का सारा धन ज़रूर उसी में रखा है।"

बाय ने सबिज़ग़ी उठाकर होंठों से लगायी और पूरी ताक़त से उसके छेद में फूंक मारी। बांसुरी से कर्णकटु चीख़ निकली, और गांव के लोग फ़ौरन सिर पर पैर रखकर स्तेपी में भागने लगे, कुत्ते ज़ोर-ज़ोर से भौंकने लगे। बाय बजाता रहा, जब कि अलदाकेन प्रशंसापूर्ण भाव से सुनता हुआ जवाब से चटकारे लेता रहा।

"क्यों, कैसा लगा?" बाय ने बांसुरी मुंह से हटाकर कहा।

"मेरे प्यारे बाय," अलदार-कोसे ने क़मीज़ के पल्ले से झूठमूठ आंसू पोंछते हुए उत्तर दिया, "आपका दिव्य वादन सुनकर मैं तो बिलकुल भूल ही गया कि मैं धरती पर हूँ, मुझे लगा जैसे मेरे ऊपर जन्नत की हूरें गा रही हैं। आप सचमुच अनोखे कलावंत हैं!"

बाय ने आत्मसन्तोष से दाढ़ी पर हाथ फेरा।

"तुम मुझे बहुत अच्छे लगे, अलदार-कोसे," उसने कहा, "मैं तुम्हें ज़रूर अपना पुराना चोग़ा भेंट करूंगा।"

"शुक्रिया, शुक्रिया, मेरे अनमोल बाय! लेकिन," अलदार-कोसे ने आगे कहा, "आप नाराज़ मत होना, हुज़ूर, मेरी बात सुनकर: मैं एक ऐसे आदमी को जानता हूँ, जो इससे अच्छा बजाता है।"

बाय की भौंहें सिकुड़ गयीं और उसने ग़ुस्से भरी नज़र मेहमान पर डाली।

"उस कलावंत के वादन में ऐसी क्या ख़ूबी थी?"

"वह संगीतकार आंखें मूंदे लगातार तीन घंटे तक सबिज़ग़ी बजा सकता है।"

"बस, इतनी ही देर तक?" बाय ने ठहाका लगाया। "अरे, मैं तो उंगलियों पर नज़र डाले बिना पांच घंटे तक बजाने को तैयार हूँ। विश्वास नहीं होता? तो फिर बांध दो मेरी आंखों पर पट्टी।"

अलदाकेन ने ज़रा भी देर नहीं की। और बाय आंखों पर पट्टी बांधे पहले से भी ज़्यादा लगन से सबिज़ग़ी बजाने लगा। स्तेपी में लोग और भी ज़्यादा दूर भाग गये, कुत्ते पहले से भी ज़्यादा ज़ोर से भौंकने लगे। उधर अलदार-कोसे ने नमदे पर दबे पांव चलते हुए भारी संदूक़ची उठायी, उसे कंधे पर लादा और चुपचाप तम्बू-घर से बाहर निकल गया।

बाय जीतोड़ कोशिश करता हुआ शाम हुए तक बांसुरी बजाता रहा, जब तक कि थककर चूर न हो गया।

"क्यों, कैसा रहा अलदाकेन?" उसने दम लेकर पूछा।

लेकिन कोई जवाब नहीं मिला।

बाय ने आंखों से पट्टी हटाई और सहसा ज़ोर से चीख़ उठा: तम्बू-घर में न तो अलदार-कोसे ही था और न ही उसकी प्यारी संदूक़ची!

बाय के तम्बू-घर के इर्द-गिर्द लोगों की भीड़ लग गयी। लोग हीं-हीं करते दबी हंसी हंस रहे थे, मज़ाक़ उड़ा रहे थे।

"बाय बजाते-बजाते सारी दौलत गंवा बैठा!"

बाय सारी रात रोता-चिल्लाता रहा:

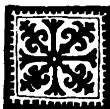
"हाय मैं मर गया! हाय, मैं लुट गया! हाय, मैं बरबाद हो गया!"

सुबह होते ही मलिक बाय के पास आया और उसने बिना कुछ कहे उसके सामने नक्क़ाशीदार संदूक़ची रख दी।

बाय एक क्षण के लिए स्तब्ध रह गया। वह पागल की तरह संदूक़ची की तरफ़ लपका और उसका ढक्कन खोल डाला: संदूक़ची ऊपर तक सिक्कों से ठसाठस भरी थी। बाय कांपते हाथों से सिक्के गिनने लगा: सारा धन सही-सलामत था।

"मलिक, मेरे प्यारे मलिक," बाय खुशी के मारे सुबकने लगा, "तुमने मेरी ज़िन्दगी मुझे लौटा दी। तुम मेरी बेटी से शादी कर लो! अब यही सही। पर दहेज की उम्मीद मत रखो। कुछ नहीं मिलेगा। तुम्हें सिर्फ़ अपनी सबिज़ग़ी दे सकता हूँ। बहुत अच्छा वादन है! जितना चाहो, बजाओ! मज़े से रहो। मुझे अब इसकी ज़रूरत नहीं रही। भाड़ में जाये!"

इस प्रकार मलिक की शादी बाय की बेटी से हो गयी। बाय अपने अन्तिम समय तक न जान पाया कि उसकी संदूक़ची नौजवान के पास कैसे पहुंची। लेकिन आपको और हमें तो यह अच्छी तरह मालूम है।



फटे चोग़े के बदले में पोस्तीन

ठण्ड और हवा, बर्फ़ की आंधी और तूफ़ान यानी हूत – फ़रवरी का भयानक महीना आ पहुंचा। लोग सदियों से कहते आये हैं: "हूत आया, चारे का अकाल – जूत पड़ा।" ठण्ड में ढोरों की भी मुसीबत: खराब मौसम में जाड़े के पड़ाव के छप्पर तले हालत खराब हो जाती है, और खुली स्तेपी में तो उससे भी बुरी।

बर्फ़ की तेज़ आंधी में – काठी पर बैठे सवार को घोड़े की अयाल भी नज़र नहीं आ रही थी – अलदार-कोसे मरियल घोड़े पर बैठा धंसान बर्फ़ पर घिसटता चला जा रहा था। घोड़ा क़दम-क़दम पर बर्फ़ के ढेरों में फंसकर घुटनों के बल गिर रहा था, वह उसे कितना ही हांकता, पर उससे तेज वह नहीं चल पा रहा था।

अलदार के सिर पर फटी टोपी थी, कंधों पर फटा चोग़ा और पैरों में – नमदे के फटे-पुराने मोज़े। बेचारा बुरी तरह ठिठुर गया था, सिकुड़ रहा था, हथेलियों पर फूंक मार रहा था, ठण्ड और रास्ते को कोसता जा रहा था, पर फिर भी हिम्मत नहीं हार रहा था।

"केवल मुरदे को ही अच्छा मौक़ा मिलने की आस नहीं रहती है," अलदाकेन सोचने लगा।

उसने यह सोचा ही था कि हवा ने उसके सामने फैली कोहरे की चादर चीर दी, देखा: स्तेपी में उसका रास्ता काटता कोई घुड़सवार चला आ रहा है। उसका घोड़ा बर्फ़ानी ढलानों पर फुरती से चला आ रहा था। यानी घोड़ा बढ़िया था। और ऐसा घोड़ा बाय के सिवा और किसके पास हो सकता है। अलदाकेन खुश हो गया:

"यही है अच्छा मौक़ा! शिकार बिना हांके जाल में फंसने चला आ रहा है!"

उसने झटके से टोपी गुद्दी पर खिसकायी, चोग़े का सीना खोल दिया और लगाम ऐसे ढीली छोड़कर, मानो उसे ज़रा भी जल्दी न हो, पूरी ऊंची आवाज़ में गाना गाना शुरू कर दिया।

घुड़सवार एक दूसरे के बराबर पहुंचे। अलदार पलक झपकते समझ गया कि उसका अनुमान ग़लत नहीं था: नसलदार, मोटे-ताज़े अरग़ामाक़* पर शानदार पोस्तीन पहने तोंदलतुंदाला थलथल बाय हचकोले खा रहा था।

"क्या अर्रा रहा है?" बाय ने घोड़ा रोका। "ठण्ड से हालत ख़राब हो रही है क्या?"

"मुझे तो बिलकुल भी ठण्ड नहीं लग रही है," अलदार-कोसे ने ख़ुशी-ख़ुशी जवाब दिया। "सच कहूँ, तो मुझे ताज़ा हवा में बहुत अच्छा लग रहा है। इसके बिना तो मेरा गर्मी के मारे दम ही निकल गया होता।"

"बकवास बंद कर!.." बाय ने उसे डपट दिया। "मैंने इतना बढ़िया पोस्तीन पहन रखा है, फिर भी मेरी हड्डियां तक ठिठुर रही हैं। क्या सचमुच तुम्हारा चिथड़ा लोमड़ी की खाल से भी ज़्यादा गरम है?"

"मेहरबान," अलदार कृपापूर्वक मुस्कराया, "तुम जन्म से तो मूर्ख नहीं हो, पर तुम्हें अनुभव ज़रूर कम ही है। क्या तुम्हें मालूम नहीं है कि मेरा चोग़ा कैसा है?"

"फ़ौरन यह बताने के लिए कि तुम्हारे चोग़े में चाहे जब एक सौ पैवंद लगाये जायें उसमें दो सौ छेद होंगे, और कितने अनुभव की ज़रूरत है?" बाय गुर्राया।

"ओफ़, कैसी नासमझी की बातें करते हो, मेरे बाय!" अलदार ने उलाहना देते हुए-से भौंहें सिकोड़ीं। "अंधा क्या जाने वसन्त की बहार! तुमने मेरे चोग़े में बहुत-से छेद तो देख लिये, पर इतना नहीं समझ पाये कि इन छेदों में चमत्कारी शक्ति छिपी है। मेरा चोग़ा कोई मामूली चोग़ा नहीं, जादूई है। मुझ पर हवा और ठण्ड का कोई असर नहीं होता: वे एक छेद में घुसती हैं और फ़ौरन दूसरे से बाहर निकल जाती हैं। मुझे तो अपने बहुमूल्य चोग़े में कैसे भी कड़ाके के जाड़े में गरमी के दिन जैसा गरम महसूस होता है।"

बाय सुन रहा था और बराबर मुँह फाड़े जा रहा था।

"वाह, कितना बढ़िया चोग़ा है!" उसे ईर्ष्या हो रही थी। "इस बुद्धू से इसे कैसे हथियाऊं..."

"तुम्हारा पोस्तीन बहुत बढ़िया है, बाय," अलदार-कोसे उस समय सोच रहा था, "पर तुम्हारे कंधों पर वह वैसे ही नहीं टिका रह सकेगा, जैसे फूटी सुराही में पानी।"

बाय कुछ देर सोचता रहा, नीली पड़ी नाक से सूं-सूं करता रहा और एकाएक कह उठा:

"अदला-बदला करना चाहते हो?" मैं तुम्हें लोमड़ी की खाल का पोस्तीन देता हूँ, और तुम मुझे – जादूई चोग़ा।"

"चोग़ा दे दूँ?" अलदार ने व्यंग्यपूर्वक बाय पर नज़र डाली और टोपी उतारकर उससे झलने लगा। "नहीं, प्यारे बाय, बेकार की बातों में समय व्यर्थ गँवाने से तो बेहतर होगा कि तुम अपने पोस्तीन में पूरी तरह जमने से पहले अपने घर चले जाओ।"

---

* अरग़ामाक़ – घोड़े की बढ़िया नसल।

बाय और ज़्यादा जोश में आ गया :

"अगर तुम्हें पोस्तीन कम क़ीमत का लगता है, तो मैं ऊपर से रक़म दूंगा। स्तेपी में अकाल पड़ा हुआ है। पैसा हर जगह काम आ जायेगा।"

"मुझे पैसों की क्या ज़रूरत है? फक्कड़ तो हवा-पानी पर ही गुज़र कर लेता है।"

"ज़िद मत करो," बाय उसे मनाने लगा। "ऊपर से घोड़ा और देता हूँ। देखो, कितना बढ़िया घोड़ा है : मेरे सारे घोड़ों में सबसे अच्छा है। चोग़ा उतारो, पोस्तीन पहनो, मरियल घोड़े से उतरो और अरग़ामाक़ पर सवार हो जाओ! चलो, देर मत करो!.."

"अक्लमंद जब तक अक़्ल लड़ाता है, बेधड़क अपना काम कर जाता है। और हमारे अलदाकोन से ज़्यादा बेधड़क दुनिया में कोई हो सकता है? पांच मिनट बीतते-बीतते वह बाय के तेज़ घोड़े पर सवार होकर बाय के पोस्तीन में बदन गरमाता बर्फ़ीले रेगिस्तान में सरपट दूर जा चुका था।

"तुमने यह पोस्तीन कहाँ से ख़रीदा? यह घोड़ा कहां ख़रीदा?" अलदार-कोसे के मित्र उससे बाद में पूछने लगे।

अलदाकेन ने केवल शरारती ढंग से आंख मारी :

"इस बारे में तुम्हें वही बाय बतायेगा, जो मेरे फटे चोग़े के लालच में आ गया था। मैं तो बस इतना जानता हूँ : डील-डौल से ऊंट होने से तो थोड़ी-सी अक़्ल होना बेहतर है।"



अलदार-कोसे और तीन देव

उस वर्ष गर्मियों में स्तेपी में शांति थी: न दुश्मनों ने छापे मारे, न परस्पर-संहारक युद्ध हुए और न ही पशुओं की चोरी। किन्तु अचानक वहां विपत्ति का पहाड़ टूट पड़ा: हिमाच्छादित पर्वत पार के किसी अज्ञात देश से तीन देव वहां आ धमके। उन्होंने आकर पहाड़ के तले अपना विशाल तम्बू-घर लगाया और अपने लिए खाना ढूंढ़ने लगे।

लेकिन जब खाना आस-पास ही हो, तो उसे ढूंढ़ने की जरूरत ही क्या:

चर रहे हैं घाटी में घोड़े, है कितनी अच्छी बात!
चरते हैं वहां भेड़ों के गल्ले, है कितनी अच्छी बात!
हैं उछलते-कूदते बकरे, है कितनी अच्छी बात!
सर झुकाये ऊँट हैं चरते, है कितनी अच्छी बात!

देव पशुओं के झुण्डों पर टूट पड़ने लगे और उन्हें चट करने लगे। जानवर चिल्लाने लगे, चरवाहे उन्हें छुड़ाने लपके, पर दैत्यों से भला वे पार पा सकते थे! देवों ने मरभुक्खों की तरह ठूंस-ठूंसकर खा लिया और पेट भरने पर उन्हें खेलने की सूझी: लगे हज़ारों साल पुरानी। हज़ारों मनों की चट्टानें उखाड़-उखाड़कर इधर से उधर फेंकने।

उनके इस खेल के कारण पृथ्वी कराह उठी, सागरों में प्रचण्ड लहरें उठने लगीं, पशु बिलों और मांदों से भाग निकले, पक्षी अपने घोंसले छोड़कर उड़ने लगे, हरी-भरी चरागाहें तपती स्तेपी बनने लगीं।

बुज़ुर्ग, परिवारों व गांवों के मुखिया एकत्र होकर इस मुसीबत से छुटकारा पाने, देवों को शान्त करने के उपाय सोचने लगे। वे अपनी-अपनी दाढ़ियों पर नज़रें जमाये दिन भर सोचते रहे, दूसरे दिन भी, तीसरे दिन भी ...

पर जब तक वे सोचते रहे, अलदार-कोसे अपने काम में जुट गया। उसने अपने जूतों के तले बदले, कमीज़ बदली, एक छड़ी तराशी, सफ़र के लिए एक थैली में ताज़ा छेना भरा और सीधा पहाड़ की तलहटी में देवों के पड़ाव की ओर चल पड़ा।

रास्ते में मिले लोग उसे मनाने लगे:

"लौट जाओ, अलदार-कोसे, बेकार मारे जाओगे... हमारे साथ इस विपत्ति से दूर भाग चलो, अपनी जान बचाओ!"

जवाब में अलदार-कोसे ने ठहाका लगाया:

"गीदड़ ज़रा-सी आहट होते ही दुम दबाकर भागता है, और शेर आख़िरी सांस तक लड़कर मरता है!"

"तुम जब देवों को देखोगे, मसख़रे, तो कुछ और ही तरह से बोलोगे। फ़ौरन, दोस्त, कचिया जाओगे।"

पर अलदार अपनी बात पर अड़ा रहा:

"अगर दब्बू को बहुत देर तक सताया जाये, तो वह बहादुर हो जाता है, अगर कमज़ोर को बहुत खिजाये, तो वह भी पहलवान बन जाता है।"

"देवों को सिर्फ़ बहादुरो से नहीं मिलने का।"

"पत्थर से आदमी का सिर फूट सकता है, पर वह अपने हाथों से उसके टुकड़े-टुकड़े भी कर सकता है। कभी सुना यह क़िस्सा? देव मेरा बाल भी बांका नहीं कर सकेंगे, क्योंकि हर बहादुर में कोई न कोई ख़ूबी ज़रूर होती है।"

अलदार-कोसे चलता रहा, चलता रहा। हिमाच्छादित पहाड़ नज़र आने लगे। पहाड़ की ओर से एक चलते-फिरते पहाड़-सा देव उसकी तरफ़ आ रहा था।

दानव को देखते ही अलदाकेन की ऊपर की सांस ऊपर और नीचे की नीची रह गयी। लेकिन उसने मन-ही-मन कहा:

"कायर हज़ार बार मरता है, साहसी – केवल एक बार। मेरा क्या बिगड़ना है? ओखली में सिर दिया, तो मूसलों से क्या डरना..."

देव ने रुककर कमर पर हाथ रखे और झुककर आदमी को देखने लगा। अलदार भी रुक गया और वह भी – केवल नीचे से ऊपर की ओर – देव को ताकने लगा। ताकता रहा, ताकता रहा और एकाएक ठहाका मारा:

"हा-हा-हा! हा-हा-हा!"

देव ने जन्म से ही कभी मनुष्य की हँसी नहीं सुनी थी।

"तुम क्या कह रहे हो?" वह दहाड़ा।

"कुछ नहीं। तुम पर हंस रहा हूँ।"

"मेरी हंसी उड़ा रहे हो? मुझमें हंसी उड़ाने की क्या बात है?"

"तुम मुझे बहुत दुबले-पतले लग रहे हो, देव।"

"तो तुम क्या मुझसे ताक़तवर हो?"

"तुमसे ताक़तवर होऊं या न होऊं, पर मैं पत्थर को हाथों से दबाकर पानी निकाल सकता हूँ।"

यह कहकर अलदार-कोसे झुका, मानो कोई पत्थर उठा रहा हो, जब कि अपनी मुट्ठी में छेने का काफ़ी बड़ा टुकड़ा उसने पहले से छिपा रखा था। उसने छेने को ज़ोर से दबाया: उसकी उंगलियों से छाछ की बूंदें रिसने लगीं।

"ज़रा तुम भी ऐसा करके दिखाओ, देव!"

देव ने एक पत्थर ढूँढ़ा और उसे एक मुट्ठी में भींचने लगा, फिर दोनों हाथों में, देर तक जूझता रहा, वह पसीना-पसीना हो गया, पर पत्थर से पानी निकला ही नहीं। उसने पत्थर दूर फेंक दिया और बोला:

"मैंने देख लिया, तुम बहुत ताक़तवर हो। हमें लड़ने की क्या ज़रूरत है, बहादुर? चलो, मेरे साथ चलते हैं। तुम मेरे प्यारे मेहमान बनोगे।"

दोनों देव के तम्बू-घर पहुंचे। कितना बड़ा तम्बू-घर था! बैलगाड़ी में बैठकर भी तीन दिन में उसका चक्कर नहीं काटा जा सकता था और सरपट घोड़ा दौड़ाकर दिन भर में भी नहीं।

दोनों भीतर गये। अलदार-कोसे ने नम्रतापूर्वक दुआ-सलाम की, जब कि देव अपने साथियों के सामने उसकी ताक़त और दिलेरी के तारीफ़ के पुल बांधने लगा।

देवों ने अलदार को सम्मानित स्थान पर बिठा दिया और उल्टी टेकरी जैसे देग में से पूरा का पूरा सांड़ निकालकर अतिथि का सत्कार करने लगे।

अलदाकेन ने खाने से इनकार कर दिया।

"धन्यवाद, मैं सुबह ही छककर खा चुका हूँ। सौ सांड़, हज़ार मेढ़े चटकर चुका हूँ। आप लोग खुद खाइये, ताकत जुटाइये। नहीं तो मुझे आप बेचारों को देख-देखकर तरस आता है..."

देवों के दाँत चलने लगे, – पलक झपकते विशाल देग खाली हो गया। भरपेट खा लेने पर देवों ने मेहमान को ताज़ा हवा में खेलकर दिल बहलाने का निमंत्रण दिया।

"खेलना मुझे बहुत पसंद है," अलदार-कोसे बोला, "अगर खेला ईमानदारी से जाये। लेकिन अगर किसी ने खेल में मेरे साथ बेईमानी की तो उसकी शामत आ जायेगी!.."

"तुम घबराओ मत, प्यारे मेहमान, हमारे खेल में चालबाज़ी की बिलकुल भी ज़रूरत नहीं है: जो सबसे ज़्यादा भारी चट्टान उठाकर सबसे दूर फेंकेगा, वही जीता माना जायेगा।"

पहले देव ने उनके तम्बू-घर जितनी बड़ी एक चट्टान उठाकर तीर की उड़ान की दूरी तक फ़ेंक दी। दूसरे देव ने उससे दुगुनी बड़ी चट्टान उठाकर उससे दुगुनी दूरी तक फेंक दी। तीसरे ने उससे भी बड़ी चट्टान उठाकर तीर की उड़ान की तिगुनी दूरी तक फेंक दी।

पृथ्वी कांप उठी, पानी में प्रचण्ड लहरें उठने लगीं, काली धूल आसमान तक फैल गयी।

"अब तुम्हारी ताक़त दिखाने की बारी है, बहादुर," देवों ने अलदार से कहा।

अलदार ने जंभाई लेकर अंगड़ाई ली,

"यह भी कोई खेल है? आप लोगों को तो बस गांव के छोकरों के साथ गुल्ली-डण्डा खेलना चाहिए। मुझे तो अगर कुछ फेंकना ही पड़े, तो चट्टानें नहीं, बल्कि पूरा का पूरा पहाड़ फेंकूंगा।"

"पूरा पहाड़?!" देव चौंक उठे।

"हाँ, पूरा पहाड़," अलदार-कोसे ने पुष्टि की। "आप लोग बस दोस्तों के नाते मुझे सलाह दीजिये कि मैं उसे किस तरफ़ फेंकूँ। पूर्व की तरफ़ फेंकता हूँ, तो वह दिन का रास्ता रोक देगा, फिर हमेशा रात रहा करेगी। पश्चिम की तरफ़ फेंकूँ, तो रात का रास्ता रुक जायेगा, हमेशा दिन रहा करेगा, फिर बुरी बात होगी। उत्तर में फेंकूँ? पहाड़ ठण्डी हवा का रास्ता रोक देगा: सारे जीव गर्मी के मारे मर जायेंगे। दक्षिण में फेंकूँ तो गरम हवा का रास्ता रुक जायेगा: पृथ्वी सदा के लिए बर्फ़ में जकड़ जायेगी। सबसे अच्छा होगा – पहाड़ को ऊपर उछालूँ!"

तीनों देव फ़ौरन अलदार कोसे के पैरों में गिर पड़े:

"ओ, नामवर बहादुर, हम तुम्हें जीता मानते हैं, तुम बस, हम पर दया करके, पहाड़ को ऊपर मत फेंको!"

"नहीं," अलदार ज़िद करने लगा। "मुझे किसी की दान की हुई जीत नहीं चाहिए। फेंकने की बारी मेरी है। जिधर चाहूंगा, उधर ही फेंकूंगा।"

"हमारे जहांपनाह," देव और भी रुआंसे स्वर में गिड़गिड़ाने लगे, "हम पर रहम करो! पहाड़ का, जो तुम्हारी इच्छा हो, करो, पर हमें पहले अपने घर जाने दो।"

"छी-छी-छी," अलदार देवों को शर्मिन्दा करने लगा, "आप लोगों ने इसी दम पर ईमानदारी से खेलने का वादा किया था! कहाँ गया आप लोगों का ईमान? लोग कहते हैं: 'दानी दान की हुई चीज़ का नाम भी नहीं लेता, और बहादुर अपने वचन से कभी नहीं मुकरता।' आपका वादा तो राख जैसा है: जिधर हवा चले, उधर ही उड़ चली... खैर, ठीक है। आपने भले ही बेईमानी की हो, फिर भी आपको मैं जहाँ चाहें, वहाँ जाने देता हूँ। हमारे यहाँ ऐसा रिवाज है: परदेसी को ऐसी बात के लिए भी माफ़ कर देना चाहिए, जिसके लिए कोई अपने सगे पिता को भी माफ़ न करे। बस ज़रा जल्दी करिये। नहीं तो पहाड़ आसमान में फेंकने को मैं तड़प रहा हूँ, मेरे हाथ खुजला रहे हैं!.."

और अलदाकेन आस्तीनें चढ़ाने लगा। आस्तीनें चढ़ाने में देर नहीं लगती, पर उन्हें पूरी चढ़ाने तक देवों का वहाँ नामो-निशान भी नहीं रहा।

उधर सफ़ेद दाढ़ीवाले बुज़ुर्ग अभी भी माथों पर बल डाले बैठे अपनी तरकीबें ही सोच रहे थे।

"अस्सलाम-अलैकुम, दानिशमंद बुज़ुर्गो!" उन्हें अचानक अलदार का विनोदी स्वर

सुनाई दिया। "हालांकि मुझे, बेदाढ़ी को इतनी सम्मानपूर्ण सभा में आना शोभा नहीं देता, पर ऐसा भी तो होता है कि आदमी ज़रूरत पड़ने पर, जूते पहने-पहने ही पानी में घुस जाता है। बहुत सोच चुके आप लोग! मिठाई खिलाइये! भयानक देव अब हमारे देश में नहीं रहे!"

बुज़ुर्गों ने ग़ुस्से में दाढ़ियाँ हिलायीं।

"झूठ कहते हो, गप्पी! क्या यही वक्त मिला है मज़ाक करने का!"

अलदार-कोसे हंसने लगा:

"ग़रीब कुछ भी क्यों न कहे, सब उसे झूठ ही बताते हैं! आप अपने कानों पर विश्वास नहीं कर सकते, तो कम-से-कम आंखों पर तो कर लीजिये।"

बुज़ुर्ग तम्बू-घर से बाहर निकले, देखा: हर तरफ़ हर्ष और उल्लास व्याप्त है: चरवाहे जानवरों के झुण्ड हांकते, गाते, बजाते पहाड़ी चरागाहों को चले जा रहे हैं। स्तेपी में फिर शान्ति स्थापित हो गयी।

चर रहे हैं घाटी में घोड़े, है कितनी अच्छी बात!
चरते हैं वहाँ भेड़ों के गल्ले, है कितनी अच्छी बात!
हैं उछलते-कूदते बकरे, है कितनी अच्छी बात!
सर झुकाये ऊँट हैं चरते, है कितनी अच्छी बात!
चैन से हैं लोग अब सारे, है कितनी अच्छी बात!



सारी दुनिया उनकी आंखों के आगे घूम गयी और खान की राजधानी भी दिखाई दी। लेकिन यह क्या? महल के आस-पास के रास्ते शोकमग्न [illegible] से भरे थे। वहां किसी को दफ़नाया जा रहा था। मृत को भव्य ताबूत में कंधों पर उठाकर ले जाया जा रहा था, और उसके पीछे-पीछे आंसू बहाता और दुःख से दोहरा हुआ खान चल रहा था। तीनों भाई सब समझकर सिहर उठे: रूपवती अयस्लू मर गयी।

मझले भाई ने तुरन्त अपना जादूई क़ालीन बिछा दिया, और तीनों नौजवान एक दूसरे को पकड़कर उस पर बैठ गये। क़ालीन बादलों में उड़ चला और पलक झपकते खानज़ादी के खुले मज़ार के पास जा उतरा। भीड़ एक ओर हट गयी। खान ने डबडबायी आंखों से आकाश से अचानक उतरे तीन नौजवानों की ओर देखा, लेकिन समझ न सका कि क्या हो रहा है। उधर छोटा भाई मृत सुन्दरी के पास लपककर पहुँचा और सोने की कंघी उसके बालों में फेरने लगा।

अयस्लू ने एक ठण्डी सांस ली, हड़बड़ाकर उठ खड़ी हुई। वह पहले जैसी ही सुन्दर नहीं, बल्कि उससे भी कहीं ज्यादा सुन्दर हो गयी थी। खान ने बेटी को सीने से लगा लिया। लोग खुशी के मारे चिल्ला उठे। सब खुशियां मनाते, झूमते-गाते महल की ओर रवाना हो गये।

खान ने उसी दिन एक शानदार दावत दी और उसमें राजधानी के सारे वासियों को अपने प्रिय अतिथियों की तरह आने का निमंत्रण दिया। बाज़ार में जूठन खाकर गुज़ारा करनेवाले बूढ़े फ़क़ीर को भी निमंत्रित किया गया। तीनों भाई सम्मानित स्थान पर बैठे थे और अयस्लू स्वयं ही उन्हें खाना व क़िमिज़* परोस रही थी। तभी बांके नौजवानों ने फिर उससे अपना निर्णय बताने का अनुरोध किया कि वह उनमें से किसे अपना पति चुनना चाहती है।

अयस्लू दुःखी हो उठी, उसकी बरौनियों पर आंसू की बूंद ढुलक आयी।

"मैं आप में से एक से प्रेम करती हूँ, पर परीक्षा के बाद भी मेरी नज़रों में आप सभी बराबर हैं, क्योंकि आपमें से हरेक ने मुझे अद्वितीय उपहार लाकर दिया है।"

उसने अपने पिता से सलाह और नसीहत मांगी। खान कुछ सोचकर बोला:

"अगर शीशा न होता, जिसे बड़ा भाई खोजकर लाया है, तो आपको, बांके नौजवानो, अयस्लू की मौत का पता नहीं चल पाता; मझले भाई के खरीदे क़ालीन के बिना आप जनाज़े में समय पर नहीं पहुँच पाते; और छोटे भाई की कंघी के बिना आप मेरी बेटी को जिला नहीं पाते। मैं सहर्ष आपको अपना आधा धन देने को तैयार हूँ, पर अयस्लू की शादी किससे करूँ, यह फ़ैसला करना मेरे बस का नहीं है।"

---

* क़िमिज़ – घोड़ी के ख़मीर उठे दूध से बना पेय।

भीड़ में से अचानक बूढ़े फ़क़ीर की आवाज़ आयी :

"आलीजाह, इजाज़त हो, तो मैं कुछ कहूँ?"

ख़ान उस दिन ख़ुश और कृपालु था।

"कहो," उसने उसे अनुमति दे दी।

"सारी परिस्थितियों का मूल्यांकन करके मैं भाइयों का फ़ैसला इस प्रकार करता," फ़क़ीर ने कहा, "अयस्लू उसी की हो जाए, जिसने अपने उपहार की सबसे महंगी क़ीमत चुकाई हो।"

ख़ान ने स्वीकृति में सिर हिला दिया।

"ऐसा ही हो!"

"मैंने शीशे के लिए छः सौ अशरफ़ियां चुकाईं," बड़े भाई ने कहा।

"मैंने क़ालीन के लिए एक हज़ार अशरफ़ियां चुकाईं," मझले भाई ने कहा।

"मैंने भी कंघी के लिए एक हज़ार अशरफ़ियां चुकाईं और..."

छोटा भाई बोलता-बोलता चुप हो गया और उसने सिर झुका लिया।

"चुप मत रहो!" ख़ान चीख पड़ा। "सच-सच बताओ!"

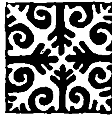
तब युवक ने चोग़े के पल्ले खोल दिये और सबने उसके सीने का गहरा घाव देख लिया।

अयस्लू ने चीख मारकर अपना चेहरा हाथों से ढक लिया। ख़ान ने वीर को गले लगाकर कहा :

"मैं अपनी बेटी की शादी तुम्हारे साथ करूँगा! तुम ही मेरे दामाद और उत्तराधिकारी हो जाओगे।"

और मेहमानों की ओर पलटकर उसने सबको सुनाकर एलान किया कि वह दोनों बड़े भाइयों को अपने वज़ीर बना रहा है और बूढ़े फ़क़ीर को, जिसने बुद्धिमत्तापूर्ण सलाह दी, अपना बड़ा क़ाज़ी।

इसके बाद दावत में और जान आ गयी। वह दावत तीस दिन तक चली, चालीस दिन उसकी याद में दावतें होती रहीं और उसे लोग आज तक नहीं भूले हैं।



ख़ान सुलेमान और बायगीज़

ख़ान सुलेमान के महल यों तो बहुमूल्य वस्तुओं से भरे पड़े थे, पर उस के लिए सोने की एक अंगूठी सबसे ज़्यादा मूल्यवान थी, जिसे वह कभी उंगली से नहीं उतारता था। वह अंगूठी जादुई थी: जो भी उस अंगूठी को पहनता, वही पशु-पक्षियों तथा पौधों की भाषा समझने लगता और सारे प्राणी उसके अधीन हो जाते।

एक बार शिकार करते समय सुलेमान को चेहरा सोते के शीतल जल से ताज़ा करने की इच्छा हुई। लेकिन जब वह अंजलि से पानी पीने लगा, उसकी प्रिय अंगूठी उंगली से खिसक गयी और तेज़ी से तल की ओर जाने लगी। ख़ान तल से मूल्यवान अंगूठी निकालने के लिए सोते में कूदने ही वाला था कि पानी में एक भीमकाय मच्छ चमका और वह अंगूठी निगलकर, पूंछ फटकारकर भंवर में ग़ोता लगा गया।

सुलेमान अंगूठी खो बैठने से बहुत दुःखी हुआ सोते के किनारे-किनारे चलने लगा। चलता रहा, चलता रहा, अचानक उसने ख़ुद को एक अकेली झोंपड़ी के सामने पाया, जिसके आगे मत्स्य-जाल सूख रहे थे।

रात होने लगी थी। ख़ान झोंपड़ी में गया। देहली लांघने पर उसे किसी की नकसुरी आवाज़ सुनाई दी:

"अहा, हमारी क़िस्मत खुल गयी! अब भर-पेट खाना खायेंगे!"

ख़ान को काटो तो ख़ून नहीं: झोंपड़ी के बीचोंबीच रक्तपिपासु जालमाउइज़-केम्पीर * खड़ी थी और अपने बड़े-बड़े नाख़ूनोंवाले हाथ उसकी ओर बढ़ा रही थी। वह आत्म-रक्षा के लिए शिकारी छुरा निकालने ही लगा था कि तभी दूसरी आवाज सुनाई दी – बुलबुल के कूजन जैसी मधुर।

---

* जालमाउइज़-केम्पीर – चुड़ैल बुढ़िया।

"आगंतुक को मत छुओ, मां! देखो, यह कितना सुन्दर और राजसी है! शायद ख़ुद ख़ान सुलेमान भी इससे ज़्यादा सुन्दर नहीं होगा।"

ख़ान आवाज़ की ओर मुड़ा और उसके दिल का कंवल खिल उठा: चूल्हे के आगे क़ालीन पर इतनी रूपसी कन्या बैठी थी कि उसकी ख़ातिर कोई भी मौत से जूझने को तैयार हो जाता।

जालमाउइज़-केम्पीर बोली:

"तुम सौभाग्यशाली हो, अजनबी, तुम मेरी बेटी बुलुक़ को पसन्द आ गये। मुझे तुम पर रहम आ गया। लेकिन यहाँ से जल्दी से जल्दी चले जाओ। मेरा बुढ़ऊ बस आने ही वाला है। वह आ गया तो तुम्हें कोई नहीं बचा सकेगा।"

सुलेमान ने उत्तर दिया:

"जब तक ख़ूबसूरत बुलुक़ मेरे साथ हाथ में हाथ डाले नहीं जायेगी, मैं यहाँ से टस से मस भी नहीं होऊँगा।"

तभी सोते में उफान आ गया, धरती गड़गड़ा उठी और झोंपड़ी कांप उठी। लगा जैसे तूफ़ान आ गया हो। जालमाउइज़-केम्पीर ने जल्दी-जल्दी सारे कोने छान मारे और सन्दूक खोलकर सुलेमान को बुलाया:

"सन्दूक में घुस जा, पागल! देर मत कर!"

सन्दूक का ढकना बन्द होते ही झोंपड़ी में बूढ़ा नरभक्षी–देव झूमता हुआ घुस आया।

"आदमी की गंध आ रही है!" वह अपना दैत्याकार गला फाड़कर दहाड़ा।

उसकी पत्नी उसे गालियां देने लगी:

"तेरा दिमाग़ बिलकुल ख़राब हो गया, बेवक़ूफ़ बुड्ढे! यह तो उस नौजवान की बू है, जिसे हमने कल खाया था। और आज तो हमारे यहाँ कोई आया ही नहीं।"

रात बीत गयी। पौ फटते ही देव मछली पकड़ने सोते पर चला गया और शीघ्र ही ढेर सारी मछलियां लेकर लौट आया।

"नाश्ता तैयार करो," उसने पत्नी और पुत्री को आदेश दिया, "मैं फिर शिकार पर जाऊँगा। शायद दिन के खाने के लिए कोई बांका नौजवान या उसका घोड़ा पकड़ में आ जाये।"

वह चला गया। जालमाउइज़-केम्पीर ने सुलेमान को सन्दूक से बाहर निकलने दिया और उसे दरवाज़े की ओर धकेलने लगी।

"दूर हो जा मेरी आंखों से, बिनबुलाये मेहमान! तेरे मारे मेरी जान पर आ बनी है!"

किन्तु सुलेमान टस से मस नहीं हुआ और केवल सुन्दरी बुलुक़ को एकटक देखता रहा।

पिता की आज्ञानुसार युवती ताज़ा मछली साफ़ कर रही थी। उसने बड़ा मच्छ काटा

और अचानक चीख मारकर उसके पेट में से सोने की अंगूठी निकाल ली। अंगूठी उसके हाथ से छूटकर सीधे सुलेमान के पैरों के पास आ गिरी। ख़ान ने उसे उठाकर उंगली में पहन लिया। और वह तत्क्षण पूर्ववत् बलवान और बुद्धिमान हो गया।

"मैं ख़ान सुलेमान हूँ!" उसने ख़ुश होकर कहा। "तुम बुलुक़, मेरी बेगम और दुनिया की मलिका बनना चाहती हो?"

और बुलुक़ मलिका बन गयी। अब वह रेशमी गद्दों पर सोने लगी, सोने-चांदी के थालों में खाने लगी और मखमल व ज़री के कपड़े पहनने लगी।

ख़ान ने उसे किसी चीज़ की कमी नहीं महसूस होने दी और सारे राज-काज भूलकर केवल पत्नी को किसी तरह ख़ुश रखने की ही सोचने लगा।

एक बार ख़ान ने रूपवती से कहा:

"तुम चाहो, बुलुक़, तो मैं तुम्हारे लिए सोने और हीरे-जवाहरात का महल बना सकता हूँ।"

"मुझे सोने और हीरे-जवाहरात का महल नहीं चाहिए," बुलुक़ ने नख़रीली अदा के साथ आंखें नचाते हुए जवाब दिया। "अगर तुम मुझे प्यार करते हो, मेरे मालिक, तो मेरे लिए चिड़ियों की हड्डियों का महल बना दो।"

सर्वशक्तिमान सुलेमान ने दुनिया भर की चिड़ियों को तुरंत अपने सामने हाज़िर होने और मलिका की इच्छानुसार नम्रतापूर्वक मृत्यु दण्ड के लिए तत्पर रहने के लिए आवाज़ दी।

बिना कूजते, बिना चहचहाते अभागे पक्षियों के झुण्ड के झुण्ड अपने भाग्य के निर्णय की विनम्रतापूर्वक प्रतीक्षा करते सुलेमान के महल में उड़कर आये: चमत्कारी अंगूठी में ऐसी शक्ति थी।

बुलुक़ ने उनकी गिनती करके दुःखी स्वर में ख़ान से कहा:

"एक चिड़िया ने आपकी अवज्ञा की है, आलीजाह, और आपकी आज्ञानुसार यहाँ उपस्थित नहीं हुई है। उसका नाम है – बायगीज़*।"

सुलेमान आग-बबूला हो उठा। उसने काले कौवे को विश्वासघाती बायगीज़ को ढूँढ़कर उसके पास पहुँचाने का आदेश दिया।

कौवा तीन दिन तक उड़ते रहने के बाद ख़ाली हाथ लौट आया, उसे कहीं भी दोषी पक्षी का सुराग़ न मिल सका। तब ख़ान ने वेगवान् बाज़ को उसे ढूँढ़ने भेजा।

बाज़ ने बायगीज़ को पहाड़ पर एक चट्टान के नीचे देख लिया। अवज्ञाकारी चिड़िया चट्टान के नीचे दुबकी हुई थी और उसे न चोंच से बाहर खींचा जा सकता था, न ही पंजों से।

---

* बायगीज़ – छोटी-सी चिड़िया।

बाज़ उससे बोला :

"आदरणीया बायगीज़, आप क्या कर रही हैं?"

"सोच रही हूँ।"

"क्या? क्या कहा? मैंने सुना नहीं।"

बायगीज़ ने चट्टान के नीचे से गरदन बाहर निकाली, और बाज़ उसे पकड़, पंजों में दबोचकर ख़ान के पास ले गया।

बायगीज़ गा उठी :

बनी जान पर, आई मुसीबत दिल पर मेरे
दुशमन के पंजे हैं जाने कितने नुकीले!

बाज़ ने चिड़िया को सुलेमान के क़दमों में पटक दिया, लेकिन बायगीज़ ख़ान के सामने भी अपना गीत गाती रही :

पंख न हों तो हूँ मैं गौरय्या के बराबर
पोर से उंगली के भी छोटा है मेरा सर
मांस भी मुझ में, रक्त भी मुझ में बस रत्ती भर
रहेगी भूखी छोटी चील भी मुझ को खाकर।

सुलेमान ने गुस्से में उस पर पैर रख दिया :

"बायग़ीज़, तू क्यों मेरे पहली बार बुलाते ही हाज़िर नहीं हुई?"

बायगीज़ ने उत्तर दिया :

"मैं सोच रही थी।"

"किस चीज़ के बारे में सोच रही थी?"

"मैं सोच रही थी कि धरती पर पहाड़ ज़्यादा हैं या घाटियाँ।

"तू किस निर्णय पर पहुँची?"

"पहाड़ ज़्यादा हैं, अगर उन ढेरों को भी पहाड़ मान लिया जाये, जो स्तेपी में छछूंदरों ने लगाये हैं।"

"और किस चीज़ के बारे में सोच रही थी?"

"मैं यह भी सोच रही थी कि ज़िन्दा ज़्यादा हैं या मरे हुए।"

"तुम्हारे ख़याल से कौन ज़्यादा हैं?"

"मरे हुए ज़्यादा हैं, अगर सोये हुए लोगों को भी मृत मान लिया जाये।"

"और क्या सोच रही थी?"

"और सोच रही थी कि पुरुष अधिक हैं या स्त्रियां।"

"फिर किस निर्णय पर पहुँची?"

"स्त्रियां, आलीजाह, पुरुषों से काफ़ी ज़्यादा हैं, अगर उनमें उन भीरुओं को भी शामिल कर लिया जाये, जो अपना बौद्धिक संतुलन खोकर स्त्री की हर सनक पूरी करने को तत्पर हो जाते हैं।"

बायगीज़ के इतना कहते ही सुलेमान ने हाथ से आंखें ढक लीं और शर्म से लाल हो उठा: खान नन्ही-सी चिड़िया का इशारा समझ गया। उसने तुरन्त अपनी सपक्ष प्रजा को अपने-अपने घोंसलों में लौट जाने को कहा, और वे कूजते, चहचहाते उड़ चले।

इस प्रकार पक्षियों की हड्डियों का महल नहीं बन पाया। और पक्षियों ने उन्हें अकाल मृत्यु से बचाने के लिए बुद्धिमान बायगीज़ को सदा के लिए अपना क़ाज़ी चुन लिया था।



सपना, जो सच हो गया

सरसेम्बाय अनाथ था। न उसका पिता ज़िन्दा रहा था, न ही माता। उसका जीवन दु:ख भरा था। उसने एक बाय * की भेड़ें चराने की नौकरी कर ली। बाय ने उसे शरद् ऋतु में एक लंगड़ी भेड़ देने का प्रलोभन दिया। नन्हा गड़रिया इस पर भी ख़ुश था। वह भेड़ें चराता रहा, बाय की जूठन खाता रहा और शरद् ऋतु के आने की प्रतीक्षा करता रहा।

"पतझड़ आते ही," वह सोचता रहता, "मुझे लंगड़ी भेड़ मिल जायेगी, तब मुझे भी गोश्त का स्वाद चखने को मिल जायेगा ..."

एक बार सरसेम्बाय भेड़ों को एक नयी चरागाह में हांककर ले जा रहा था। सहसा झाड़ियों में से एक भेड़िया निकल आया और बोला :

"भेड़ दो! नहीं दोगे, तो एक की जगह दस को फाड़ डालूँगा।"

"मैं तुझे भेड़ कैसे दे सकता हूँ, भेड़िये? क्योंकि यह रेवड़ मेरा नहीं है। ऐसे काम के लिए बाय मुझे जान से मार डालेगा।"

भेड़िया सोच में पड़ गया और फिर बोला :

"मुझे बहुत तेज़ भूख लगी है। तुम बाय के पास जाकर उससे मेरे लिए एक भेड़ मांगो।"

सरसेम्बाय ने मालिक के पास जाकर उसे पूरा क़िस्सा सुनाया। बाय ने हिसाब लगाया: दस भेड़ें एक से ज़्यादा होती हैं; एक भेड़ दस से सस्ती पड़ेगी। उसने गड़रिये से कहा :

"भेड़िये को एक भेड़ ले लेने दो, लेकिन बिना चुने। उसकी आंखों पर रूमाल बांध देना। जिसे वह दबोच ले, वही उसी की हो।"

सरसेम्बाय ने जैसी आज्ञा मालिक ने दी, वैसा ही किया।

---

* बाय – ज़मींदार।

भेड़िया आंखों पर रूमाल बांधे रेवड़ के बीच घुस गया और उसने एक भेड़ का गला फाड़ दिया। लेकिन ठीक ही कहते हैं: "करम रेख न मिटै, करै कोई लाखों चतुराई।" ऐसा ही हुआ। भेड़िये ने संयोगवश उसी लंगड़ी भेड़ को फाड़ डाला, जिसे मालिक ने सरसेम्बाय को देने का वादा किया था। सरसेम्बाय फूट-फूटकर रोने लगा। भेड़िये को उस पर दया आ गयी।

"अब कुछ नहीं किया जा सकता, गड़रिये," वह बोला। "शायद तुम्हारे भाग्य में ऐसा ही बदा था। मैं तुम्हारे लिए भेड़ की खाल छोड़ रहा हूँ। शायद तुम उसे किसी को अच्छी क़ीमत पर बेच दो।"

सरसेम्बाय ने भेड़ की खाल उठा ली और उसे कंधे पर आड़ी डालकर रेवड़ को आगे हांक ले चला।

सामने से भूरे क़दमबाज़ पर बाय आ रहा था। वह रकाबों पर पैर जमाये खड़ा होकर भेड़ों व मेढ़ों को गिनने लगा। उसने देखा – सारा रेवड़ सही-सलामत है, बस सरसेम्बाय की लंगड़ी भेड़ ग़ायब है। तभी सरसेम्बाय भी आ पहुँचा। वह रेवड़ के पीछे-पीछे हाथ में लाठी थामे चल रहा था और उसकी आंखों से आंसू बह रहे थे।

बाय इतने ज़ोर से ठहाका मारकर हंस पड़ा कि उसके तले क़दमबाज़ भी लड़खड़ा गया।

"वाह, कैसा गड़रिया है मेरा! खूब संभाल की अपनी भेड़ की! अरे, तू तो मेरी भेड़ों का भी सफ़ाया करवा देगा... दूर हो जा मेरी आंखों से! मेरा-तेरा हिसाब साफ़ हो गया।"

और सरसेम्बाय धीरे-धीरे अपनी लाठी की छाया की दिशा में स्तेपी में चला गया।

वह एक दूर के शहर में जा पहुँचा और उसके बाज़ार में गया। वह काफ़ी देर तक भीड़ में भटकता रहा, पर किसी ने भी उससे भेड़ की खाल की क़ीमत नहीं पूछी। केवल शाम ढले वह एक आदमी को उसे तीन छोटे सिक्कों में बेच पाया।

"तीन सिक्कों की मैं तीन रोटियाँ ख़रीद लूँगा, तीन रोटियाँ तीन दिन के लिए काफ़ी होंगी। फिर जो हो सो हो!.."

वह रोटी की दुकान की तरफ़ बढ़ा ही था कि रास्ते में उसे एक बीमार बूढ़ा भीख मांगता मिल गया। सरसेम्बाय ने एक सिक्का उसे दे दिया और दो अपने पास रख लिये।

बूढ़े ने सिर हिलाया और झुककर ज़मीन से मुट्ठी-भर रेत उठाकर लड़के की ओर बढ़ाई।

"ले," उसने कहा, "अपनी नेकी के बदले में इसे रख ले।"

सरसेम्बाय ने सोचा कि फ़क़ीर पागल है, लेकिन उसने वृद्ध को ठेस नहीं पहुँचानी चाही और रेत लेकर अपनी जेब में डाल ली।

रात आयी। घुप अंधेरा छा गया। ग़रीब गड़रिया कहाँ सिर छुपाये? उसने कारवां-

सराय में रात गुज़ारने की इजाज़त मांगी। मालिक ने उसे रहने दिया, लेकिन रात गुज़ारने का भाड़ा मांगा, और सरसेम्बाय को एक सिक्का उसे देना पड़ गया।

मालिक ने अपने सारे किरायेदारों को क़ालीनों और नमदों पर सुला दिया, पर सरसेम्बाय को नंगी ज़मीन पर सोने को कहा। भूखे बालक को नीन्द अच्छी नहीं आयी और उसे ठण्डी सख़्त ज़मीन पर बुरे सपने आते रहे।

पौ फटे कारवां-सराय में शोर होने लगा, लोग अहाते में चलने-फिरने लगे। परदेसी सौदागर सफ़र की तैयारी में ऊंटों पर माल लादते हुए आपस में बातें करने लगे।

उनमें से एक कहने लगा:

"मैंने रात में एक बहुत सुन्दर सपना देखा। लगा जैसे मैं ख़ान की तरह क़ीमती पलंग पर लेटा हूँ, मेरे ऊपर उजला सूरज झुका हुआ है और मेरे सीने पर उजला चांद खेल रहा है..."

सरसेम्बाय सौदागर के पास जाकर बोला:

"मैंने अपने सारे जीवन में कभी कोई सुन्दर सपना नहीं देखा। अपना सपना मुझे बेच दीजिये, साहब! ताकि यह सपना मेरा हो जाये।"

"सपना बेच दूँ?" व्यापारी हंस पड़ा। "ठीक है। लेकिन इसके बदले में तू मुझे क्या देगा?"

"मेरे पास एक सिक्का है... यह लीजिये।"

"ला, इधर ला तेरा सिक्का!" सौदागर चिल्लाया। "सौदा तय हुआ। अब से मेरा सपना तेरा हो गया, छोकरे!"

सौदागर और भी ज़ोर से हंस पड़ा, और उसके साथ ही कारवां-सराय में मौजूद सारे लोग भी हंस पड़े। नन्हा गड़रिया अपनी ख़रीद पर ख़ुश होकर, उछलता-कूदता अहाते से बाहर भाग गया...

तब से सरसेम्बाय ने न जाने कितने रास्ते नापे, न जाने कितने गांव उसके रास्ते में पड़े। लेकिन उसे न तो कहीं नौकरी मिली, न कहीं पनाह और न ही एक प्याली मट्ठा।

जाड़ा पड़ चुका था। सरसेम्बाय अंधेरी रात में स्तेपी में अपनी सांसों से उंगलियों को गरमाता भटक रहा था। तेज़ हवा उसे एक ओर से दूसरी ओर धकेल रही थी, हिम-झंझावात उसे एक ही जगह में फिरकी की तरह घुमा रहे थे। सरसेम्बाय रो पड़ा और आँसू उसके गालों पर जम गये। वह निढाल होकर बर्फ़ के ढेर पर बैठ गया और निराशा में कहने लगा:

"इतने कष्ट उठाने से तो बेहतर है, भेड़िये मेरे टुकड़े-टुकड़े कर दे!"

उसका इतना कहना था कि उसी क्षण अंधेरे में से एक बड़ा-सा भेड़िया निकल आया: उसके बाल खड़े थे, आंखें दहक रही थीं!

"आखिर आ ही गया शिकार पकड़ में!" भेड़िया गुर्राया। "मेरे बच्चे कितने खुश होंगे!"

"मुझे मार डाल, भेड़िये," लड़के ने धीरे से कहा, "कम-से-कम तेरे बच्चे तो खुश होंगे। मेरे लिए तो जीने से मर जाना बेहतर है ..."

लेकिन भेड़िया अपनी जगह से टस से मस नहीं हुआ, बस लड़के को एकटक देखता रहा। अन्त में वह बोला :

"क्या तुम वही सरसेम्बाय है, जिसने मुझे लंगड़ी भेड़ दी थी? सलाम, मैं तुम्हें पहचान गया। डरो मत, मैं तुम्हें हाथ भी नहीं लगाऊँगा, बल्कि हो सकता है, ज़िन्दा रहने में तुम्हारी मदद करूँ। मेरी पीठ पर सवार हो जाओ और खूब कसकर पकड़े रहो!"

सरसेम्बाय उसकी पीठ पर सवार हो गया, और भेड़िया उसे धंसनेवाली बरफ़ के ढेरों पर से भागता ले चला। घने वन के किनारे तक उसे पहुँचाकर भेड़िया बोला :

"उधर आग दिखाई दे रही है, सरसेम्बाय? वहाँ अलाव जल रहा है। वहाँ डाकुओं के गिरोह ने पड़ाव डाला था। अब वे बहुत दूर जा चुके हैं और जल्दी वापस नहीं लौटेंगे ... तुम अलाव के पास जाकर ताप लो। सुबह तक मौसम शायद कुछ गरम हो जाये... अलविदा!"

भेड़िया चला गया और सरसेम्बाय जल्दी से आग के पास पहुँच गया। उसके बदन में कुछ गरमी आयी और थोड़ी ताक़त भी — उसने अलाव के पास डाकुओं द्वारा फेंकी हुई हड्डियाँ चचोड़ ली थीं। वह इतना खुश था कि उसका मन गाने को करने लगा। ग़रीब को खुश करने के लिए थोड़े की ही ज़रूरत होती है ...

उजाला होने लगा, अलाव पूरी तरह जलकर बुझ गया। जब कोयले काले पड़ गये, तो लड़के ने हाथ गरम-गरम राख में घुसेड़ दिये। कितना अच्छा लग रहा था हाथों को! वह हाथ राख के अन्दर ही अन्दर घुसेड़ता गया और अचानक उसकी उंगलियाँ किसी ठोस चीज़ से टकरा गयीं। सरसेम्बाय ने उस चीज़ को राख से निकाला और भौचक रह गया ... सोने की सन्दूकची! बालक का हृदय ज़ोर-ज़ोर से धड़कने लगा ... सन्दूकची में क्या है?..

सरसेम्बाय ने ढक्कन उठाया। उसी क्षण धरती के ऊपर सूरज का किनारा दिखाई दिया और उसकी पहली किरण सीधे सन्दूकची पर गिरी। सरसेम्बाय चीख उठा और असह्य चकाचौंध के कारण उसकी आंखें मुंद गयीं : सन्दूकची हीरों से ठसाठस भरी थी!..

गड़रिये ने अपनी खोज सीने से सटा ली और खुशी से फूला न समाता जंगल में भागने लगा।

"बस किसी तरह किसी घर तक पहुँच जाऊँ!" वह सोच रहा था। "अब मैं बिना दुःख भोगे जीने लगूंगा ... मेरी दौलत सौ आदमियों के लिए भी काफ़ी रहेगी।"

लेकिन वन उत्तरोत्तर घना होता जा रहा था। सरसेम्बाय को डर लगने लगा और वह अब पछताने लगा कि इतने घने वन में घुस आया।

"इतने निर्जन घने वन में मैं अपनी दौलत का क्या करूँगा?"

तभी उसे वृक्षों के तनों के बीच प्रकाश की झलक दिखाई दे गयी और लड़का चौड़े वनक्षेत्र में पहुँच गया। वनक्षेत्र के बीचोंबीच न जमनेवाली जल-धारा के किनारे एक सफ़ेद नमदे से मढ़ा शानदार तम्बू-घर था।

"यहाँ कैसे लोग रहते हैं?" सरसेम्बाय ने सोचा। "कहीं वे असहाय दुखियारे को तंग तो नहीं करने लगेंगे?"

सरसेम्बाय ने सोने की सन्दूकची एक बूढ़े बलूत के कोटर में छिपा दी और तम्बू-घर के भीतर गया।

"सलाम!" उसने कहा।

तम्बू-घर में चूल्हा जल रहा था और उसके आगे एक लड़की गहरे सोच में डूबी, सिर झुकाये उकड़ूं बैठी हुई थी। आगंतुक को देखते ही लड़की झट उठ खड़ी हुई और आश्चर्य व भय से उसकी ओर देखने लगी।

"तुम कौन हो, लड़के, और यहाँ कैसे आ गये?" उसने अन्त में पूछा।

सरसेम्बाय लड़की को एकटक देख रहा था, पर उसके मुंह से एक शब्द भी नहीं निकल पा रहा था। उसने ऐसी रूपवती कभी नहीं देखी थी, ऐसी कन्याओं का गुणगान तो केवल अक़ीन* ही अपनी रचनाओं में करते थे। किन्तु स्पष्ट था कि उसे कोई गम्भीर दु:ख है: उसकी आंखें उदास थीं, और चेहरा उतरा हुआ था।

लड़के ने अपने को क़ाबू में करके कहा:

"मैं अनाथ हूँ। मेरा नाम सरसेम्बाय है। मैं नौकरी, रहने की ठौर और खाने की तलाश में भटक रहा था कि रास्ता भूलकर तुम्हारे यहाँ आ पहुँचा। पर तुम कौन हो, लड़की?"

लड़की उसकी ओर बढ़ी और घबराहट भरे स्वर में बोली:

"मेरा नाम अलतीन-क़ीज़ है। दुनिया में मुझसे ज्यादा अभागी लड़की शायद ही कोई हो। लेकिन तुम्हें मेरी क्या चिन्ता, सरसेम्बाय? तुम ख़ुद बहुत ख़तरे में हो... अगर तुम्हें इस मनहूस जगह से निकलने का रास्ता मिल जाये, तो यहाँ से भाग जाओ, सिर पर पैर रखकर भागो। तुम्हें मालूम है, तुम्हारा दुर्भाग्य तुम्हें कहाँ ले आया है? यह तम्बू-घर रक्तपिपासु जालमाउइज़-केम्पीर का है। वह किसी भी क्षण घर लौट सकती है। फिर तुम्हारी ख़ैर नहीं... देर न करो, जान बचाकर भाग जाओ!.."

तभी बाहर से शोर, कड़क और क़दमों की आहट सुनाई दी। बालिका का चेहरा और अधिक फक हो गया।

"मौक़ा निकल गया!" लड़की ने डर के मारे कांपते हुए कहा और सरसेम्बाय का हाथ पकड़कर चूल्हे के पास से खींचकर उसे नमदे से अच्छी तरह ढक दिया।

---

* अक़ीन – लोक कवि।

सरसेम्बाय छिपा रहा, पर वह छोटे-से छेद में से तम्बू-घर में जो कुछ हो रहा था, सब देख रहा था।

दरवाज़ा भड़ाक से पूरा खुल गया और तम्बू-घर में लाल-लाल होंठोंवाली राक्षसी – भयावह जालमाउइज़-केम्पीर घुस आयी। उसकी नाक आंकुड़े जैसी थी, बाल खड़े हुए थे, दांत भेड़िये की तरह निकले हुए थे। उसने अपनी धुंधली नज़र तम्बू-घर में चारों ओर दौड़ाई और चूल्हे के आगे उकड़ूं बैठकर अपनी सूखी-सूखी काली उंगलियां ज्वाला की ओर बढ़ाईं। वह थोड़ी देर तक ऐसे ही ज़ोर-ज़ोर से हांफती बैठी रही, और अलतीन-क़ीज़ उससे कुछ दूरी पर निश्चल खड़ी रही।

ताप लेने के बाद जालमाउइज़-केम्पीर गुर्रायी:

"अलतीन-क़ीज़, मेरे पास आ।"

डर के मारे थरथर कांपती लड़की ने बुढ़िया की ओर क़दम बढ़ाया और रुक गयी, लेकिन उसने उसे अपनी आंकुड़ेनुमा उंगलियों से पकड़कर अपनी ओर खींच लिया।

अलतीन-क़ीज़ दर्द के मारे कराह उठी। सरसेम्बाय ने मुट्ठियाँ भींच लीं और वह बुढ़िया पर टूट पड़ने ही वाला था कि उसी क्षण जालमाउइज़-केम्पीर गुस्से में चीखी और लड़की को दूर धकेलकर चिल्लायी:

"नालायक़! तू क्यों रोज़ाना पीली पड़ती जा रही है और सूखी जा रही है? क्या तुझे मालूम नहीं कि मैं तुझे अपने तम्बू-घर में किस लिए रखे हुए हूँ? मुझे बहुत पहले ही तुझे चटकर जाना चाहिए था, पर मैं बराबर टालती आ रही हूँ – इन्तज़ार कर रही हूँ कि कब तुझे अक़्ल आये और तू मुटियाने लग जाये: अगर कल मेरे आने तक तू ऐसी ही दुबली रही, तो मैं तुझे इस चूल्हे में ज़िन्दा भून डालूँगी!"

इतना कहते ही बुढ़िया बिस्तर पर गिरकर खर्राटे भरने लगी। और अलतीन-क़ीज़ आग के पास बैठी रात भर रोती रही।

सुबह जालमाउइज़-केम्पीर ने लड़की को फिर धमकी दी और बैसाखी उठाकर तम्बू-घर से बाहर चली गयी। बाहर से शोर, कड़क और क़दमों की आहट सुनाई दी और फिर सब शान्त हो गया।

सरसेम्बाय नमदा हटाकर निकला और उसने पूछा:

"अलतीन-क़ीज़, तुम मुझे बताओ कि तुम इस रक्तपिपासु जालमाउइज़-केम्पीर की दासी कैसे बनीं?"

और अलतीन-क़ीज़ उसे पूरा क़िस्सा सुनाने लगी:

"मैं अपने गांव में अपने मां-बाप के साथ खुश और संतुष्ट रह रही थी। एक बार मेरे माता-पिता किसी के घर गये। जाते समय पिता ने मुझ से कहा था: 'प्यारी अलतीन-क़ीज़, तुम्हें पूरे दिन अकेले रहना है। समझदारी से काम लेना, घर से बाहर मत निकलना और किसी को अन्दर मत आने देना।' मैं ऊबने लगी और घर से बाहर निकल गयी।

मेरी सहेलियां मेरे पास भागी आयीं और मुझे स्तेपी में फूल चुनने चलने को कहने लगीं। मैं, बुद्धू चली गयी। फूल तोड़ रही थी कि मैंने देखा : एक मरियल बुढ़िया बैसाखी टेकती आ रही है। 'अहा, कितनी अच्छी लड़की है! अहा, कैसी रूपवती है!..' वह मुझसे कहने लगी। 'तू कहीं दूर रहती है, लड़की?' मैंने कहा, 'नहीं, पास ही में रहती हूँ। वह रहा हमारा तम्बू-घर।' वह बोली, 'तो फिर मुझे अपने घर ले चल और साफ़ पानी पिला दे।' मैंने कोई बुरी बात नहीं सोची, उसे गांव ले गयी और पानी पिला दिया। लेकिन वह तम्बू-घर से जाने का नाम ही नहीं ले रही थी, बस मुझे घूरे जा रही थी। 'अहा, कितनी अच्छी लड़की है! अहा, कितनी रूपवती है! आ, तेरे बालों में कंघी कर दूँ।' मैंने उसके घुटनों पर सिर रख दिया, और वह सोने की कंघी निकालकर मेरे बाल बनाने लगी। मुझे अचानक नीन्द आने लगी। मैं आंखें मूंदकर गहरी नीन्द में सो गयी। मुझे पता नहीं, मैं कितनी देर सोयी रही, पर मेरी नीन्द इस तम्बू-घर में खुली। बहुत दिन गुज़र चुके हैं। तब से मैंने इस यंत्रणा देनेवाली जालमाउइज़-केम्पीर के अलावा और किसी की सूरत नहीं देखी है। यहाँ ऐसे ही हर घड़ी अपनी मौत का इन्तज़ार करती दिन काट रही हूँ।"

अपनी राम-कहानी सुनाकर अलतीन-क़ीज़ फिर रो-रोकर सरसेम्बाय को जालमाउइज़-केम्पीर के आने से पहले कहीं भाग जाने के लिए मनाने लगी।

किन्तु सरसेम्बाय उसके मनुहार करने पर केवल स्नेहपूर्वक मुस्कराता रहा और फिर उसे बहन की तरह गले लगाकर बोला :

"मैं कभी तुम्हें छोड़कर नहीं जाऊँगा, अलतीन-क़ीज़। हम साथ ही जायेंगे..."

"धन्यवाद, सरसेम्बाय, तुम्हारी नेकी के लिए," अलतीन-क़ीज़ ने कहा, "लेकिन तुम जो कह रहे हो, वह कभी नहीं पूरा होगा। जालमाउइज़-केम्पीर हमें रास्ते में पकड़ लेगी, और अगर नहीं भी पकड़े, तो भी हम हर हालत में कहीं बर्फ़ के किसी ढेर में ठिठुरकर मर जायेंगे।"

"हम वसन्त तक इन्तज़ार करेंगे और फिर भाग जायेंगे..."

अलतीन-क़ीज़ ने एक ठण्डी सांस ली।

"साहसी अकसर अदूरदर्शी होते हैं," उसने कहा। "तुम शायद भूल गये हो कि जालमाउइज़-केम्पीर मुझे आज मार डालेगी।"

"नहीं, अलतीन-क़ीज़, तुम नहीं मरोगी!" लड़का जोश में कह उठा। "मैंने सब सोच लिया है। जालमाउइज़-केम्पीर चालाक है, पर हम उसे चकमा देने की कोशिश करेंगे। तम्बू-घर में अंधेरा है, मैं तुम्हारा कुरता पहन लूँगा और आज तुम्हारी जगह उसके पास जाऊँगा!.. मैं तुमसे लम्बा और मोटा हूँ... शायद हम बुढ़िया को धोखा देने और गरम मौसम तक ज़िन्दा रहने में सफल हो जायें..."

अलतीन-क़ीज़ ने हाथ पर हाथ मारा और कहने लगी कि वह सरसेम्बाय को उसकी

ख़ातिर कभी जान पर खेलने देने को तैयार नहीं होगी। किन्तु गड़रिया दृढ़ और अडिग रहा।

"अगर तुम, अलतीन-क़ीज़, ज़िद करती रहीं, तो मैं आज ही जालमाउइज़-केम्पीर से जा भिड़ूंगा और तुमसे पहले उसके दांतों का शिकार बन जाऊँगा!"

तब लड़की मान गयी। उन्होंने आपस में कपड़े बदल लिये। अलतीन-क़ीज़ नमदे के पीछे छिप गयी, और सरसेम्बाय उसकी जगह चूल्हे के पास बैठ गया।

तभी बाहर से शोर, कड़क और क़दमों की आहट आयी और तम्बू-घर में लाल-लाल होंठोंवाली राक्षसी – भयावह जालमाउइज़-केम्पीर घुस आयी।

वह आग से हाथ तापकर गुर्रायी:

"अलतीन-क़ीज़, मेरे पास आ!"

सरसेम्बाय बेधड़क बुढ़िया के पास आ गया। उसने उस पर धुंधली नज़रों से सिर से पैर तक देखा और बुदबुदायी:

"लगता है तू आज दिन भर में कुछ बड़ी हो गयी है!"

धोखे का सन्देह न करते हुए उसने सरसेम्बाय का बदन टटोला, उसे नोच लिया और हंसती हुई बोली:

"अहा, कितनी चालाक लड़की है तू! मैं बहुत पहले ही भांप गयी थी कि तू मुझे बेवक़ूफ़ बना रही है। तुझे एक बार अच्छी तरह धमकी देने की देर थी कि तू फ़ौरन रास्ते पर आ गयी!.. ठीक है कुछ दिन और जी ले, थोड़ी चरबी चढ़ा ले..."

सरसेम्बाय और अलतीन-क़ीज़ के लिए कष्टदायी दिन और ख़तरनाक रातें बीतने लगीं।..

अंततः वसन्त आया। जल-धारा में पानी कलकल करता बहने लगा, चिड़ियां चहकने लगीं, फूल खिलने लगे।

सरसेम्बाय अपनी सहेली से बोला:

"प्यारी अलतीन-क़ीज़! अब हमें भागने की तैयारी करना चाहिए। मैं देख रहा हूँ कि जालमाउइज़-केम्पीर पहले से ज़्यादा चिड़चिड़ी हो गयी है: उसे कहीं हमारे इरादे की भनक तो नहीं पड़ गयी है? बुढ़िया को मेरा पता चल गया, तो मुसीबत आ जायेगी, हम दोनों मारे जायेंगे। मैं कमान बनाकर शिकार करने जाऊँगा, रास्ते में खाने के लिए चिड़ियाँ जमाकर लूँगा और तीन दिन बाद छिपकर लौट आऊँगा, फिर हम भाग जायेंगे।"

"जैसा ठीक समझो, सरसेम्बाय, वैसा ही करो," लड़की ने उत्तर दिया, पर उसकी आंखें डबडबा आयीं। "लेकिन शिकार करते समय होशियार रहना और सही-सलामत लौट आना।"

"रोओ मत, अलतीन-क़ीज़, मेरे बारे में दुःखी मत होओ," सरसेम्बाय ने कहा। "और अगर ऊबने लगो, तो नदी के पास जाकर पानी को देखना: अगर पानी पर हंस

के पर तैर रहे हों, तो समझ लेना कि मैं ज़िन्दा और स्वस्थ हूँ और तुम्हें कहीं दूर से सलाम कहलवा रहा हूँ।"

"बच्चों ने एक दूसरे से विदा ली। अलतीन-क़ीज़ मित्र को थोड़ी दूर तक छोड़ने गयी: कहीं जालमाउइज़-केम्पीर ख़ाली तम्बू-घर में अचानक न आ धमके।

सरसेम्बाय चश्मे के किनारे-किनारे आगे बढ़ता गया।

पहले दिन उसने तीन हंस मारे और उनके पर नोचकर पानी में डाल दिये। दूसरे दिन उसने फिर तीन हंस मारे और फिर उनके पर पानी में डाल दिये।

तीसरे दिन सरसेम्बाय ने देखा: वनपथ में एक हिरन का छौना खड़ा है और उसके ऊपर काले कौवों का झुण्ड ज़ोर-ज़ोर से कांव-कांव करता मंडरा रहा है। कौवे छौने की आंखें निकाल लेना चाहते थे। लड़के को छौने पर दया आ गयी, उसने कौवों को भगा दिया।

बूढ़ा हिरन दौड़ा आया।

"धन्यवाद, सरसेम्बाय," वह बोला। "मैं तुम्हारी नेकी का बदला ज़रूर चुकाऊँगा।"

सरसेम्बाय आगे चला। उसे दर्दभरी "में-में" सुनाई दी। उसने गढ़े में झांककर देखा: वहाँ पहाड़ी बकरे का मेमना था। वह निकलने के लिए ज़ोर लगा रहा था, चीख रहा था, पर निकल नहीं पा रहा था।

बालक को उस पर दया आ गयी और उसने उसे गढ़े में से निकाल लिया। बूढ़ा पहाड़ी बकरा भागता आया और बोला:

"धन्यवाद, सरसेम्बाय। मैं तुम्हारी नेकी का बदला ज़रूर चुकाऊँगा!"

सरसेम्बाय आगे चला। यह कौन चीं-चीं कर रहा है?.. देखा: घोंसले से गिरा उक़ाब का नीड़-शावक था। लड़के को चिड़िया के बच्चे पर दया आ गयी और उसने उसे ज़मीन से उठाकर घोंसले में रख दिया।

बूढ़ा उक़ाब उड़ता आया।

"धन्यवाद, सरसेम्बाय। मैं तुम्हारी नेकी का बदला ज़रूर चुकाऊँगा!"

इस प्रकार सरसेम्बाय उस दिन किसी जानवर का शिकार न कर सका। शाम होनेवाली थी। तभी लड़के को याद आया कि उसने सुबह से पानी में हंस का एक भी पर नहीं डाला है। उसका दिल विकल होने लगा। अब बेचारी अलतीन-क़ीज़ नदी के किनारे खड़ी क्या सोच रही होगी? सरसेम्बाय बिना पलटकर देखे वापस भाग चला।

अलतीन-क़ीज़ उस समय उसकी प्रतीक्षा कर रही थी, उसकी याद में तड़प रही थी। जालमाउइज़-केम्पीर के घर से निकलते ही लड़की भागकर नदी के किनारे जा पहुँचती। लड़की जब देखती कि पानी कलकल करता बह रहा है, उस पर हंस के पर तैर रहे हैं, तो वह मुस्कराने लगती: "सरसेम्बाय ज़िन्दा है!"

तीसरा दिन, उनकी जुदाई का आख़िरी दिन आया। अलतीन-क़ीज़ नदी के किनारे खड़ी एकटक देखती रही, एक घंटा, दो घंटे, तीन घंटे ...

रह गये। किन्तु ख़ान मौन था, केवल अलदाकेन को ऐसे घूर रहा था, जैसे नज़रों से उसके टुकड़े-टुकड़े कर देना चाहता हो। अन्त में उसने मुंह खोला:

"इसे एक बतमन अशरफ़ियाँ दे दो! बोने दो," और वज़ीरों को हैरान देखकर आगे व्यंग्यपूर्ण मुस्कान के साथ बोला: "यह हमसे बचकर कहीं नहीं जा सकेगा।"

ख़ान की आज्ञा का तत्काल पालन किया गया, और अलदार-कोसे पीठ पर बोरी लादे, लम्बे-लम्बे डग भरता, हंसी-ख़ुशी घर रवाना हो गया। उसके पीछे-पीछे ख़ान के जासूस घास और घाटियों में दुबकते, रेंगते यह देखने चल पड़े कि वह आख़िर सोने का क्या करता है।

कुछ समय बाद जासूसों ने लौटकर ख़ान को सूचित किया: घर पहुँचकर बेदाढ़ी ने बैलों की एक जोड़ी जोती और खेत पहुँच गया, वहाँ उसने ज़मीन का एक टुकड़ा जोता और उस पर यह पुकारते हुए कुछ बिखेरने लगा: "एक के हज़ार हों! एक के हज़ार हों!" फिर उसने जोत के पास एक छप्पर लगाया और फ़सल की चिड़ियों से रक्षा करने के लिए उसके नीचे बैठ गया, इसलिए हमें यह पता न लगा सके कि उसने सोना ही बोया या कुछ और...

पतझड़ आ गया। झीलों से कलहंसों की क़तारें दक्षिण की ओर उड़ चलीं, चरागाहों में घास सूख गयी, चरवाहे अपने पशुओं के साथ जाड़े के पड़ावों की ओर चल पड़े। लेकिन अलदार का कुछ अता-पता न था।

अलाशा-ख़ान ने उसे पकड़ने के लिए सिपाहियों का एक दस्ता भेजा:

"ठग को पकड़कर मेरे पास लाओ! अब उसे अपनी सारी चालबाज़ियों का जवाब देने का वक़्त आ गया है।"

सिपाही हुंकारते और एक दूसरे से आगे निकलते स्तेपी में घोड़े दौड़ा ले चले, पर शीघ्र ही वे ख़ाली हाथ लौट आये।

"जहाँपनाह," उन्होंने सूचित किया, "तम्बू-घर में घुसने पर हमें उसमें मालिक नज़र नहीं आया। बुझे हुए चूल्हे के आगे केवल एक सुन्दर लड़की बैठी हुई थी, जो अपने को अलदार की बहन बताती है। वह फूट-फूटकर रो रही थी। 'तुम्हारा भाई कहाँ है', हमने पूछा। 'वह घर पर नहीं है, शायद इस दुनिया में भी नहीं है...' उसने हाथ मलते हुए जवाब दिया। ऐसी ग़मी देखकर किसी का भी दिल बैठ सकता है! 'क्या हुआ?' हमने पूछताछ जारी रखी। उसने कहा: 'इस साल हमारे यहाँ वसन्त से ही बारिश नहीं हुई। ख़ान की दी हुई अशरफ़ियों से, जिन्हें मेरे बदनसीब भाई ने बोया था, अंकुर फूटे ही नहीं। और वह ख़ान के ग़ुस्से के डर के मारे पैसा कमाने चला गया है, जिससे कि ख़ान का पूरा क़र्ज़ चुका सके। अगर वह ख़ान का क़र्ज़ अदा नहीं कर सका, तो आत्महत्या कर लेगा...? हम इसे इतना ही मालूम कर सके हैं। आगे क्या करने का हुक्म है, हुज़ूर?"

ख़ान ने सोच-विचार कर कहा:

"मुझे लगता है कि अलदार-कोसे की बहन अपने भाई से मिली हुई है। तुम लोगों ने बेकार उस ढोंगी की बातों पर विश्वास किया। उसके भाई के बदले में उसे मेरे पास ले आओ, – वह उसके बदले में बंधक रहेगी।"

किन्तु युवती को जब लाया गया, तो वह अपने रूप-रंग और व्यवहार के कारण सबको इतनी अच्छी लगी, उसके आंसू इतने सच्चे जान पड़े कि स्वयं ख़ान भी द्रवित हो उठा। उसने उसे एक ख़ास तम्बूघर में ठहराया और उसके पास बढ़िया खाना, मिठाइयाँ व तोहफ़े भिजवाये।

संयोगवश उसी समय एक युवा सुलतान ने ख़ान की बेटियों में से एक का हाथ मांगा। ख़ान किसी भी तरह उस व्यक्ति से रिश्तेदारी नहीं करना चाहता था, और उसके दिमाग़ में अलदार-कोसे की बहिन का निकाह उससे करने का विचार आया। बिना समय गँवाये दुलहन के सिर पर ऊंचा साउकोले* पहना दिया गया, शादी के क़ीमती जोड़े में सजा दिया गया, बधाई के गीत गाये गये और उसे घोड़े पर बिठाकर पति के घर रवाना किया गया।

"सुनते हैं," रास्ते में दुलहन ने सुलतान से पूछा, "आपकी ख़ुरजियों में क्या भरा है?"

"अशरफ़ियाँ भरी हैं, जो ख़ान ने तुम्हारे दहेज़ में दी हैं।"

रास्ते में रात बिताने के लिए पड़ाव डाला गया। नवविवाहितों के लिए तम्बू-घर तान दिया गया। सुलतान भरपेट खा-पीकर घोड़े बेचकर सो गया। दुलहन ने उसका चोग़ा व टोपी उतार लिये और जल्दी से मर्दाने वस्त्र पहनकर अचानक ... अलदार-कोसे बन बैठी। क्योंकि शुरू से ही यह सब शैतान अलदार-कोसे की ही कारिस्तानी थीं!

अलदाकेन ने सुलतान के घोड़े पर ज़ीन कसी, उससे कसकर अशरफ़ियों की थैलियाँ बांधी, बिना रकाबों को छुए काठी पर सवार हुआ और अंधेरे में ग़ायब हो गया।

वह पौ फटते ही ख़ान के पड़ाव पर जा पहुँचा और घोड़े पर बैठे-बैठे ही ख़ान को पुकारने लगा:

"रहम, जहाँपनाह, रहम! आपकी अशरफ़ियों से फ़सल पैदा न होने में क़सूर मेरा नहीं है: सूखे से बीज तबाह हो गये। हालांकि आपके लिए यह कोई बहुत भारी नुक़सान नहीं है, पर क्या मैं आपकी नज़रों में झूठा रह सकता था? नहीं, इज़्ज़त ज़िन्दगी से ज़्यादा क़ीमती है। सोना आख़िर क्या होता है, मैं आपसे पूछता हूँ? पत्थर। लेकिन ग़रीब के लिए ऐसा पत्थर हासिल करना आसान नहीं होता। फिर भी ख़ुदा ने मेरी मदद की, और अब मैं आपसे उधार ली हुई रक़म लौटाने के क़ाबिल हो गया हूँ। आज से आपकी नज़रों में मेरी नीयत थन तले के दूध जैसी साफ़ है। लेकिन, मेरे हुज़ूर, जिस देश में सत्य नहीं है, उसमें मामूली आदमी का तिरस्कार करना, अपमान करना कितना आसान होता है! मेरे जाने के बाद मेरे घर पर आपके नौकरों ने छापा मारा। मेरी असहाय बहन को

---

* साउकोले: दुलहन का शिरोवस्त्र।

उड़ा लिया गया और उसकी शादी करा कर पराये देश भेज दिया गया। और मुझे, उस बेचारी के इकलौते भाई को उसकी कोई खबर नहीं है। कितना अन्याय है! कितनी शर्म की बात है!" और अलदार-कोसे ज़ोर-ज़ोर से सुबकियां भरने लगा।

घबराया हुआ खान उसे शान्त कराने लगा:

"ऐसे रो-रोकर जान मत दो, अलदार-कोसे! तुम्हारी बहन की अच्छा दहेज़ देकर सुलतान से शादी की गयी है। क्या तुम्हारे ख़याल से सुलतान उसके लिए अच्छा दूल्हा नहीं होगा? तुम्हारे लिए शिकायत करना गुनाह होगा। और जहाँ तक सोने का सवाल है, तो यही सही: तुम जो साथ लाये हो, उसे अपनी बहन की महर की रक़म के तौर पर अपने पास रख लो।"

खान ने इतना कहा ही था कि उसी समय पसीने से तर-बतर घोड़े पर सुलतान का सन्देशवाहक खबर लेकर आया कि दुलहन रास्ते में भाग गयी और उसके साथ-साथ दूल्हे का अरग़ामाक़ नस्ल का घोड़ा और सोना भी ग़ायब हो गया।

"मैं मर गया, मेरे हुज़ूर!" खान को संभलने का अवसर दिये बिना अलदार धड़ से ज़मीन पर गिर गया। "मैं मर गया मेरे हुज़ूर, बहुत बुरा हुआ! ज़रूर सुलतान ने मेरी बहन को मार डाला है, और क़ासिद को अपने भयानक अपराध को छिपाने के लिए भेज दिया है। मुझे बचाइये, हुज़ूरे आलम!"

भ्रम में पड़ा अलाशा-खान पूर्णतया किंकर्तव्यविमूढ़ हो गया। अंत में वह अपने तख़्ते से उठा और उसने मूर्च्छित अलदार को उठाया।

"खान वादा करता है, अलदार-कोसे अगर तीन दिन के अन्दर तुम्हारी बहन नहीं मिली, तो मैं सुलतान को तुम्हें उसके ऐसी रक़म देने को मजबूर करूँगा, जैसी आज तक किसी को नहीं मिली होगी। तब तक तुम मेरी खिदमत में रहो।"

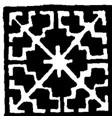
यह बताने की आवश्यकता नहीं है कि दुलहन न तो तीन दिन में मिली और न ही तीन महीने में। अलदार-कोसे को हत्या-राशि मिल गयी और पूर्णतया अप्रत्याशित ढंग से खान का दरबारी भी बन गया।

कुछ दिनों बाद ही कड़ाके का जाड़ा पड़ने लगा, खान को अपने हुक्म की याद हो आयी। लगान उगाहनेवालों की पूरी फ़ौज स्तेपी में हर पड़ाव पर जाकर सोना वसूल करने और क़र्ज़दारों को कमंदों से पकड़ने रवाना हो गयी।

किन्तु खान के सिपाहियों से पहले अलदार-कोसे सारे पड़ावों में होकर आ चुका था।

चमत्कार हो गया: खान को लगाम की पूरी रक़म मिल गयी! एक भी आदमी गुलाम नहीं बना, क्योंकि ग़रीब से ग़रीब की झोंपड़ी में भी खान को चुकाने के लिए अशरफ़ी बचाकर रखी हुई थी।

खान सन्तुष्ट हो गया। ग़रीब प्रजा भी सन्तुष्ट थी। और अलदाकेन भी सन्तुष्ट था।



बिल्ली के ख़्वाब में चूहे कूदें

एक बार अलाशा-ख़ान ने अलदार-कोसे को अपने पास बुलवाकर कहा:

"मैं ऊब रहा हूँ, अलदार-कोसे। बात तुम्हारी समझ में आयी?"

"समझ गया, हुजूरे आलम। जब ख़ान को ख़ुशी होती है, प्रजा के आंसू बहते हैं, जब ख़ान को ऊब महसूस होती है, प्रजा का ख़ून बहता है। आपका मन मैं किस तरह बहलाऊँ? चाहें तो क़ोबिज़* बजाकर सुनाऊँ, या कोई चुराया गीत सुनाऊँ, या फिर कोई मजेदार कहानी सुनाऊँ?"

"नहीं," ख़ान ने अधीरतापूर्वक हाथ हिला दिया, "गीत और संगीत से मैं ऊब चुका हूँ, कहानियों और हंसी-ठिठोली की बातों से नफ़रत हो चुकी है। इससे अच्छा होगा कि एक खेल खेलें, जिसे ख़ुद मैंने सोचा है।"

"कैसा खेल है, जहांपनाह?" दाल में कुछ काला महसूस करते हुए अलदार-कोसे ने पूछा।

"खेल ऐसा है। हम आमने-सामने बैठ जायेंगे, अपने बीच में मेरे चहैते बिल्ले को बिठा लेंगे, उसकी पूंछ पर जलती मोमबत्ती रख देंगे और दोनों बिल्ले को ललचाकर अपने-अपने पास बुलायेंगे। बिल्ला जिसकी गोद में कूदेगा, वह जीतेगा, और जिसकी तरफ़ मोमबत्ती गिरेगी, वह हारेगा। मैं शुरू में सौ अशरफ़ियां दाव पर लगाता हूँ।"

"हालत बुरी है," अलदार-कोसे ने सोचा, "बिल्ला बेशक अपने स्वामी की आवाज़ की तरफ़ कूदेगा... कहीं ऐसा न हो कि मुर्ग़ी अपनी जान से जाये, खानेवाले को मज़ा न आये।"

लेकिन ख़ान की अवज्ञा कभी की जा सकती है!

"बहुत बढ़िया खेल है!" अलदार-कोसे ने प्रसन्नतापूर्वक कहा। "लेकिन एक बात

---

* क़ोबिज़: कमानी से बजाया जानेवाला एक प्रकार का तारवाला वाद्य।

समझ में नहीं आती – आपको, मेरे हुजूर, मेरे साथ खेलने से क्या फ़ायदा होगा? मेरी जेब में तो फूटी कौड़ी भी नहीं है।"

"पैसे नहीं हैं, तो चोग़ा लगा दो दाव पर!" खान ने हुक्म दिया।

अलदार-कोसे ने बिल्ले को खान के तम्बू-घर के बीचोंबीच क़ालीन पर बिठा दिया, उसकी झबरी दुम पर जलती हुई मोमबत्ती रख दी, फिर खान के सामने आलथी-पालथी मार कर बैठ गया – और खेल शुरू हो गया।

"ले-ले-ले!" खान ने आवाज़ दी।

"ले-ले-ले!" अलदार-कोसे ने आवाज़ दी।

बिल्ले ने सिर मोड़ा, कान हिलाये और धीरे से खान की गोदी में कूद गया। मोमबत्ती धुआं छोड़ती अलदार की तरफ़ गिर पड़ी।

"मैं जीता!" खान ने ताली बजायी।

दूसरी, तीसरी और चौथी बार भी बिल्ला खान के पास ही गया। चोग़े के बाद अलदार-कोसे टोपी, कमरबंद और जूते भी हार गया... वह नीचे पहनने की क़मीज में और नंगे पैर रह गया था। पर खान का मन ही नहीं भर रहा था।

"अब क्या होगा? यह ज़ाहिर है कि खान ने मुझे कहीं का न छोड़ने की ठान ली है," अलदाकेन ने क़मीज़ उतारते हुए सोचा।

"मैं पांच सौ अशरफ़ियां दाव पर लगाता हूं!" खान उन्माद में चिल्लाया। "खेल अभी खतम नहीं हुआ है! अगर तुम्हारे पास कुछ नहीं रहा, तो अपना सिर दाव पर लगा दो!"

"ठीक है," अलदार-कोसे ने शान्तिपूर्वक कहा, "सिर दाव पर लगाता हूं। मैं पहले से जानता हूं कि उसकी अब खैर नहीं है। लेकिन, जहांपनाह, मेरी एक विनती सुन लीजिये, मुझे आखिरी बार अपनी स्तेपी पर नज़र डालने की इजाज़त दे दीजिये।"

"मंजूर है," खान ने होंठ बिचकाये, "जाओ, उसे देख आओ। लेकिन देर मत लगाना!"

अलदार-कोसे ने बाहर निकलकर अपने पीछे दरवाज़ा बंद कर दिया। और एक मिनट बाद ही वह फिर देहलीज़ पर खड़ा था।

"मैं तैयार हूं," बेदाढ़ी ने मुस्कराते हुए कहा, "खेल जारी रखते हैं, जहांपनाह।"

बिल्ले को दुबारा क़ालीन पर बिठाया गया, मोमबत्ती जलायी गयी और खान ने अलदार से पहले ही प्यार से आवाज़ दी:

"ले-ले-ले!"

लेकिन तभी एक ऐसी बात हुई जिसकी खान ने कभी आशा नहीं की थी। बिल्ला आंखों से चिनगारियां छोड़ता, सारे बाल खड़े किये पागल की तरह अलदार के सीने पर कूदा, और मोमबत्ती खान की तरफ़ लुढ़क गयी।

"मैं जीता!" अलदार-कोसे शान्तिपूर्वक कह उठा।

ख़ान ग़ुस्से के मारे भूत हो उठा।

"मैं एक हज़ार अशरफ़ियाँ लगाता हूँ! तीन हज़ार! पाँच हज़ार!" वह पागलों की तरह चिल्लाता हुआ दाव लगाता रहा। उसका चेहरा तमतमा उठा, टोपी सिर से गिर गयी। "चालीस हज़ार लगाता हूँ!"

लेकिन बिल्ला अब हर बार अलदार की तरफ़ कूद रहा था, मानो उसने उस पर जादू कर दिया हो।

अन्त में अलदार-कोसे बोला:

"आज के लिए काफ़ी हो गया न, जहांपनाह? मैं देख रहा हूँ, आपकी तबीयत कुछ ख़राब है, और आपका चहेता बिल्ला भी थक कर निढाल हो चुका है। खेल कल जारी रखेंगे, अगर आपको इस बात का डर न हो कि आपके सिर तक की नौबत आ सकती है।"

पसीने में लथपथ ख़ान भर्रायी आवाज़ में बोला:

"मैं अन्दर से फुंका जा रहा हूँ! तुम्हारे साथ खेलना शुरू करके मैंने ख़ुद अपनी बरबादी कर ली, बदमाश। तुम जीते, अलदार-कोसे! जीत का माल उठाओ, पर राज़ खोल दो कि तुमने कौन-से जादू की मदद से मुझे हराया?"

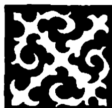
"मैंने आपको, हुज़ूर, किसी जादू से नहीं, सूझ-बूझ से हराया है। स्तेपी को अलविदा कहने की छुट्टी मांगकर मैंने घास में एक ऐसा जानवर पकड़ लिया, जो बिल्ले को दुनिया के सारे ख़ानों से ज़्यादा प्यारा है। खेल के दौरान मैं बिल्ले को मुट्ठी में दबा जानवर दिखा देता था – बस यही मेरा जादू था, दानिशमंद ख़ान।"

अलदार ने मुट्ठी खोलकर दिखायी: उसकी हथेली पर थरथर कांपता चूहे का बच्चा बैठा था।

"चूहा!" ख़ान चीख मारकर एक तरफ़ भागा: वह चूहों से बहुत बुरी तरह डरता था।

चीख सुन कर चूहे का बच्चा क़ालीन पर गिर पड़ा। बिल्ला मोमबत्तीदान उलटकर उसके पीछे भागा।

अलदाकेन को सही-सलामत निकल भागने का उपयुक्त अवसर मिल गया। उसने झट से क़ालीन से अपने कपड़े उठाये और दबे पांव दरवाज़े से बाहर खिसक गया।



मौत का चकमा

खान ने अलदार-कोसे को पकड़ने का हुक्म दे दिया और उसे निर्ममतापूर्वक मौत के घाट उतारने का एलान कर दिया।

"हठधर्मी मूर्ख को कोड़ों से सीधा करना चाहिए, जब कि हठधर्मी बुद्धिमान को – तलवार से! मैं इस विद्रोही की हरकतें काफ़ी देर तक सह चुका हूँ। अब देखते हैं कि कैसे चुटकुले सुनाकर जल्लाद से पीछा छुड़ाता है, कैसी चालबाज़ियों से मौत के पंजों से बचता है..." और उसने तुरन्त आज्ञा दी: – "लोगों को मौत की सज़ा का नज़ारा देखने के लिए बुलाओ!"

मुनादी करनेवाले घोड़ों को सुस्ताने का मौक़ा दिये बिना उन्हें चारों ओर दौड़ा ले चले। शीघ्र ही बाय लोग खुशियां मनाते, ग़रीब लोग शोक मनाते अलदार-कोसे का सिर क़लम किया जाना देखने खान के पड़ाव की ओर उमड़ पड़े।

इस बीच बेचारा अलदाकेन खाली तम्बू-घर में बैठा अपनी मौत की घड़ियां गिन रहा था।

तम्बू-घर के इर्द-गिर्द एक दूसरे से समान दूरी पर तलवारों व बर्छियों से लैस बारह पहरेदार तैनात थे। उन्हें हुक्म दिया गया था कि न तो वे बात करें, न अग़ल-बग़ल झांकें, न ही हिले-डुलें, बल्कि अपने आंख व कान खुले रखकर तम्बू-घर पर नज़र रखें कि अपराधी मौत से पहले क्या कहता है।

लेकिन अलदार-कोसे आलथी-पालथी मारे तम्बू-घर के बीचों-बीच नंगे फ़र्श पर मौन बैठा था। चुप बैठा सोच रहा था।

"काश, मैं चिड़िया होता," वह सोच रहा था, "पंख फड़फड़ाकर शनराक* से निकलकर आज़ाद हो जाता। छछूंदर होता, तो ज़मीन के नीचे सुरंग खोदकर खुली स्तेपी

---

* शनराक – कज़ाखों के निवासस्थान ओताव का गुम्बदनुमा पहियेवाला ऊपरी हिस्सा।

में भाग गया होता। शेर होता, तो अपने इन पहरेदारों पर टूटकर इनके टुकड़े-टुकड़े कर देता। लेकिन मेरी हालत में कोई आदमी कैसे बचे?"

और अचानक उसका चेहरा खिल उठा। उसने अपनी जेब में हाथ डालकर तांबे के एक पुराने बटन को टटोला। वह उसे बहुत पहले किसी बाजार में पड़ा मिला था: शायद कभी काम आ जाये। और अब वह समय आ गया था।

"यही करेगा मेरा उद्धार!" अलदार-कोसे खुश हो उठा और काले पड़े बटन को रेत से रगड़-रगड़कर चमकाने लगा।

रात आयी। चांद शनराक से तम्बू-घर में झांकने लगा। अलदाकेन ने बटन को चन्द्र-किरण में रखा: वह सोने की तरह चमचमा उठा। तभी पहरेदारों को बंदी की आवाज सुनाई दी:

"हमारा खान कितना बेवक़ूफ़ है!" अलदार-कोसे ने कहा, जैसे बोल-बोलकर सोच रहा हो। "लोगों को मौत के हवाले करके शायद वह अमर होने की आशा करता है, लेकिन हर कोई जानता है कि मौत देर-सवेर सबका गला पकड़ लेती है। यानी मौत की सज़ा खान को भी सुनाई जा चुकी है। फिर उसका भाग्य मेरे भाग्य से किस मामले में बेहतर है? और जब यही होना है, तो मुझ बेदाढ़ी को मौत से क्यों डरना चाहिए!

कुछ क्षण मौन रहकर वह आगे बोला:

"नहीं, मौत से मैं नहीं डरता, लेकिन मुझे दुःख इस बात का है कि मेरे साथ-साथ मेरा खज़ाना भी ज़मीन में दब जायेगा..."

पहरेदार चौकन्ने होकर सुनने लगे।

"खज़ाना? कौन-सा खज़ाना?"

"परवरदिगार!" अलदार-कोसे दुःखी स्वर में कह उठा। इस अंगूठी को हासिल करने में, जिसे मैं इस समय अपने हाथ में पकड़े हुए हूँ, तुम्हीं ने मेरी मदद की थी। मैं इसे अपने पाजामे के पैवंद में सीकर कई सालों से लोगों की नज़र से छिपा कर रखे हुए था। इसके बारे में कोई कुछ नहीं जानता: न मेरे अब्बा, न भाई, न दोस्त, न दुश्मन, न चोर और न ही ईमानदार लोग। लेकिन यह अद्भुत अंगूठी कितनी बेशक़ीमती है! ईरान पहुंचकर इस अंगूठी को जो कोई बादशाह को सौंप दे, उसे फ़ौरन उसका आधा खज़ाना मिल जायेगा और उसकी शादी उसकी खूबसूरत बेटी से कर दी जाये..."

पहरेदार मूर्तिवत् खड़े रह गये, उत्तेजना के मारे उनके गले सूख गये।

"क्या सचमुच," हर पहरेदार सोचने लगा, "इस बेदाढ़ी के पास बादशाह की अंगूठी है? और ऐसी क़ीमती चीज़ बेकार चली जायेगी! कहीं मौत की सज़ा दिये जाने से पहले अपराधी की तलाशी ली गयी, और अंगूठी खान के हाथ लग गयी तो? काश, ऐसी अंगूठी मुझे मिल जाये! मैं तो उसे कभी पैवंद में नहीं सियूँ बल्कि फ़ौरन ईरान का रास्ता पकड़ लूँ!.."

तभी अलदार की आवाज़ फिर सुनाई दी :

"मुझे मालूम है, मालूम है कि मुझे अंगूठी का क्या करना चाहिए! अल्लाह ने मुझे तरकीब सुझा दी! मैं अंगूठी को शनराक से स्तेपी में फेंक दूँगा। न तो वह ज़मीन में दबी रहेगी और न ही ख़ूनी ख़ान को मिलेगी। कोई ग़रीब उसे उठायेगा और उसकी क़िस्मत खुल जायेगी!"

'अन्तिम शब्द मुँह से निकलते ही तम्बू-घर के ऊपर बिजली-सी कौंधी और कोई चीज़ चमचमाती, चाप बनाती अफ़सन्तीन की झाड़ियों में गिरी।

सबसे निकट खड़े दो पहरेदार ख़ान का आदेश भूलकर झाड़ियों की ओर लपके।

"यह मेरा है!" एक गुर्राया।

"यह मेरा है!" दूसरा गुर्राया।

बाक़ी बचे दस पहरेदार भी तत्क्षण अपनी-अपनी जगह से भागकर एक दूसरे से चमकती वस्तु छीनने की कोशिश करते झुण्ड में जा घुसे। अन्त में वह उनमें से सबसे ताक़तवर के हाथ लग गयी।

"बेवक़ूफ़ कहीं के!" लमटंगे ने दबी आवाज़ में गाली दी। "ठहरो! अलदार-कोसे ने हमें बुद्धू बना दिया : यह अंगूठी नहीं, तांबे का बटन है! इससे पहले कि बेदाढ़ी तम्बू-घर से भाग पाये, अपनी-अपनी जगह पर भागो, बुद्धुओ!"

पहरेदार भागकर अपने-अपने स्थान पर पहुँचकर निश्चल खड़े हो गये, जैसे कुछ हुआ ही न हो।

सुबह तक ख़ान के पड़ाव के सामने अनगिनत लोगों की भीड़ जमा हो गयी, — तिल धरने की भी जगह न रही।

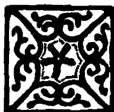
नौकरों ने सफ़ेद नमदे बिछा दिये। ख़ान और उसके वज़ीर शान से उस पर बैठ गये। ख़ान ने इशारा किया, और जल्लाद अपराधी के तम्बू-घर की ओर चल पड़े, जिसके चारों ओर एक दूसरे से समान दूरी पर तलवारों व बर्छियों से लैस बारह पहरेदार मूर्तिवत् खड़े थे।

भीड़ शान्त हो गयी। जल्लादों ने तम्बू-घर के दरवाज़े पर लटका परदा हटाया और चौंककर पीछे हट गये।

"क्या हुआ वहाँ?" ख़ान झल्लाकर चीख़ा। "निकालकर लाओ मुजरिम को।"

"जहांपनाह," जल्लादों ने उत्तर दिया, "मुजरिम तम्बू-घर में नहीं है! यहाँ सिर्फ़ उसका फटा-पुराना चोग़ा पड़ा है।"

ख़ान ने हाथ झटकारे और नमदे पर गिर पड़ा।



अलदार-कोसे किसी के हाथ न आया

ख़ान ने कहा :

"मेरे घोड़ों के झुण्ड से पचास तेज़ से तेज़ घोड़े लो, उनपर अनुभवी से अनुभवी सिपाहियों को बिठाओ और अलदार-कोसे की तलाश करने रवाना हो जाओ। चाहे ज़िन्दा हो, चाहे मरा, घसीटकर मेरे पास लाओ!.."

बड़े वज़ीर ने ख़ान के सामने नम्रतापूर्वक घुटने टिका दिये।

सात और उसके बाद भी सात पूर्णिमाओं तक वज़ीर का दस्ता स्तेपी में भटकता रहा और अन्त में उन्हें अलदार का सुराग़ लग ही गया।

अलदाकेन कहीं भागकर, तो कहीं रेंगकर, घाटियों में, झुरमुटों में दुबकता पीछा करनेवालों से दूर भाग रहा था। उसका चेहरा काला पड़ गया, शरीर सूख गया, कपड़े तार-तार हो गये, जूते घिस गये। वह उसी हालत में सरकंडों से भरी झील के किनारे बनी पुरानी, लोगों की भुलाई हुई कारवाँ-सराय के सामने ऐसे आ पहुँचा, जैसे आसमान से टपका हो।

उस कारवां-सराय में कोई भूला-भटका ही आता था, इसलिए उसका मालिक आदमी के क़दमों की आहट सुनकर लपककर दरवाज़े से बाहर निकल आया : "अल्लाह ने कोई किरायेदार तो नहीं भेजा है?" किन्तु चिथड़ों में एक अजनबी को देखकर उसने निराश हो गुस्से से मुंह फेर लिया।

"नौजवान, अगर तुम," उसने कहा "भीख मिलने की उम्मीद में भागकर आये हो या फोकट में रात गुज़ारने, तो मेरी सलाह सुनो : भाग जाओ, प्यारे यहाँ से दूर भाग जाओ।"

अलदार ने उलाहना देते हुए सिर हिलाया :

"नहीं, नहीं, मोहतरम बाय, मुझे आपसे कुछ नहीं चाहिए। मैं अपने फ़ायदे के लिए नहीं, बल्कि तुम्हें बचाने के लिए अपनी सेहत की परवाह न करके भागा आया हूँ। आप मुझे बिना कुछ छिपाये सच-सच बताइये कि आपने ख़ान के ख़िलाफ़ ऐसा क्या क़सूर किया है, जिससे वह आप पर नाराज़ हो रहा है?"

मालिक को अप्रत्याशित बात सुनकर हिचकी आ गयी।

"खान मुझपर नाराज है? क्या बकवास है! मैंने तो खान को जन्म से ही नहीं देखा है। उसे मुझसे क्या लेना-देना। यह कौन-से चण्डूखाने की गप है?"

"अगर हमारे पास समय होता, तो मैं आपको सारी बातें ब्योरेवार समझा देता," अलदार-कोसे ने डर के कारण कांपती आवाज में कहा और मालिक के कान के पास मुंह ले जाकर फुसफुसाया: "सिर्फ़ इतना बताये देता हूँ कि यह बात मुझे अपने वफ़ादार लोगों से मालूम पड़ी है: खान ने तुम्हें पकड़कर मौत की सजा देने के लिए उसके पास लाने को अपने गला-काटुओं का एक दस्ता भेजा है। मुसीबत आने ही वाली है! उधर स्तेपी में देखो!.."

मालिक ने उधर देखा और उसके काटो तो खून नहीं: स्तेपी में अस्त होते सूरज की लाली में आग-से धधकते ज़िरह-बख़्तर पहने घुड़सवार सरपट उसी की कारवां-सराय की तरफ़ बढ़े आ रहे थे। उनकी भयानक आवाज़ें, घोड़ों की टापें और उनके लगातार हिनहिनाने की आवाज़ें सुनाई देने लगी थीं।

मालिक के लटके हुए गालों का रंग सफ़ेद झक हो गया। उसने कांपती उंगलियों से अलदार के चिथड़ों को कसकर पकड़ लिया।

"मेरे मेहरबान, मुझ बेक़सूर को मौत के मुंह में मत धकेलो! रहम करो: तुमने जब मेरी बदक़िस्मती की खबर मुझे दी है, तो तुम्हीं मुझे बचने का रास्ता सुझाओ। जो चाहे, मांग लो, बस मुझे बचा लो!"

अलदार-कोसे माथे पर बल डाले जड़वत् खड़ा हो गया, मानो कुछ सोच रहा हो।

"बताओ न, बताओ न चुप मत रहो!" मालिक उसे पकड़कर हिलाने लगा।

"सोच ली तरकीब!" अलदाकेन ने हाथ घुमाकर माथे पर मारा। "मेरा तन ढकने को अपना चोग़ा मुझे दो, और खुद सिर पर पैर रखकर सरकंडों के झुरमुट में भागो। वहाँ एक-दो दिन इन्तज़ार करो... अब जो हो, सो हो, – मैं अपनी जान जोखिम में डालकर तुम्हारे बजाय खान के सिपाहियों से मिलूंगा। उनसे कहूँगा: "आप लोग देर से आये, जिसे आप लेने आये थे, वह मर चुका है... उसे दफ़नाये तीन दिन हो चुके हैं। ठूंस-ठूंसकर खाने से उसे पेचिश हो गयी और खान की तारीफ़ करता मर गया... किसी ने ठीक ही कहा है: 'नज़रें तो गड़ी थीं दूंबे की चर्बीदार दुम पर, लेकिन नसीब न हुई अंतड़िया भी...'"

"अल्लाह बेली! अल्लाह बेली!" मालिक बुदबुदाया। और वह केवल नीचे के कपड़े पहने सरकंडों के झुरमुट में ओझल हो गया।

अलदार-कोसे ने उसकी ओर हाथ हिलाया:

"जंगली सूअर की तरह, कीचड़ में लोट, दोस्त, मच्छरों को अपना खून पिला, तुम्हारे जैसे लोगों पर मुझे जरा भी रहम नहीं आता!.."

16*

और उसने जल्दी से उसके लिए छोड़ा चोग़ा पहना, पैरों में पड़े कपड़े को माथे पर लपेटा और गाल पर हाथ रख कराहता और लड़खड़ाता हुआ दस्ते की ओर चल पड़ा।

"तशरीफ़ लाइये, मेरे अनमोल मेहमानो, चलिये मेरी कारवाँ-सराय में! आइये, आइये!"

वज़ीर ने अपने दौड़ते घोड़े को ऐन उसकी नाक के सामने पिछली टांगों पर खड़ा कर दिया।

"ऐ, डरावे, तूने अपनी ठोठ खोपड़ी पर यह कैसा साफ़ा लपेट रखा है? तुझे तो कारवाँ-सराय का मालिक होने के बजाय मेमनों पर हमला करते भेड़ियों को डराकर भगाने का काम सौंपना चाहिए। लेकिन जब अपने को मालिक बताता है, तो जवाब दे: तेरे यहाँ वह आदमी तो नहीं छिपा हुआ है, जिसकी हम तलाश कर रहे हैं? वह खतरनाक मुजरिम और खान का जानी दुश्मन है। बेदाढ़ी और दुबला-पतला है... वह यहाँ से गुज़रा तो नहीं?"

अलदार जवाब देने के बजाय लड़खड़ाता हुआ दर्दभरी आवाज़ में कराह उठा:

"अरे, शैतानो! अरे, ज़ालिमो! अरे, खूनियो! तुम से लोगों को दुःख के सिवा कुछ नहीं मिलता... तुम सबको आग में फेंक देना चाहिए, मरदूदो!

गुस्से के मारे वज़ीर की आंखों में खून उतर आया।

"चुप कर, बदमाश! खान के नौकरों की बेइज़्ज़ती करने की तेरी हिम्मत कैसे हुई? क्या देख नहीं रहा, तेरे सामने कौन है? या तेरी भी अलदार-कोसे से सांठ-गांठ है?"

"खता माफ़ हो, हुज़ूर, ग़लती हो गयी..." अलदार बिसूरने लगा, "दर्द के मारे मेरी अक्ल पर पत्थर पड़ गये... कौन-सा अलदार-कोसे? मैं किसी को नहीं जानता... हाय, मेरे दांत! उफ़, ये दांत मेरी जान ले लेंगे! नाक में दम कर दिया इन्होंने मेरी, भाड़ में जायें, लगता है, सुबह तक भी नहीं जी सकूंगा..."

"तू रात तक भी ज़िन्दा नहीं रह सकेगा, अगर तूने रोना-धोना बंद नहीं किया और जवाब देने में टाल-मटोल की तो!" वज़ीर ने तलवार घुमायी। "आखिरी बार पूछ रहा हूँ: तूने बेदाढ़ी आदमी को देखा था या नहीं?"

"देखा था, देखा था, हुज़ूरे आलम... लेकिन आप ग़ुस्सा क्यों करते हैं? ग़ुस्से से जिगर सूख जाता है... पर बेदाढ़ी... क्यों नहीं... कुछ देर पहले वह यहीं था। लेकिन मैंने उसे रात गुज़ारने नहीं ठहराया। वह मेरे यहाँ नहीं है, चाहे मेरी सारी कारवाँ-सराय छान मारिये।"

"कहाँ है वह? कहाँ है?" वज़ीर ने अलदार को घोड़े की छाती से धक्का मारा। "जल्दी बता!"

"सरकंडों में... दलदल में भाग गया, बदमाश! (हाय, मेरे दांत!) पर वहाँ तो दलदल है, उसमें न कोई जा सकता है, न ही निकल सकता है... आप उसे अंधेरे

में ढूँढ़ने की मत सोचिये। खुदा बचाये! सब मारे जायेंगे! खुद भी मारे जायेंगे और घोड़ों को भी डुबो देंगे!.. रात को मेरे यहाँ सो जाइये – ज़्यादा पैसे नहीं लूंगा। फ़ी आदमी एक तंगा ... (उफ़, खूनखोरो!) भोर होने तक रुक जाइये ... लोग भी सुस्ता लेंगे और घोड़े भी ... पौ फटने से पहले आपको जगा दूँगा ... सुबह भगोड़े को बहुत आसानी से पकड़ लेंगे ... वह कहाँ जायेगा? चूज़े की तरह उसे दबोच लेंगे (उफ़, बेशर्म जाहिलो!) और अलदार-कोसे ने फिर गाल पर हाथ रख लिया।

"घोड़ों से उतरो!" वज़ीर ने सिपाहियों को आदेश दिया। "यह गावदी शायद ठीक ही कहता है। कभी-कभी बेवक़ूफ़ के मुंह से भी अक़्ल की बात निकल जाती है। यहाँ आराम किये लेते हैं। उस चालबाज़ अलदार-कोसे को एक रात दलदल की नमी सोखने दो, – हम तड़के ही उसे कोड़े मार-मारकर सुखा देंगे। जाकर आराम करो!" और उसने रात के भाड़े के लिए पैसों की थैली "मालिक" की ओर फेंक दी।

अलदाकेन ने थैली वैसे ही पकड़ ली, जैसे उक़ाब चिड़िया को पकड़ता है और किरायेदारों के लिए नमदे बिछाने लपका।

"शब-बख़ैर, प्यारे मेहमानो! गहरी नीन्द सोइये!"

सिपाहियों ने घोड़ों की काठियाँ खोलकर उन्हें खूंटों से बांध दिया, उन्हें चारा डाला और नमदों पर लुढ़क गये, फिर पचास नाकें एक साथ बज उठीं। सबसे ज़्यादा देर तक वज़ीर ख़ास बिस्तर पर करवटें बदलता रहा। सोते-सोते उसने बड़बड़ाकर सख़्ती से कहा:

"देख, मालिक, हमें पौ फटने से पहले जगा देना। अगर अलदार-कोसे हाथ से निकल गया, तो तेरा सिर काट देंगे!.."

और वह भी खर्राटे भरने लगा।

जितनी देर किरायेदार सोने की तैयारी करते रहे, अलदाकेन एक तरफ़ आलथी-पालथी मारे बैठा, कराहता और कोसता रहा – न जाने अपने दुखते दांतों को, या ख़ान के सिपाहियों को। आखिरकार सब शान्त हो गये।

"शुरू की नीन्द गहरी होती है," अलदार-कोसे ने मन में कहा। "यही समय है काम करने का ..."

और उसने तुरन्त वेश बदल लिया। उसने सबसे पहले बिना आवाज़ और हड़बड़ाहट के मालिक की चीज़ों में से कैंची ढूंढ़ निकाली, जिससे भेड़ों को मूंड़ा जाता था। उसकी धार को उसने उंगली पर आज़माया: अरे, यह तो मेरे उस्तरे से भी तेज़ है! फिर अलदाकेन वह कैंची हाथ में लिये दबे पांव, परछाईं की तरह एक सोये हुए आदमी के पास से दूसरे के पास रेंगने लगा। जिसके पास रेंगकर पहुंचता, उसी की ठोड़ी सफ़ाचट हो जाती। सबसे पहले वज़ीर की झबरी दाढ़ी कटकर गिरी, उसके बाद बाक़ी सब की ... उसने अपने सारे शत्रुओं की दाढ़ियाँ बिलकुल साफ़ कर दीं। कैसी-कैसी दाढ़ियाँ थीं। लम्बी और छोटी, झबरी और चिकनी, घनी और छीदीं, सफ़ेद, काली, भूरी!.. और यह काम इतनी सफ़ाई से किया गया था कि सिपाहियों में से कोई भी नीन्द में हिला तक भी नहीं।

दाढ़ियों का काम तमाम करके अलदार-कोसे ने घोड़ों का साज़: काठियां और उनके नीचे के पतले कम्बल, लगामें और बंद – सबको कतर-कतरकर छोटे-छोटे टुकड़े कर डाले। उसने केवल एक, सबसे महंगा साज़ छोड़ दिया। उसे उसने सबसे बढ़िया घोड़े पर बांधा, पैर रकाब में रखा और मानो ऊषा पूर्व के धुंधलके में लुप्त हो गया।

भोर में वज़ीर को झुरझुरी हो आयी और वह जाग गया। उसने अग़ल-बग़ल देखा: उजाला हो चला था।

"मालिक!" उसने घबराकर आवाज़ दी। "तूने हमें सही वक़्त पर क्यों नहीं जगाया? ऐ, मालिक! कहाँ ग़ायब हो गया, मनहूस?"

किसी ने जवाब नहीं दिया।

वज़ीर को कंपकंपी छूटने लगी।

"इस कमीने ने हमें कहीं धोखा तो नहीं दिया?" उसके दिमाग़ में कौंधा। "दस्ते को फ़ौरन होशियार करना चाहिए!"

लेकिन सिपाही इतनी गहरी नीन्द में सोये थे कि उन्हें चाहे जितने डण्डे मारे जाते – कभी न उठते। अन्त में वज़ीर एक को हिलाकर जगाने में सफल हो गया।

वह झट से उठ खड़ा हुआ और वज़ीर को घूर-घूरकर देखने लगा।

वज़ीर भी चौंककर उससे दूर हट गया।

"यह बेदाढ़ी थोबड़ा किस का है? अरे, यह तो अलदार-कोसे हैं! तूने, नीच, सिपाही की वर्दी पहन ली है..."

सिपाही ने भी एक दो बार आंखें मलीं और फिर वज़ीर को एकटक देखने लगा।

"क्या मैं अभी भी सो रहा हूँ? नहीं, यह तो वही – अलदार-कोसे है! वज़ीर का वेश धर लिया, बदमाश ने..."

उन्होंने एक दूसरे का गला पकड़ लिया।

"मदद करो! अलदार-कोसे हमारे पड़ाव में घुस आया है! मैंने अलदार-कोसे को पकड़ रखा है!" वे दोनों एक साथ चिल्लाने लगे।

ऐसी चीखें सुनकर, तो मुरदा भी क़ब्र से बाहर भाग आये। सिपाही उठ-उठकर लपके:

"कौन चिल्ला रहा था? अलदार-कोसे कहाँ है?"

लेकिन उन्होंने एक दूसरे पर नज़र डाली कि हाथापाई शुरू हो गयी: हरेक को अपने सामने बेदाढ़ी नज़र आ रहा था।

"यह रहा, अलदार-कोसे?"

"तू ख़ुद अलदार-कोसे है!"

"पकड़ो इसे! मारो!"

"अच्छा, लड़ना चाहता है! तो यह ले, यह ले!.."

सब के सब एक दूसरे से उलझ पड़े, ज़मीन पर लुढ़कने लगे, सब चिल्ला-चीख रहे थे और जो हाथ में आता, उससे एक दूसरे को पीट रहे थे। शोर सारी स्तेपी में गूंज उठा, लगा जैसे युद्ध छिड़ा हुआ हो, और यदि दूरस्थ पहाड़ियों की ओट से सूरज न निकल आया होता, तो न जाने उस झगड़े का क्या अन्त होता।

सूरज की रोशनी में सिपाहियों को होश आया और वे समझ गये कि वे सब एक ऐसी चाल में आ गये हैं, जिससे बुरी और शर्मनाक चाल स्वयं शैतान ने भी कभी नहीं चली होगी।

"मालिक को ढूँढ़ो!"

उन्होंने सारी कारवां-सराय छान मारी, पर मालिक कहीं नहीं मिला।

"घोड़े गिनो!"

वे घोड़े गिनने लगे – एक घोड़ा – वज़ीर का घोड़ा कम निकला।

"पीछा करो!" पिटा-पिटाया वज़ीर चिल्लाया। "जो आदमी अपने को मालिक बता रहा था, वही अलदार-कोसे था! उसी बाग़ी और काफ़िर ने हमारी बेइज़्ज़ती की है, हमें तबाह किया है। उसका पीछा करो!"

सिपाही साज़ उठाने दौड़े – पर जहाँ वे पड़े थे, वहाँ केवल चमड़े के टुकड़ों का ढेर लगा हुआ था। कौन पीछा कर सकता था ऐसी हालत में!

खरोंचें और चोटें खाये हुए बेदाढ़ी सिपाही बिना काठियों के घोड़ों पर किसी तरह चढ़े और उनकी अयाल पकड़कर एक क़तार में खान के सामने अपना दोष स्वीकार करने चल दिये। सबसे पीछे बेदाढ़ी वज़ीर घिसटता चल रहा था। उसे घोड़ा किसी ने भी नहीं दिया, क्योंकि अब उससे कोई भी नहीं डरता था: भयानक वज़ीर अब कहीं का नहीं रहा था!

उधर अलदार-कोसे उस समय उनसे दूर, बहुत दूर सरपट घोड़ा दौड़ाता चला जा रहा था... विद्वान से विद्वान भी नहीं कह सकता कि वह वहाँ से गुज़र रहा था और उसने घोड़ा कहाँ रोका। क्योंकि अलदाकेन तो हवा के मारे स्तेपी के एक छोर से दूसरे छोर पर लुढ़कती रहनेवाली हल्की-सी गोल सूखी झाड़ी की तरह है। वह किधर लुढ़केगा – केवल हवा ही बता सकती है, लेकिन कहाँ रुकेगा – इसका पता हवा को भी नहीं।



अलदार-कोसे और किसान

एक बार एक बाय ने किसान बनने की ठान ली। उसने पड़ोसी गांव में दो भेड़ों के बदले में एक हल ले लिया, अपने झुण्ड में से दो मोटे-ताज़े बैल लिये और खेत में पहुंच गया।

उसने एक घंटे बोवाई की, दो घंटे की, तीन घंटे की। बैल बिना चूं किये हलरेखा खींचते रहे, उन्होंने थकने का नाम भी नहीं लिया। पर किसान पसीने-पसीने हो गया – वह कड़ी मेहनत का आदी जो न था, हल के पीछे चल ही नहीं पा रहा था। उसकी आंखों के आगे तारे छूटने लगे। किसान को लगने लगा जैसे हल के नीचे से ज़मीन बल खाती नहीं, काले-काले सांप रेंगते निकलकर उसके पैरों और हाथों पर लिपट रहे हैं, उससे आगे चलना मुश्किल हो गया।

संयोगवश ऐसा हुआ कि अलदार-कोसे लम्बे सफ़र के बाद उस खेत में आ पहुंचा। वह अपने आगे-आगे शर्त लगाकर चालबाज़ी से हथियाया हुआ भेड़ों का रेवड़ हांकता जा रहा था कि उसे कुछ दूरी पर बेहाल और थका-हारा किसान नज़र आ गया।

"अरे, अरे! यह कहीं हमारा पड़ोसी, बाय झारतीबाय तो नहीं है! इसे मौत से पहले कमरतोड़ मेहनत करने की क्यों सूझी है? इसकी खिल्ली उड़ाने का कितना अच्छा मौक़ा मिला है! इससे बेहतर मौक़ा फिर कब मिलेगा!"

अलदार-कोसे ने अपना रेवड़ सबसे पास की टेकरी के पीछे छिपा दिया और किसान के पास पहुंचा। वह आते हुए अलदार-कोसे को पहचान गया और उससे दुआ-सलाम की।

अलदार-कोसे ने सहानुभूतिपूर्वक सिर हिलाया और बोला:

"ऐ प्यारे पड़ोसी, तुम कितने थक गये हो! तुम्हें अब कुछ सुस्ता लेना चाहिए। अगर तुम आराम करने जाओ, तो मैं बड़ी ख़ुशी से तुम्हारे बैलों से जोताई करके तुम्हारी मदद कर दूंगा। मंज़ूर है?"

बाय झारतीबाय तो इसी ताक़ में था। उसने अपने बैल अलदार-कोसे को थमा

दिये, और खुद एक तरफ़ जाकर, सबसे निकट की टेकरी के पास घास पर लेट गया, चोग़ा ओढ़ लिया और तुरन्त गहरी नीन्द में सो गया। उसने भेड़ों के उस रेवड़ को देखा ही नहीं, जिसे अलदार-कोसे ने सावधानीपूर्वक टेकरी के पीछे छिपा रखा था।

बाय भ्भारतीबाय को गहरी नीन्द में सोया देखकर अलदार-कोसे ने अपना काम शुरू कर दिया। सबसे पहले उसने बैलों की पूंछें काटकर वहीं ज़मीन में गाड़ दीं और बैलों को टेकरी के पीछे अपने भेड़ों के झुण्ड में हांक दिया।

अलदार-कोसे भी किसान झारतीबाय से कम नहीं थका था। वह हल के पास उकड़ूं बैठकर झपकी लेने लगा।

उसी समय झारतीबाय की नीन्द खुल गयी। उसे अलदार-कोसे को हल के पास बैठा ऊंघते देखकर आश्चर्य हुआ। उसके बैलों का वहाँ नामोनिशान तक नहीं था, उनके बजाय वहाँ उनकी पूंछें ज़मीन में गड़ी नज़र आ रही थीं। वह अलदार-कोसे को जगाने लपका। अलदार फ़ौरन उठा और उसने भी उससे कुछ अधिक ही आश्चर्य व्यक्त करते हुए पूछा:

"क्या तुम्हारे बैलों को पहले भी ऐसी ही आदत थी, या वे मेरे जोताई करते ही ऐसा करने लगे हैं? मैंने हल को हाथ लगाया ही था कि तुम्हारे बैल बिना किसी कारण के रंभाने लग गये। रंभाते रहे, रंभाते रहे और फिर ज़मीन में घुस गये। जब बस उनकी पूंछें ही चमक रही हैं।"

बाय झारतीबाय परेशान हो उठा:

"तुम क्या बक रहे हो! भला बैल ज़मीन में घुस सकते हैं?"

यह कहकर किसान पूंछों को उखाड़ने के स्पष्ट इरादे से उस स्थान की ओर गया, जहाँ ज़मीन में से वे निकली हुई थीं।

अलदार-कोसे चिल्लाता हुआ उसे चेतावनी देने लपका।

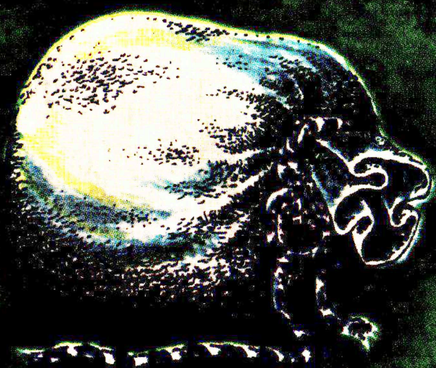
"प्यारे बाय," उसने कहा, "इन्हें खींचना मत! मैं तुमसे विनती करता हूँ, मत खींचो! वरना तुम अपने बैलों की पूंछें उखाड़ लोगे, और उससे फ़ायदा कुछ नहीं होगा। अगर तुम्हारे बैलों को ज़मीन में घुसना आता है, तो वे खुद निकल भी आयेंगे।"

आगबबूला हुआ झारतीबाय, यह सोचकर कि अलदार-कोसे उसका मज़ाक़ उड़ा रहा है, भागकर वहाँ पहुंचा और उसने पूंछें पकड़कर ज़मीन से उखाड़ डालीं।

तब अलदार-कोसे गुस्सा हुआ:

"मैंने तुमसे कहा था ना कि बैलों की पूंछें पकड़कर नहीं खींचनी चाहिएं। तुम नहीं माने – अब अपने को ही कोसो!"

और अलदार-कोसे अपने घर चला गया।



अपने आर्डर निम्न पते पर भेजें
पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा.) लि.
5-ई रानी झांसी रोड, नई दिल्ली-110 055